आरोग्य-ग्रंथमाला—१०

बच्चोंका स्वास्थ्य और उनके रोग

[बच्चोंके स्वस्थ रखने और उनके रोग-
निवारणकी सरल विधि]

सपादक
विट्ठलदास मोदी

आरोग्य-मंदिर-प्रकाशन

प्रधान विक्रेता : सस्ता साहित्य-मंडल, कनाट सर्कस, नई दिल्ली

दूसरी बार : १९६९
मूल्य : तीन रुपया

प्रकाशक
आरोग्य-मंदिर
गोरखपुर

मुद्रक
इलाहाबाद लॉ जर्नल प्रेस,
इलाहाबाद

भूमिका

प्रकृतिने बड़ी बुद्धिमानीके साथ अपनी सृष्टिकी रक्षा करने और उसका क्रम जारी रखनेकी व्यवस्था की है। जिन लोगोमे पर्याप्त शारीरिक और मानसिक शक्ति नही होती उन्हे वह साधारणत सतानका मुख देखनेका अवसर ही नही प्रदान करती। अगर अयोग्य व्यक्ति प्रजनन-कार्यमे प्रवृत्त हो और किसी प्रकार गर्भाधान हो भी जाय तो पहले तो गर्भके टिकनेकी ही सभावना नही रहेगी और अगर टिक भी जाय तो या तो बच्चा गर्भमे ही मर जायगा या जीवित भी जन्म ले तो वह कुछ ही घटोका मेहमान होगा।

वंशागत दोष

कुछ बच्चे पैतृक दोपके साथ जन्म लेनेपर भी जीवित रहते है। इन दोपका सबध सीधे माता-पितासे होना जरूरी नही है, ऊपरकी पीढियोसे भी हो सकता है। प्राय कहा भी जाता है कि बच्चेके स्वास्थ्यकी नीव नानीकी कोखमे पड़ा करती है। इस प्रकारके दूरागत दोपका स्वास्थ्य-पर पडनेवाला प्रभाव जितना लोग साधारणत. समझा करते हैं उससे कही अधिक हुआ करता है। ऐसे दोपपर विजय पाना कुछ कठिन भी होता है और वह आरभसे ही बच्चेके स्वास्थ्य और जीवनमे बाधक होने लगता है। लालन-पालनकी अच्छी-से-अच्छी सुविधा प्राप्त होनेपर भी ऐसे बच्चे प्राय अस्वस्थ रहा करते है।

स्वास्थ्यका दायित्व

विकारके साथ जन्म लेनेवाले बच्चोमे अधिक सख्या माता-पितासे प्राप्त दोपवाले बच्चोकी ही होती हैं। स्वस्थ सतानकी उत्पत्तिमे पिताके स्वास्थ्यका कितना हाथ होता है इस बातको पिता कभी-कभी नही समझ

पाता और सारा दायित्व मातापर ही डाल दिया करता है। इसमे कोई सदेह नही कि बच्चेके निर्माणका कार्य करनेके कारण माताके स्वास्थ्यका उसपर बहुत अधिक प्रभाव पडता है, पर भावी सतानके स्वास्थ्यका दायित्व वस्तुत दोनोपर होता है।

चूकि बच्चा माताके शरीरमे ही अपना रूप ग्रहण करता और बढता है इसलिए उसपर माताके रक्तका, जिससे गर्भमे उसे पोषण प्राप्त होता है, प्रभाव पडना अनिवार्य है। एक तो पोषणाभाव आदिके कारण माताका रक्त इतना अल्प हो सकता है कि बच्चेको पर्याप्त पोषण ही न मिल सके जिससे वह बहुत दुबला-पतला और कमजोर हो सकता है, दूसरे, रक्तकी मात्रा पर्याप्त होते हुए भी हो सकता है कि वह बच्चेके लिए उपयुक्त न हो; क्योंकि माताका आहार ऐसा हो सकता हैं कि उससे रक्त तो काफी बने, पर उसमे बच्चेके निर्माण और स्वास्थ्यके लिए आवश्यक कुछ तत्त्वोका अभाव हो। उदाहरणार्थ, अगर उसमे कैलसियम या फासफोरसकी कमी हो तो बच्चेकी अस्थियो और दातोका निर्माण ठीक तरहसे नही हो सकेगा और उसके अस्थिवक्रता, दतक्षय आदि रोगोका शिकार होनेकी बहुत अधिक सभावना रहेगी। इसके अतिरिक्त माताकी मानसिक अवस्थाका भी रक्तपर कम प्रभाव नही होता जो गर्भस्थ बच्चेके लिए हानिकारक हो सकता है।

खैरियत यही है कि उपर्युक्त दोषोके साथ जन्म लेनेवाले बच्चोकी सख्या अधिक नही होती, अधिकाश बच्चे जन्म ग्रहण करते समय स्वस्थ ही होते है और प्रकृति यही चाहती है कि वे आजीवन स्वस्थ ही बने रहे, पर साधारणत ऐसा होता नही। शैशवकालसे ही रोगोका आक्रमण आरभ हो जाता है और यह सिलसिला जीवनपर्यंत चलता रहता है। जहा नियमत शत-प्रतिशत व्यक्तियोको स्वस्थ होना चाहिये वहा प्राय सभी लोगोके किसी-न-किसी रोगसे ग्रस्त या रोगकी प्रवृत्तिसे युक्त होनेका ही नियम हो गया है। ऐसी अवस्थामे अगर ऐसा कोई आदमी देख पडे जो आजीवन स्वस्थ रहा है तो उसे अपवाद ही समझना चाहिए। प्रश्न यह है कि यह विपर्यय होता क्यो है?

रोग क्यों ?

साधारणत बच्चे अयुक्त और अतिआहारके ही कारण रोगोके चगुलमे फँसते है और आहारसबधी यह दोष गर्भावस्थामे ही आरभ हो जाता है। एक तो तथाकथित सभ्यताकी कृपासे खान-पानकी आदतें पहलेसे ही बुरी होती हैं, दूसरे, गर्भाधान हो जानेपर एक और प्राणीका निर्माण होनेकी बातके आधारपर भूलसे माताए यह समझ लेती है और साथ ही अन्य लोगोकी भी राय होती है कि अब दोके लिए खाना आवश्यक है। परिणाम यह होता है कि गर्भमे ही बच्चेका शरीर विजातीय द्रव्यसे भर जाता है जो रोगका क्षेत्र निर्माण करनेके साथ-साथ प्रसवमे भी कष्टका कारण होता है। बच्चेके जन्म लेनेपर भी अतिआहारका सिलसिला बद नहीं होता, बच्चेको मोटा-ताजा देखनेका माताका हौसला आवश्यकता न होनेपर भी दूध पिलाते रहने या तरह-तरहके कृत्रिम आहार देते रहनेको बाध्य करता है जिससे बच्चेकी पाचनशक्ति खराब हो जाती और सर्दी, मसूरिका आदि रोगोका आक्रमण होने लगता है। दुर्भाग्यकी बात तो यह होती है कि कीटाणुवादके भ्रात सिद्धातसे प्रभावित होनेके कारण इन रोगोका कारण लालन-पालनसबधी दोष न माने जाकर बाहरसे आए हुए कीटाणु माने जाते हैं और रोगसे छुटकारा दिलानेके लिए लालन-पालनसबधी दोषोको दूरकर सुधारके कार्यमे प्रवृत्त शरीरकी प्राकृतिक शक्तिकी सहायता करनेके बजाय विषौषधोके प्रयोगद्वारा रोगके लक्षणोको दबानेका प्रयत्न किया जाता है जिससे रोगका मूल रूप ज्यो-का-त्यो बना रह जाता है जो काल पाकर जीर्णावस्थामे परिणत हो जाता है।

मानसिक स्वास्थ्य

मानसिक कारणोंसे भी बच्चेके स्वास्थ्यमे खराबी आया करती है, पर खेदकी बात है कि हमारे देशमे स्वास्थ्यके इस पहलूपर बहुत कम ध्यान दिया जाता है। मन और शरीरमे अन्योन्याश्रय सबध होनेके कारण दोनो एक-दूसरेसे निरतर प्रभावित होते रहते हैं और एककी अवस्था

बुरी होनेपर दूसरेकी अवस्था भी खराब हो जाती है और फिर इस दुष्प्रभावका एक चक्र ही बन जाता है जो बराबर चलता रहता है। यदि बच्चेको पूर्णत स्वस्थ रखना अभीष्ट हो तो उसके मानसिक स्वास्थ्य और विकासपर ध्यान देना और भी आवश्यक है, क्योकि मनके शरीरका शासक होनेके कारण उसका प्रभाव अपेक्षाकृत अधिक होता है।

स्वास्थ्यकी नींव

आजके बच्चे ही कल राष्ट्रके नागरिक होगे और वही राष्ट्र सबल और समृद्ध हो सकता है जिसके नागरिक स्वस्थ और शक्तिशाली होगे, पर इस स्वास्थ्य और शक्तिकी नीव आरभिक अवस्थामे ही डाली जा सकती है। जिस तरह कमजोर नीववाले मकानपर दूसरी मजिल नही बनाई जा सकती और अगर बनाई भी जाय तो वह कुछ ही दिनोंके अदर धराशायी हो जायगी उसी प्रकार अगर गर्भावस्था और शैशवकालमे किसी पैतृक या लालन-पालनसबधी दोष या गलत उपचारके कारण बच्चेके स्वास्थ्यका निर्माण नही हो सका, नीवमे दृढता नही आ सकी तो बच्चा जीवित भी रहा तो वह बराबर अस्वस्थ और रोगी बने रहनेके कारण स्वयम् तो सुखमय जीवन व्यतीत कर ही नही सकेगा, परिवारवालो और कुछ हदतक समाजके लिए भी बोझ बना रहेगा। इसलिए माता-पिताका लालन-पालन, रोग और उपचार तथा मानसिक स्वास्थ्यसबधी सिद्धातोसे परिचित होना आवश्यक है। आशा है यह पुस्तक इस आवश्यकताकी पूर्ति मजेमे कर सकेगी।

पुस्तकका ढाचा तैयार करनेमे 'आरोग्य'मे प्रकाशित लेखोका मुख्य रूपसे सहारा लिया गया है और रैस्मस अल्सेकर, हैरी बेंजामिन, हैरी क्लीमेट्स, मार्गरेट ब्रेडी, वर्नर मैकफैडन आदि विशेषज्ञोकी पुस्तकोसे भी आवश्यकतानुसार सहायता ली गई है जिसके लिए हम उनके आभारी हैं।

अगर इस पुस्तकसे भावी राष्ट्रके स्वास्थ्य-निर्माणमे थोडी भी सहायता मिली तो हम अपना प्रयत्न सफल समझेंगे। —संपादक

विषय-सूची

बच्चोंका स्वास्थ्य और उनके रोग

बच्चोंका अपूर्ण पोषण

जीवनमे सफलता प्राप्त करनेके जितने भी साधन है उनमे सशक्त शरीर ही सबसे मुख्य है और उसीपर और भी साधन निर्भर हैं। आप अपने बच्चेके भविष्यके लिए क्या कर रहे हैं? क्या आप उसे ऐसे शरीरके निर्माणमे सहायता दे रहे है जो सशक्त हो और भावी जीवनमे पडनेवाला भार सभाल सके?

छात्रोके स्वास्थ्यका परीक्षण करनेवाले एक डाक्टरका मत है कि लगभग सत्तर प्रतिशत छात्रोमे अपूर्ण पोषणका प्रभाव देख पडता है। बहुतोमे पाया जानेवाला दतविकार इसीका परिणाम है। रोग-निवारणके तरह-तरहके उपायोके होते हुए भी आज बच्चोको होनेवाले रोगो—शीतला, इनफ्लुएजा आदि—की व्यापकतामे कोई कमी नही देख पडती और इन सक्रामक रोगोका कारण, दुष्ट कीटाणु नही है जिनके मत्थे बच्चोको होनेवाले सारे रोगोका दोष मढ दिया जाता है, मुख्य कारण अपूर्ण पोषण है जो कोमल शरीरकी रोगोका प्रतिरोध करनेवाली शक्तिका ह्रास कर देता है।

परिचायक लक्षण

अपूर्ण पोषण छोटे बच्चोके लिए सबसे बडा घातक सिद्ध होता है। अगर कीटाणुओंने हजारोका अत किया होगा तो अपूर्ण पोषणने लाखोका। एक विशेषज्ञने अपूर्ण पोषणके शिकार बच्चेका चित्र इस प्रकार अकित किया है—वह आमतौरपर पतला होता है पर मोटा और अशक्त भी हो सकता है, उसका चमडा बदरंग, नाजुक, मोम-जैसा और मटमैला भी हो

सकता है; उसकी आखोके नीचे काले धब्बे होगे और पलकोंके नीचे और मुहके अदरकी श्लैष्मिक कला पीली या बदरग हो सकती है; उसके बाल रुखडे होंगे, जीभपर मैल जमा होगा और कोष्ठबद्धता बनी रहेगी; उसकी पेशिया पिलपिली और अविकसित होगी, कधे गोल और सीना चिपटा और तग होगा, दात गले होगे और टॉसिल भी बढे हो सकते है, स्वस्थ बच्चोमे जो स्वाभाविक स्फूर्ति होती है उसका उसमे अभाव होगा, खेलमे या काम करनेमे वह अनवधान होगा, जल्द थक जायगा और प्राय सुस्त समझा जायगा, उसमे मनोयोगशक्ति बहुत कम होगी और बच्चोमे जिज्ञासाकी जो स्वाभाविक प्रवृत्ति होती है उसका भी उसमे अभाव होगा, आखो और चेहरेसे मुर्दनी और सुस्ती व्यक्त होती रहेगी, उसका स्वभाव चिडचिडा होगा और उसपर नियत्रण करना भी कठिन होगा, वह अजनबी लोगोसे बराबर डरता रहेगा, उसका दिल-दिमाग कमजोर होगा, बेचैन रहेगा, अच्छी नीद नही आयेगी और अपने भोजनके सबधमे चुचुर करता रहेगा।

इन छोटे-बडे बहुसख्यक लक्षणोंके मौजूद रहते आश्चर्यकी बात है कि हजारो माता-पिता इस अपूर्ण पोषणकी अवस्थापर जरा भी ध्यान नही देते और तबतक निश्चित पड़े रहते हैं जबतक चेचक या लोहित ज्वरका आक्रमण अदरकी सडी-गली अवस्थाकी सूचना देकर उन्हे सचेत नही करता। फिर भी भ्रात कीटाणुवादसे पुष्ट उनका अज्ञान असल कारण—अपूर्ण पोषण—की ओर उनका ध्यान नही जाने देता।

आहारकी सदोषता

कोई माता कह सकती है कि 'इस तरहके कुछ चिह्न मेरे बच्चेमे नजर तो जरूर आते है, पर मैं कभी कम नही खिलाती, बल्कि इसके विपरीत बच्चेको काफी पोषक आहार दिया जाता है।' उसका भोजन वस्तुत कितना पोषक होता है, उसपर ध्यान देनेसे स्थिति स्पष्ट हो जायगी। सुबहमे नाश्तेमे कचौडी, हलवा, मुरब्बे (जो आमाशयमे अम्ल पैदा करते और दात विकृत करते हैं) आदि दिये जाते हैं और दिन तथा रातके भोजन-

मे मैदेकी रोटी या पूरी, मशीनका चावल, मसालेदार तरकारी, मास आदि रहते है। आश्चर्यकी वात यह नही है कि वह कमजोर या विवर्ण देख पडता है, वल्कि आश्चर्य तो यह है कि उसका अस्तित्व अमीतक वना हुआ है और वह चल-फिर मी लेता है। ठीक है, आहार तो काफी दिया जाता है, पर कैसा ? वह ९५ प्रतिशत अयुक्त तो होता ही है, अगर वच्चा उसके प्रति अनिच्छा प्रकट करता है तो जवर्दस्ती उसके गलेके नीचे उतारा जाता है।

आज हमारे देशमे यही अयुक्त आहार करोडो वच्चोको दिया जा रहा है। आहारसवधी खास-खास गलतिया हैं—वहुत अविक या वार-वार खिलाना, वहुत अविक चीनी या मिठाइया खिलाना, श्वेतसारकी अधिकता, ततुओकी क्षतिपूर्ति या निर्माण करनेवाले तत्त्वो—पके ताजा फल, सूखे फल, हरी तरकारिया, सलाद आदिकी कमी, पूर्णान्नसे वनी हुई चीजें न देकर मुलायम और वारीक चीजे देना और जवडो और दातोसे काम न लेना, दूव या दूधसे वने हुए पदार्थ अविक देना जिससे टॉसिलकी वृद्धि, कब्ज आदि होते हैं।

अन्य कारण

अस्थिशोषणके लिए अनिवार्य रूपमे आवश्यक है। पहले यह समझा जाता था कि आहारसे विटामिनोंकी अच्छी प्राप्ति न होनेपर ही अस्थिवक्रता होती है, पर विटामिनोंकी प्राप्ति होनेपर भी इस रोगका होना जारी रहा और धूप अच्छी तरह मिलनेपर ही बच्चे नीरोग हुए।

हमारी गरीबी इसमे कहातक सहायक होती है, इसके संबंधमे तो कुछ कहना ही बेकार है।

नवजात शिशुओंका सर्वोत्तम आहार

कृत्रिम और प्राकृतिक आहार

शिशुओको पोषण प्रदान करनेका प्राकृतिक ढग ही सर्वोत्तम है यह स्वीकार करनेमे किसीको आपत्ति नही होगी।

कृत्रिम खाद्य पदार्थोंके सबधमे जानने योग्य एक विशेष बात यह है कि गायका दूध प्राप्तकर बच्चोंके लिए उसे तैयार करनेमे जितना व्यय होता है उसके अल्पाशमे ही मानव-दुग्ध प्रस्तुत हो सकता है। दूसरी बात यह है कि कृत्रिम आहार चाहे जितना भी अच्छा हो वह कभी प्राकृतिक आहारका मुकाबला नहीं कर सकता है। ऐसा शायद ही कोई उदाहरण देख पडे जिसमे कृत्रिम आहार माताके दूधसे अच्छा प्रमाणित हो। स्तनपायी बच्चे इतने तगडे तो नही होते, पर वे अपेक्षाकृत अधिक सशक्त होते हैं, न तो उन्हे जुकाम होता है और न पाचन खराब होता है। कठिन शारीरिक कष्टोको भी वे बडी आसानीसे झेल लेते हैं। इस सुदर आरभका उनके भावी जीवनपर भी गहरा असर होता है।

स्तनपायी बच्चोंके बहुतसे रोगोंसे बचे रहनेका कारण यह होता है कि वे माताके शरीरमे स्वास्थ्यवर्द्धक कीटाणुओको प्राप्त करते है। ये उनकी आतमे प्रगति कर एक तरहका विटामिन उत्पन्न करते है जो शरीरमे निरोध-शक्ति उत्पन्न करता है। जो बच्चे निष्कीटित (स्टरलाइज्ड) दूधके आहारपर रखे जाते है उन्हे जीवनके आरभिक कालमे ही उक्त कीटाणुओ और उनके उत्पन्न किये हुए शक्तिप्रद विटामिनसे वचित हो जाना पडता है जिससे पीछे उनके स्वास्थ्यको क्षति पहुचनेकी सभावना रहती है।

प्रेममय वातावरण होनेपर तो उनकी आश्चर्यजनक वृद्धि होती है और

वे माताके दूधके हर एक घूटके साथ प्रेम ग्रहण करते हैं। खोजसे पता चला है कि प्रथम वर्षमे जहा माताका दूध पीनेवाला एक बच्चा मरता है वहा बोतलसे दूध पीनेवाले छहसे तेरह बच्चेतक मरते हैं। बोतलसे दूध पीनेवाले बच्चोको आरम्भमे ही आगे बढनेका आधार नही मिल पाता। हा, अगर माता अच्छी स्थितिमे या नीरोग न हो तो उसे दूध नही पिलाने देना चाहिए। कुछ माताओको बच्चेके लायक काफी दूध नही होता। अगर उनका खान-पान और रहन-सहन ठीक हो तो यह त्रुटि नही आने पायेगी।

अप्राकृतिक आहार ऐसे बहुतसे रोगोका कारण होता है जो कई वर्षो-तक प्रकट नही होते। बोतलसे दूध पीनेवाले बच्चोका बदन भरा होता है और वे मोटे भी होते हैं जिससे कुछ लोग उन्हे स्वस्थ समझने लगते हैं, पर यह भूल है; दरअसल उनमे स्तनपायी बच्चोंके बराबर शक्ति नही होती और उन्हे जल्द ही सब तरहके रोग घेर लेते हैं। ग्रंथि-सस्थानपर, जो बचपनमे बहुत जल्द खराब होता है, बोतलसे दूध पिलानेका बहुत बुरा असर होता है, लालाग्रथियो आदिके शोथका यही मुख्य कारण होता है। यही नही, आतोकी गैससे उत्पन्न होनेवाले रोगोंसे मरनेवाले बच्चोंमे ८० से ९० प्रतिशततक कृत्रिम रूपसे खिलाये जानेवाले बच्चे होते हैं।

सर्वोत्तम क्यों ?

बच्चेके लिए माताका दूध सर्वोत्तम आहार इस कारण है कि उसमे पोषणके लिए आवश्यक सभी पदार्थ उचित मात्रामे मौजूद रहते हैं। हा, कुछ ऐसी विशेष अवस्थाएं जरूर होती हैं जिनमे गायका तैयार किया हुआ दूध अधिक लाभदायक हो सकता है। इसक एक कारण तो यह है कि गायके दूधमे अस्थिका निर्माण करनेवाले खनिज द्रव्य अधिक मात्रामे होते हैं, इसलिए अगर लघुकाय अपुष्ट बच्चोको गायका दूध दिया जाय तो अच्छा लाभ होगा, पर अगर माताके दूधमे ही ये तत्त्व मिला दिये जाय तो और अधिक लाभ होगा। दूसरा कारण है गायके दूधमे स्त्रीके दूधकी

अपेक्षा बी० वर्गके विटामिनोका अधिक होना। अगर माताके आहारमे ही ये विटामिन शामिल कर लिये जाय तो उसका दूध अधिक अच्छा प्रमाणित होगा। तीसरा कारण यह है कि स्तनपायी बच्चोमे गायके दूध-पर रहनेवाले बच्चोकी अपेक्षा शूलकी प्रवृत्ति अधिक होती है, पर बच्चे इस शूलके प्रभावका तो निराकरण कर सकते है, अयुक्त आहारके प्रभाव-का निराकरण उनके लिए कठिन होता है। इसलिए विशेष अवस्थावाले अपुष्ट बच्चोको छोडकर औरोके लिए कोई भी पदार्थ माताके दूधकी समता नही कर सकता।

माताके दूधमे आवश्यक सारे पदार्थ—जल, प्रोटीन, वसा, खनिज-लवण, शर्करा, विटामिन आदि—ही पर्याप्त मात्रामे मौजूद नही होते बल्कि कुछ ऐसे पदार्थ भी होते हैं जो आमाशय आदिके रसके साथ मिलकर बच्चेके लिए दूधका पचकर अभिशोषित होना सरल बना देते है। दूधमे वर्तमान रहनेवाले कुछ तत्त्व शरीरके अन्य किसी भागमे, यहातक कि प्रकृतिमे भी कही नही पाये जाते, केवल दूधका स्राव करनेवाले स्तनमे ही उचित मात्रामे पाये जाते हैं।

प्राय कहा जाता है कि माताके दूधमे कुछ ऐसे पदार्थ होते है जो बच्चेके शरीरमे एक प्रकारकी रोग-निवारक शक्ति पहुचा देते है। यह सत्य है कि बच्चेकी जीवन-यात्रा बहुतसे रोगोके निवारणकी पर्याप्त शक्तिके साथ आरभ होती है और इस शक्तिका मातासे प्राप्त होना भी माना जा सकता है, पर यह क्रिया उसी कालमे सपन्न होती है जब बच्चा गर्भमे होता है, प्रसवके बाद नही, हा, माताका दूध इस प्राकृतिक निरोध-शक्तिको बनाए रखनेमे और प्रकारसे सहायक अवश्य होता है।

माताका आहार

अगर माताके आहारमे उपयुक्त खाद्य पदार्थोकी कमी हो तो दूधका निर्माण होना सभव न होगा, इसलिए माताको स्वय अपने और बच्चेके लिए भी इन पदार्थोकी प्राप्ति अवश्य होती रहनी चाहिए। साधारणतः

वे माताके दूधके हर एक घूटके साथ प्रेम ग्रहण करते हैं। खोजसे पता चला है कि प्रथम वर्षमे जहा माताका दूध पीनेवाला एक बच्चा मरता है वहा बोतलसे दूध पीनेवाले छहसे तेरह बच्चेतक मरते हैं। बोतलसे दूध पीनेवाले बच्चोको आरम्भमे ही आगे बढनेका आधार नही मिल पाता। हा, अगर माता अच्छी स्थितिमे या नीरोग न हो तो उसे दूध नही पिलाने देना चाहिए। कुछ माताओको बच्चेके लायक काफी दूध नही होता। अगर उनका खान-पान और रहन-सहन ठीक हो तो यह त्रुटि नही आने पायेगी।

अप्राकृतिक आहार ऐसे बहुतसे रोगोका कारण होता है जो कई वर्षों-तक प्रकट नही होते। बोतलसे दूध पीनेवाले बच्चोका बदन भरा होता है और वे मोटे भी होते हैं जिससे कुछ लोग उन्हें स्वस्थ समझने लगते हैं, पर यह भूल है; दरअसल उनमे स्तनपायी बच्चोके बराबर शक्ति नही होती और उन्हे जल्द ही सब तरहके रोग घेर लेते हैं। ग्रथि-सस्थानपर, जो बचपनमे बहुत जल्द खराब होता है, बोतलसे दूध पिलानेका बहुत बुरा असर होता है, लालाग्रथियो आदिके शोथका यही मुख्य कारण होता है।

यही नही, आतोकी गैससे उत्पन्न होनेवाले रोगोसे मरनेवाले बच्चोंमे ८० से ९० प्रतिशततक कृत्रिम रूपसे खिलाये जानेवाले बच्चे होते है।

सर्वोत्तम क्यों ?

बच्चेके लिए माताका दूध सर्वोत्तम आहार इस कारण है कि उसमे पोषणके लिए आवश्यक सभी पदार्थ उचित मात्रामे मौजूद रहते हैं। हा, कुछ ऐसी विशेष अवस्थाए जरूर होती हैं जिनमे गायका तैयार किया हुआ दूध अधिक लाभदायक हो सकता है। इसक एक कारण तो यह है कि गायके दूधमे अस्थिका निर्माण करनेवाले खनिज द्रव्य अधिक मात्रामे होते हैं, इसलिए अगर लघुकाय अपुष्ट बच्चोको गायका दूध दिया जाय तो अच्छा लाभ होगा, पर अगर माताके दूधमे ही ये तत्त्व मिला दिये जाय तो और अधिक लाभ होगा। दूसरा कारण है-गायके दूधमे स्त्रीके दूधकी

अपेक्षा बी० वर्गके विटामिनोका अधिक होना। अगर माताके आहारमे ही ये विटामिन शामिल कर लिये जाय तो उसका दूध अधिक अच्छा प्रमाणित होगा। तीसरा कारण यह है कि स्तनपायी बच्चोंमे गायके दूध-पर रहनेवाले बच्चोकी अपेक्षा शूलकी प्रवृत्ति अधिक होती है, पर बच्चे इस शूलके प्रभावका तो निराकरण कर सकते है, अयुक्त आहारके प्रभाव-का निराकरण उनके लिए कठिन होता है। इसलिए विशेप अवस्थावाले अपुष्ट बच्चोको छोडकर औरोके लिए कोई भी पदार्थ माताके दूधकी समता नही कर सकता।

माताके दूधमे आवश्यक सारे पदार्थ—जल, प्रोटीन, वसा, खनिज-लवण, शर्करा, विटामिन आदि—ही पर्याप्त मात्रामे मौजूद नही होते बल्कि कुछ ऐसे पदार्थ भी होते है जो आमाशय आदिके रसके साथ मिलकर बच्चेके लिए दूधका पचकर अभिशोषित होना सरल बना देते हैं। दूधमे वर्तमान रहनेवाले कुछ तत्त्व शरीरके अन्य किसी भागमे, यहातक कि प्रकृतिमे भी कही नही पाये जाते, केवल दूधका स्राव करनेवाले स्तनमे ही उचित मात्रामे पाये जाते हैं।

प्राय कहा जाता है कि माताके दूधमे कुछ ऐसे पदार्थ होते हैं जो बच्चेके शरीरमे एक प्रकारकी रोग-निवारक शक्ति पहुचा देते है। यह सत्य है कि बच्चेकी जीवन-यात्रा बहुतसे रोगोके निवारणकी पर्याप्त शक्तिके साथ आरभ होती है और इस शक्तिका मातासे प्राप्त होना भी माना जा सकता है, पर यह क्रिया उसी कालमे सपन्न होती है जब बच्चा गर्भमे होता है, प्रसवके बाद नही, हा, माताका दूध इस प्राकृतिक निरोध-शक्तिको बनाए रखनेमे और प्रकारसे सहायक अवश्य होता है।

माताका आहार

अगर माताके आहारमे उपयुक्त खाद्य पदार्थोंकी कमी हो तो दूधका निर्माण होना सभव न होगा, इसलिए माताको स्वय अपने और बच्चेके लिए भी इन पदार्थोंकी प्राप्ति अवश्य होती रहनी चाहिए। साधारणतः

अच्छा भोजन मिलते हुए भी दो पदार्थों—प्रोटीन और बी० वर्गके विटा-मिनोकी प्राप्तिपर विशेष ध्यान देना चाहिए। दूध तथा दूधसे बने हुए पदार्थ इन दोनोकी प्राप्तिके अच्छे साधन हैं। इसके अलावा गर्भ-वहन और स्तनपानके समयमे भी भोजनकी मात्रा अत प्रवृत्तिकी जितनी माग हो उतनी ही होनी चाहिए। स्तनपान करानेवाली माताको और समयोकी अपेक्षा अधिक आहारकी आवश्यकता हो सकती है।

शिशुओंका पालन-पोषण

जन्म लेते ही बच्चेको खिलानेकी उतावली कभी नही करनी चाहिए। प्रकृतिने कुछ इस तरहकी व्यवस्था की है जिससे उसे तुरत खिलानेकी आवश्यकता नही होती। जन्मके २४ घटे बाद स्तनपान कराना अच्छा होता है। इतनी देरमे सारा शोरगुल और उत्तेजना भी प्राय कम पड गई होती है। कुछ लोग जन्म लेनेके कुछ ही घटे बाद 'जन्मघुटी' देते हैं। यह बहुत बडी गलती है। यह उत्तेजक होती है जिसका आरभमे ही बच्चेकी आतोकी श्लैष्मिक कलापर बुरा असर होता है। माताका पहला दूध बच्चेकी आतोको उत्तेजित करनेके लिए काफी रेचक होता है। यह प्राकृतिक रेचक है और इससे किसी तरहकी क्षति पहुचनेकी सभावना नही रहती।

आहारकी मात्रा

बहुतसे लोग पूछा करते है कि बच्चोको कितना दूध पिलाया जाय; पर सभी बच्चोकी स्थिति एक-सी न होनेके कारण मात्रा निर्धारित कर सकना सभव नही है। आवश्यकतानुसार वह न्यूनाधिक हो सकती है। अगर मा-बाप स्वस्थ हैं और बच्चा भी ठीक पैदा हुआ है तो उसके आहारकी मात्रा आप-ही-आप ठीक हो जायगी। अगर बीच-बीचमे पूरकके रूपमे थोडा-थोडा पानी भी दिया जाता रहे तो उसे अधिक दूधकी आवश्यकता नही होगी। सबसे अच्छा तरीका यह है कि बच्चेको जीभर पी लेने दिया जाय और जब वह स्तन या बोतलकी उपेक्षा करने लगे तो पिलाना बद कर दिया जाय। वह आप ही धीरे-धीरे आहारकी मात्रा बढाता जायगा।

रोनेका कारण

अधिक खिलानेपर बच्चे परेशानीसे रोया करते हैं जिसे माताए

भूलसे भूखका सूचक मान लेती हैं। वहुतसे बच्चोंको भूख नही लगती, उन्हे बड़ोकी तरह प्यास लगती है, पर उन्हे पानीके बदले दूध पिलाया जाता है तो इससे कुछ कालके लिए उन्हें शाति मिल जाती है, पर महा-स्रोतमे विकृत बना हुआ दूध उपदाह उत्पन्न कर उन्हे फिर बेचैन कर देता है और वे रोने लगते हैं। इस स्थितिको न समझ सकनेके कारण माताए दूध पिला-पिलाकर बच्चेकी मृत्युका कारण बनती हैं और अपने अविवेक-पूर्ण प्यारका बदला दु खके रूपमे पाती हैं। बच्चेको सिर्फ तीन बार दूध पिलाया जाय और समय इस प्रकार रखा जाय कि अतर बराबर पडे। रातमे पानीके अलावा और कुछ न दिया जाय। दूध पिलानेकी बोतलमे कुनकुना पानी भर लीजिए और तीन-चार बार दिनमे पिलाया कीजिए। रातमे भी बच्चा दो-एक बार पानी पीना चाहेगा।

गलत धारणा

प्राय. जन्मकालसे ही बच्चेको बार-बार और बहुत अधिक पिलाना शुरू कर दिया जाता है। अगर बच्चा स्वस्थ देख पडा तो चिकित्सक भी दिनमे दो-दो घटेपर और रातमे तीन-तीन घटेपर दूध पिलानेकी राय दिया करते हैं; अगर बच्चा कमजोर देख पडे तो और अधिक बार पिलाने-को कहा जाता है। २४ घटेके अदर १० से २४ बारतक दूध पिलाना कोई असाधारण बात नही है। कभी-कभी तो घटेमे तीन-तीन बारतक पिलाया जाता है। दलील यह पेश की जाती है कि बच्चेका पेट छोटा होता है, उसमे एक बारमे अधिक आहार नही अट सकता, इसलिए उसे बार-बार भरते रहना जरूरी है; उसे जितना अधिक आहार मिलेगा उतनी ही तेजीसे उसकी बाढ होगी। मगर तथ्य तो यह है कि बच्चेका पेट इसलिए छोटा होता है कि उसे बहुत कम मात्रामे आहारकी आवश्यकता होती है। बाढ बहुत धीमी चालसे होती है और लगभग २५ वर्षतक इसका समय होता है। अगर देखभाल ठीक तरहसे हो तो उसके शरीरकी गरमी बहुत कुछ बनी रहेगी और सिर्फ थोडेसे ईंधनकी उसे जरूरत होगी। आहारके

सबधमे इतनी गलत धारणाए फैली हुई हैं कि माता-पिता यह समझ ही नही पाते कि बच्चोको पर्याप्त पोषण प्रदान करनेके लिए कितना आहार आवश्यक है।

पूर्णत स्वस्थ नौजवान भी इतनी बार खाना जारी रखकर अपना स्वास्थ्य कायम नही रख सकता, कुछ ही दिनोमे वह रोगका शिकार हो जायगा। बच्चे तो इसको सहन कर ही नही सकते, और इसका सबसे बडा प्रमाण लाखो बच्चोका पहला वर्ष पूरा होनेके पहले ही मर जाना है। शैशवावस्थामे होनेवाले अधिकाश रोगोका सबब आहारसे ही होता है। पेट और आतें अच्छी हालतमे हो तो रोग बच्चोके पास फटकने भी नही पाते। आहारपर तो पूरा ध्यान दिया ही जाय, वे गरम और साफ रखे जाय और उनका कमरा भी हवादार हो। महास्रोत स्वस्थ होनेपर, जो उपयुक्त और सयत आहारसे ही सभव है, बच्चे कीटाणुओंके आक्रमणका भी, जिसका डर बडोंके दिमागको परेशान किये रहता हैं, आसानीसे निवारण कर सकते हैं। पाचनकी गडबडीके बाद बच्चोमे जो रोग प्रकट होते हैं वे वस्तुत. अधिक आहारके लक्षणमात्र हैं।

कमीकी पूर्ति

भरसक तो बच्चेको स्तनपान ही कराना चाहिए, पर अगर माताको पर्याप्त दूध न होता हो तो कमीकी पूर्ति स्वस्थ गायके शुद्ध दूधसे की जाय; क्योकि माताके दूधके बाद गायका ही दूध सर्वोत्तम होता है। हा, इस बात-का ध्यान रहे कि दूध बासी या बहुत देरका दुहा हुआ न हो। दूधके बराबर ही पानी मिला लिया जाय या दो भाग दूधके साथ एक भाग पानी रहे। दोनोको मिलाकर एक सेरमे एक चम्मचके हिसाबसे दुग्धशर्करा डाल दीजिए और उसे थोडा गरम कर बच्चेको पिलाइए। दुग्धशर्करा इक्षु-शर्कराकी तरह पानीमे जल्द नही घुलती, इसलिए यह उतनी मीठी नहीं होती, पर बच्चोंके स्वास्थ्यकी दृष्टिसे अच्छी होती है, इसलिए अगर शर्करा डालनी ही हो तो यही डाली जाय। वार्लीका पानी या इस तरहकी

और कोई चीज दूधमे न मिलाई जाय। बोतलसे दूध पीनेवाले बच्चोको प्रात काल थोडा फलका या तरकारीका रस देना लाभदायक होता है। स्तनपान करनेवाले बच्चोको भी इससे लाभ होगा, हाला कि उन्हे इसकी कोई विशेष आवश्यकता नही होती। बच्चा एक महीनेका हो जाय तो दिनमे सिर्फ एक बार एक चम्मच रस दीजिए और ४ मासमे मात्रा धीरे-धीरे बढाकर दो चम्मच कर दीजिए।

माताके दूधमे पाई जानेवाली शुक्ली (अल्बुमिन) खट्टी होनेपर जल्द नही जमती, पर गायके दूधकी सारी शुक्ली जम जाती है। इसके अलावा माताका दूध छोटी-छोटी फुटकियोमे जमता है जिनपर पाचन-रसोकी अच्छी क्रिया होती है और वे आसानीसे अभिशोषित भी हो जाती हैं, पर गायके दूधकी शुक्ली बडी-बडी फुटकियोंके रूपमे जमती है जो बडी होनेके कारण आसानीसे नही पचती। पानी न मिलाने और तेजीसे घोट जानेपर यह स्थिति विशेष रूपसे प्रस्तुत होती है।

बोतलकी सफाई

अगर बोतलसे दूध पिलाया जाता है तो बोतलकी सफाईपर विशेष रूपसे ध्यान देना आवश्यक है। इस्तेमालके लिए एक ही बोतल न रखकर कई बोतले रखी जाय जिसमे उन्हे साफ करनेका समय मिलता रहे। ३ बार पिलानेके लिए ६ और ४ बारके लिए ८ बोतले रखी जाय और एक दिनका अतर देकर काममे लाई जाय। इस्तेमालके बाद बोतलें धोकर साफ कर ली जाय और तब सोडेमे उबालकर कई बार धोई जाय और धूपमें खडी कर दी जाय। इस्तेमालके पहले भी उन्हे उबाले हुए पानीसे धो लेना चाहिए। चूकि बोतलोकी सख्या पर्याप्त होगी इसलिए वे क्रमसे रखी रहे और एक बोतल एक ही बार काममे लाई जाय। टोटीकी सफाईपर भी पूरा ध्यान देना जरूरी है, क्योकि बच्चोको दूध पिलानेके कार्यमें मानसिक पवित्रतासे अधिक सफाईका महत्त्व है।

स्तन-पानकी अवधि

एक और व्यावहारिक प्रश्न है—बच्चोंको कितने दिनोंतक स्तनपान कराया जाय ? इस अवधिका ठीक-ठीक निश्चय करना बहुत कठिन है। विभिन्न देशोंकी स्थितिके अनुसार इसमे कुछ अतर हो सकता है। इग्लैंड आदि कुछ देशोमे यह अवधि ९ मासकी मानी जाती है, पर अमेरिकामे ६ मास या इससे कमकी ही मानी जाती है। साधारणत यही उचित जान पडता है कि माताका दूध बच्चेके लिए कम पडने लगे तो कमीकी पूर्ति गायके दूध या फलो-तरकारियोके रससे की जाय। अभिप्राय यह कि स्तनपान कराना एकबारगी वद न कर धीरे-धीरे ही किया जाय। इस प्रकार उसे माताका दूध भी कुछ मिलता जायगा।

श्वेतसारीय आहार

लगभग एक वर्षकी अवस्थामे श्वेतसारीय पदार्थ देना आरम किया जा सकता है। पहले बच्चा बहुत कम खाएगा, फिर धीरे-धीरे मात्रा बढाता जायगा। रोटी काफी कडी हो जिसमे बच्चेको निगलनेके पहले उसे खूब चबानेके लिए बाध्य होना पडे। इस प्रकार बच्चेको खूब चबाकर खानेका अभ्यास भी हो जायगा। दूधमे भीगी हुई रोटी या रोटीके साथ दूध कभी न दिया जाय। अगर रोटी-दूध खिलाना ही हो तो साथ न देकर आगे-पीछे देना चाहिए। गेहूकी जो भी चीज खिलाई जाय वह चोकरदार आटेकी बनी हो, मैदेमे खनिज लवण नही होता जो बच्चेकी बाढ और स्वास्थ्यके लिए आवश्यक है। बहुतेरी माताए ४-५ मासकी ही अवस्थामे बच्चेको श्वेतसारीय पदार्थ खिलाना आरभ कर देती हैं। यह बहुत बडी भूल है। इस अल्पावस्थामे उसमे श्वेतसार पचानेकी शक्ति नही होती, क्योकि आरभके कुछ महीनोतक बच्चेमे कुछ पाचन-रसोका अभाव होता है। ऐसी हालतमे इस प्रकारका खाद्य पदार्थ बच्चेके रोगका ही कारण होगा।

अति-आहारके दुष्परिणाम

बहुतसे बच्चोमे जन्मके कुछ ही घटो या दिनोंके बाद अति-आहारके चिह्न प्रकट होने लगते हैं। नाकका बहना इसका एक साधारण लक्षण है। अति-आहारसे यह बहुत बढ जाता है जिससे जीवनभर बने रहनेवाले जुकामकी नीव पड जाती है और समय-समयपर अस्थिवक्रता, ग्रथिशोथ, उकवत, विसूचिका, मसूरिका आदि रोग प्रकट होते रहते हैं। मा-बापको इन रोगोकी प्रतीक्षा करनेको कहा जाता है और वे लोग बराबर सुनते भी रहते हैं कि ये सभी शैशवावस्थाके रोग हैं। यह प्रकृतिके लिए एक लाछन है जो हमेशा शरीरको स्वस्थ बनाये रखनेकी ही चेष्टा करती रहती है।

अधिक प्यारके कारण मृत्यु

आम तौरसे मा-बाप बच्चेको प्यार करते हैं, पर उनका यह प्यार ही, जो प्राय व्यसनका रूप धारण कर लेता है, उस असहाय बच्चेकी मृत्यु-का कारण हो जाता है। आस्कर वाइल्डके शब्दोमे 'जिसे हम प्यार करते हैं उसे ही मार डालते हैं।' एक सुप्रसिद्ध चिकित्सकने लिखा है—'पहला साल पूरा होनेके पहले ही बहुतसे बच्चे मर जाते हैं—ऐसे बच्चे जो महीनों स्वास्थ्यकी प्रतिमूर्ति-से जान पडते हैं और बालविसूचिका, ज्वर आदिसे आक्रात होनेके पूर्व कभी अस्वस्थ नही देख पडते। उनका पेट हमेशा ठसाठस भरा रहता है, शरीर सिरसे पैरतक वसासे लद जाता है और कुछ दिनोतक फुर्तीले और चचल भी देख पडते हैं जो माता-पिता और उनके मित्रोकी प्रसन्नताका कारण होता है। इसके अनतर कुछ कालतक कब्ज, सर्दी, बालविसूचिका आदि रोगोसे ग्रस्त रहकर ये पिजरावशिष्ट बच्चे माता-पिताकी दृष्टिसे ओझल हो जाते हैं। अकुशल स्त्रिया खाना बनानेके लिए आग जलाते समय चूल्हेमे इतना ईंधन ठूस देती है कि आग तेज जलनेके बजाय बुझ जाती है। बच्चोके सबधमे भी ठीक यही होता है। उनके शरीरमे इतना ईंधन ठूस दिया जाता है कि उनका जीवनानल बुझकर ही दम लेता है।' जो जीवित रहते हैं उनके मार्गमे भी इसके कारण

बडी बाधा पहुचती है। शरीरकी गिरी हुई अवस्था प्रत्येक बच्चेमे कुछ-न-कुछ खराबी ला देती है जिससे रोगकी नीव पड जाती है और बच्चे बड़े होनेपर तरह-तरहके भयकर रोगोके शिकार होते रहते है।

प्राकृतिक संकेत

बच्चेका उदर सवेदनशील होता है और अधिक आहारका विरोध करता है। जमे हुए और कभी-कभी जमनेका समय मिलनेके पहले ही दूधका वमन इसीका परिणाम होता है। यह आत्मरक्षाका प्राकृतिक उपाय है। अगर इस सकेतपर ध्यान देकर पेट ठीक न हो जानेतक दूधके बदले पानी दिया जाय और तब आहारकी मात्रा घटाकर पाचन-शक्तिके अनुसार रखी जाय तो बच्चेकी हालत ठीक हो जायगी।

कभी-कभी जिन बच्चोकी पाचन-शक्ति अच्छी नही होती उन्हें आवश्यकतासे अधिक दूध पिलानेपर न पचा हुआ दूध भी पचे हुए दूधकी ही तरह जम जाता है। उसका जल तो शोषित हो जाता है, पर ठोस अश बिना पचे ही बडी आतमे पहुच जाता है और दही-जैसे रूपमे मलके साथ बाहर निकलता है। महास्रोतसे गुजरते समय उसका कुछ अश सड भी जाता है जिससे उत्पन्न हुए विषका कुछ अश तो शरीर ग्रहण कर लेता है और कुछ बडी आतमे ही रह जाता है जिससे अपानवायुमे बडी दुर्गंध आ जाती है।

मलमे जमे हुए दूधका निकलना अतिभोजनसे होनेवाले खतरेका सूचक है। इसपर ध्यान न देनेपर बाल-विसूचिका होनेकी—विशेषकर गरमीके मौसममे—सभावना बढ जाती है। यह दुग्धजन्य विषमताका ही परिणाम होती है। इसमे आत्मरक्षाके प्रयत्नमे आतें क्षुब्ध होकर बहुत अधिक लसीका निकालने लगती हैं जिससे बच्चेका शरीर शीघ्र ही शिथिल पड जाता है और प्राय मृत्यु भी हो जाती है। अगर दूध पिलाना फौरन बदकर बच्चेके चाहनेपर सिर्फ कुनकुना पानी थोडा-थोडा दिया जाय तो बच्चेके बच जानेकी आशा रहती है।

अच्छी पाचन-शक्तिवाले बच्चे रोज काफी—सेरो—दूध पचा लेते हैं, पर सबका उपयोग नही कर सकते, अगर कर सकते तो कुछ ही दिनोमे उनकी अच्छी बाढ हो जाती। पाचनकी तरह अतिरिक्त मात्राका निष्कासन आसान नही होता। इससे त्वचा, वृक्को, फुफ्फुसो और आतोपर उनकी शक्तिसे अधिक भार पड जाता है और इसे बाहर निकालनेमे प्राय नाक और गलेकी श्लैष्मिक कलासे सहायता लेना आवश्यक हो जाता है। ऐसे ही बच्चोंके सबधमे प्राय सर्दी 'पकड' लेनेकी बात कही जाती है, पर दरअसल सर्दी 'पकडी' नही जाती, बल्कि बच्चोको खानेको दी जाती है।

कुछ अवस्थाओंमे मल बाहर निकालनेका भार त्वचापर भी पडता है और उसकी भी हालत श्लैष्मिक कला-जैसी ही होती है। वह सीमित मात्रामे ही मल बाहर निकाल सकती है इसलिए अधिक मात्रामे विजातीय द्रव्य एकत्र हो जानेपर उसमे शोथ हो जाता है और पहले खुजली होकर पीछे उकवत हो जाता है। बच्चा उसे नोचते-नोचते प्राय नाखून गडा दिया करता है और चेहरा जख्मोसे भर जाता है। इस हालतमे आहारकी मात्रा कम कर देनेपर उदर और आतोमे अम्ल उत्पन्न करनेवाले खमीरका बनना बद हो जाता है, शरीरके पोपणके लिए पर्याप्त आहारका अभिशोषण हो जाता है और त्वचाको केवल अपना साधारण कार्य करना रह जाता है। क्षोभका कारण दूर हो जानेपर चर्मविकार भी शीघ्र ही चला जाता है। इस प्रकारके बच्चेका वजन जितना होना चाहिए उससे बहुत अधिक होता है और मा-बापको आश्चर्य होत है कि ऐसे स्वस्थ बच्चेको रोग क्यो हुआ ?

मानसिक रोग

खिलानेमे समझदारीसे काम न लेनपर मानसिक रोग भी हो जाते हैं। स्वस्थ बच्चा प्रसन्नचित्त होता है, अस्वस्थ बच्चा चिडचिडा हो जाता है। चिडचिडापन और क्रोध मानसिक विकृतिके ही लक्षण हैं। क्रोध तो अस्थायी उन्माद ही है। अगर अधिक खिलाना जारी रहे तो मस्तिष्क-विकृति, अपस्मार, उन्माद आदि रोगोके होनेकी सभावना बढ जाती है।

स्वस्थ शरीरमे ही स्वस्थ मस्तिष्क रह सकता है। अगर लोग अपने शरीरकी देखभालपर ध्यान दे, विशेषकर आहारके सबधमे सयम बरते तो पागल-खानोकी जरूरत ही नही रहेगी।

बच्चोको अधिक खिलानेसे एक बडी खराबी यह होती है कि उनमे उत्तेजक पदार्थ खानेकी चाट पैदा हो जाती है जो आगे चलकर कई तरहसे शात की जाती है—कुछ लोग तो तबाकू, मदिरा आदिकी सहायता लेते है जिनके वे आदी हो जाते हैं और कुछ लोग अति भोजनद्वारा उसे शात करनेकी कोशिश करते है। उसकी शाति चाहे जैसे करनेका प्रयत्न किया जाय, पर वह कभी शात होती नही, क्योकि इसके लिए जो कुछ उसे खिलाया जाता है उसीके सहारे वह पुष्ट होती और बढती है। जिस तरह अफीम ज़्यादा अफीमकी माग करती है और मदिरा अधिक मदिराकी, उसी तरह बार-बार खाते रहनेसे और अधिक खानेकी प्रवृत्ति होती है और इस प्रकार अप्रकृत भूखकी परिणति मृत्युमे ही हुआ करती है।

शिशुओंकी देखभाल

स्थूलकाय बच्चोंको लोग स्वस्थ समझते हैं जो बहुत बडी भूल है। बच्चा जितना अधिक मोटा होगा उतनी ही कम आयुमे वह श्मशान-यात्राकी तैयारी करेगा। जन्मके समय आठ पौंड या इससे अधिक वजन होना इस बातका सूचक है कि मातृत्वके नियमोका उल्लघन किया गया है। शीघ्र या कुछ विलबसे इसका फल बच्चे और माताको भी भुगतना पडता है। अधिक वजन स्वास्थ्यके लिए घातक होता है, क्योंकि इसके कारण अदरकी सफाई और आहारका पाचन ठीक तरहसे नही हो पाता और इनके न होनेपर स्वास्थ्यका रहना असभव ही है।

माताका रहन-सहन

जीवन-यापनका ढग सादा रखना बच्चेके प्रति माताका पवित्र कर्तव्य है। हमेशा आदर्श जीवन व्यतीत करना तो सभव नही है, पर हर एक माता सादा भोजन और मनोभावोपर नियत्रण रख सकती है। उपयुक्त आहार और मानसिक सतुलन बच्चेको स्वास्थ्यवर्द्धक पोषण प्रदान करनेमे बडे सहायक होते हैं। मासादिसे भरसक परहेज करते हुए फल और तरकारिया अधिक खाई जाय, रोटी चोकरदार आटेकी हो और अगर चावल खाया जाय तो वह पालिशदार न हो। सफेद चीनी, अचार-मुरब्बो और मिर्च-मसालोका यथासभव वहिष्कार किया जाय। शुद्ध दूध बच्चे और माताके लिए समान रूपसे लाभदायक होता है। गुरुपाक भोजन और उत्तेजक पेयोंसे भी परहेज किया जाय। साराश यह कि जहातक सभव हो माताको अपना खान-पान प्राकृतिक रखना चाहिए। मनकी प्रसन्नताका भी वहुत अधिक महत्त्व है। जो माता परेशान रहा करती है या किसी व्वसात्मक

भावसे अभिभूत होती है वह अपने बच्चेको अपने दूधकी प्रत्येक बूदके साथ कुछ-न-कुछ विषपान कराती जाती है।

कुछ माताए पोषण प्रदान करनेमे समर्थ नही होती। इसका विशेष कारण ज्ञानका अभाव ही होता है, क्योकि सावधानीके साथ जीवन व्यतीत करनेवाली स्त्रिया बच्चोको पोषण प्रदान करनेमे प्रायः समर्थ होती हैं। अगर बोतलसे दूध पिलानेकी चाल बढती गई और तरह-तरहका टीका लगाना बद नही हुआ तो माताओका दूध पिलाना बद ही हो जा सकता है। कुछ माताओको स्तनपान करानेमे बडे आनदकी अनुभूति होती है, पर कुछ अपनी शकलमे खराबी आनेके डरसे स्तनपान कराना स्वीकार नही करती। बच्चेको प्राकृतिक आहारसे वचित रखनेका चाहे जो भी कारण हो, मा-बापको यह समझ लेना चाहिए कि इससे बच्चेके स्वास्थ्य और जीवनमे बहुत कमी आ जायगी।

त्वचा आदिकी देख-भाल

आरभमे साधारण बच्चा लगभग हमेशा—२०, २२ घटे— सोता है। उसके साथ किसी तरहकी छेड-छाड नही होनी चाहिए। सिर्फ तीन बार दूध और तीन-चार बार बोतलसे पानी पिला दीजिए और उसे साफ, सूखा और उष्ण—तप्त नही—रखनेका प्रयत्न कीजिए। बहुतसे बच्चे रोज नहलाये जाते हैं। यह ठीक है, पर नहलानेका काम तेजीसे होना चाहिए। सफाईके लिए स्नानके पहले उबटनका प्रयोग या नहाते समय बेसनका प्रयोग अच्छा है। अगर साबुन इस्तेमाल किया जाय तो वह बहुत मुलायम हो और बदन खूब साफ कर दिया जाय, नही तो साबुनके कण छिद्रोंमे रह जाकर उपदाह उत्पन्न करेंगे। जख्म, चर्मस्फोट और शोथ ऐसी ही असावधानीके कारण होते हैं। कोई धातुवाली बुकनी या पाउडरका इस्तेमाल न किया जाय। अगर बच्चा सूखा और साफ रखा जाय और उचित पोषण पाता रहे तो उसकी त्वचा भी अच्छी हालतमे रहेगी। अच्छी हवाके अभावमे बच्चोकी बाढ अच्छी नही होती, इसलिए

कमरेमे हवा काफी आती रहे, पर वह ऐसे रास्तेसे आये कि उसका झोंका न लगे। बच्चेके अग मुक्त रखे जाय जिसमे वह स्वच्छदतापूर्वक उनका सचालन कर सके।

फेफड़ोंका व्यायाम

साधारणत लोग समझते है कि फेफडोंके व्यायामके लिए बच्चेका रोना आवश्यक है। स्वस्थ और आरामसे रहनेवाला बच्चा कभी नही रोयेगा और यह आवश्यक भी नही है। फेफडोकी क्रियाके लिए उससे व्यायाम कराना कठिन नही है। बच्चे दृढतापूर्वक उगली या छड पकडकर लटक सकते हैं। इससे न रोनेवाले बच्चेको इस प्रकार ऊपर उठा लीजिए और हर बार कुछ मिनट लटकने दीजिए। इससे सीना ऊपर उठेगा और फेफडोका व्यायाम हो जायगा। इस व्यायामसे बच्चोको आनद तो मिलता ही है, उनकी शक्ति-वृद्धिके साथ स्वभावमे सुधार भी होता है। रोनेसे बच्चोका स्वभाव क्रोधी और चिडचिडा हो जाता है। कभी-कभी थोडा रोए तो बुरा नही है, पर अधिक रोना कष्ट, रोग या खराबीका ही सूचक है।

दवा न दी जाय

बच्चेको किसी तरहकी दवा मत दीजिए। इससे नुकसानके सिवा कभी कोई फायदा नही होता। अगर कभी इसकी जरूरत पड ही जाय तो अपवादके रूपमे अडीका तेल या खनिज लवण-जैसा कोई रेचक पदार्थ दिया जा सकता है। धातुनिर्मित कोई चीज देनेका तो कोई औचित्य हो ही नही सकता। अगर बच्चेको शुद्ध और सयत आहार मिलता रहे तो उसे कभी कब्ज नही होगा और अगर कभी हो ही जाय तो एनिमाका प्रयोग बेखटके किया जा सकता है। हा, इतना अवश्य स्मरण रहे कि इन उपचारो-से आरोग्यलाभ नही होता, केवल उपशमन होता है, आरोग्यलाभ तो मूलो-का सुधार और शरीरके अबाध रूपसे कार्य करने योग्य हो जानेपर ही हो सकता है।

प्रदर्शनसे हानि

बच्चेको अकारण तग करते रहना ठीक नही । नई अवस्थाके मा-बाप उसे सबको दिखलाते रहनेकी गलती करते है और लोग शिष्टाचारके खयालसे उसे 'सर्वश्रेष्ठ' भी कह दिया करते हैं, हाला कि वैसे बच्चे ससारमे लाखो होते है। बच्चेको चुपचाप रहने देकर उसे सचमुच अच्छा बननेका अवसर दीजिए। प्रदर्शनके कारण बच्चेकी उत्तेजना बढती है जिससे चिडचिडापन आदि विकारोकी नीव पड जाती है। शात वातावरणमे बाढ अच्छी होती है। बच्चा जगा रहे तो उससे शातिपूर्वक बात कीजिए। वह इसी तरह मातृभाषा सीखना आरभ करता है। अच्छी भाषाका प्रयोग कीजिए। जो लोग बच्चोकी बोलीमे उससे बात करते हैं वे उसके मार्गमे बाधक होते हैं, क्योंकि उसे उस बोलीको भूलकर पुन टकसाली भाषा सीखनी पडेगी।

बुरी आदतोंका सिलसिला

जो अपने रहन-सहनकी खराबी महसूस करते हैं उनमे भी कुछ ही लोग व्यसनोकी शृखलाको तोड फेंकनेमे समर्थ हो पाते है। बहुत कम लोग स्पष्ट रूपसे यह समझ पाते हैं कि रोग या अकाल मृत्यु बच्चेमे माता-पिता-द्वारा डाली गई बुरी आदतके ही कारण होती हैं और ये माता-पिता भी यह आदत विरासतमे ही पाये होते है। इस तरह यह सिलसिला बराबर जारी रहता है और बच्चे मा-बापके पापका फल भोगते है। कुशल यही है कि इसमे सुधारकी बहुत कुछ गुजाइश है और अगर माता-पिता अपना रहन-सहन ठीक कर बच्चोके पालन-पोषणमे समझदारीसे काम लें तो यह सिलसिला आगे बढनेसे आसानीसे रोका जा सकता है। दृढ इच्छा और सकल्पके साथ कभी भी परिवर्तन किया जा सकता है जिसका परिणाम अच्छा ही होगा। विलब करनेका कोई बहाना नही हो सकता। गलतिया जितनी अधिक देरतक बनी रहेगी उनपर विजय पाना उतना ही कठिन होगा।

तगड़े और नाजुक बच्चे

मोटे तौरपर बच्चे दो भागोंमे बाटे जा सकते हैं—तगडे और नाजुक। तगडे बच्चे तरह-तरहके अतिचारोको सहन कर लेते है और कोई बुरा फल प्रत्यक्ष रूपमे नही देख पडता, पर यह विकारक्षमता भी बाहरी ही होती है। वर्धनशील बच्चे रोग उत्पन्न करनेवाले प्रभावोको जल्द ही और आसानीसे निकाल बाहर करते हैं, पर अगर इस कार्यमे पडनेवाली बाधा बहुत बडी हो तो वे दौडमे परास्त हो जाते हैं।

दूसरी श्रेणीके बच्चे इस तरहके अतिचारको सहन नही कर सकते, क्योकि उनका शरीर इतना कोमल होता है कि थोडी-सी अव्यवस्थासे ही उसका सतुलन नष्ट हो जाता है, ऐसे बच्चोकी देख-भालमे तगडे बच्चोकी अपेक्षा अधिक सावधानी बरतनेकी जरूरत पडती है, नही तो उनका शरीर कमजोर हो जाता है, नाडी-सस्थान दृढ नही हो पाता और वे मृत्युके भी शिकार हो जाते हैं।

अच्छा कौन ?

कुछ लोग अपने बच्चोमे और बच्चोकी-सी विशेषता न पाकर वहुत चिंतित रहते हैं। इस तरहकी तुलना करनेमे समय नष्ट करना बडी भूल है। जैसे दो पत्तिया या अनाजके दो दाने एक-से नही होते उसी तरह दो बच्चे भी एक-से नही हो सकते, इसलिए देख-भालमे भी कुछ अतर होना आवश्यक है। अगर देख-भाल सावधानीके साथ हो तो ये बच्चे भी स्वस्थ हो जाएगे। ये वच्चे तगडे बच्चोकी तरह न तो अधिक सर्दी-गरमी बर्दाश्त कर सकते हैं और न अधिक भोजन ही, इसलिए इनके सबधमे यह देखते रहना आवश्यक है कि इन्हे क्या और कितना आवश्यक है। अगर किसी चीजकी अतिशयता न हो तो इनकी शारीरिक और मानसिक शक्ति बढ़ती

जायगी। अगर सच पूछिए तो ऐसे ही बच्चे भाग्यशाली होते हैं, क्योंकि इन्हें अपनी परिमित शक्तिका शीघ्र ही ज्ञान हो जाता है। इनके लिए अतिका फल इतना बुरा होता है कि ये शीघ्र ही मिताचारका पाठ सीख लेते हैं और यह ज्ञान जीवनपर्यंत इनकी रक्षा करता रहता है।

तगडे बच्चोको भी अपनी शक्तिका पता फौरन चल जाता है और वे अपने माता-पिताको भी इसपर इतराते देखते हैं। इसके परिणाम-स्वरूप उनमे यह भ्रात धारणा जड पकड लेती है कि हम बराबर ऐसे ही बने रहेंगे और किसी बातसे हमारी अधिक बुराई नही होगी। इस भ्रममें जीवन-यापन करनेके कारण उनके स्वास्थ्यकी जड हिल जाती है, इसलिए माता-पिताको अपने बच्चोंको कार्योंके फलाफलका ज्ञान कराकर यह तथ्य हृदयगम करा देना चाहिए कि जो लोग स्वास्थ्यके पात्र हैं उनका ही स्वास्थ्य स्थायी रूपसे बना रह सकता है। यह सत्य है कि बच्चे इस प्रकार-की शिक्षापर अधिक दिनोतक ध्यान नही देते, पर माता-पिताके कर्तव्यका पालन तो हो जायगा।

तगडे बच्चोको मसूरिका, ज्वर, गलसुआ आदि रोग होते भी हैं तो वे इतनी शीघ्रतासे दूर हो जाते हैं और इतने कम कष्टकर होते हैं कि वे शीघ्र ही भुला दिए जाते हैं। माता-पिता प्राय॰ यह नही जानते कि पोषण-सबधी दोष—विशेषत अतिभोजनके कारण ही ये रोग होते हैं। प्राय. यह विश्वास किया जाता है कि बच्चोको ये सब रोग होने ही चाहिए। कुछ माताए तो ऐसे रोगोंके लिए अवसर भी प्रदान करती हैं। जिसमे बच्चे इनसे जल्द पार पा जाय।

माता-पिताका अज्ञान

बच्चोका अस्वस्थ होना माता-पिताके अज्ञान और कर्तव्यकी उपेक्षाका ही सूचक है। बच्चोंके लिए ठीक रहना स्वाभाविक है और उचित अवसर मिले तो वे ठीक रहेगे भी। अगर उनके खान-पानमे कोई खराबी न हो तो संपर्क होनेपर भी छूत आदिके कारण उन्हे बालरोग नही होंगे। किसी

भी कीटाणुमे इतनी शक्ति नही जो विकाररहित और स्वस्थ शरीरमे पहुचकर उसे किसी तरहकी क्षति पहुचा सके। देख-भालमें लापरवाहीके कारण बच्चोका स्वास्थ्य खराब होनेपर ही, ये तथाकथित कीटाणु शरीरमे अड्डा जमाते हैं। अगर बच्चोको सयत मात्रामे प्राकृतिक आहार दिया जाता रहे तो रोग उनके पास फटकनेका नाम भी नही लेगा।

कुछ माता-पिता भ्रमवश यह विश्वास कर लेते है कि वे चाहे जो कुछ खिलाते रहकर रोगग्रस्त जानवरोकी लसीकासे बना हुआ टीका या वैक्सीन लगवाकर रोगका आसानीसे निवारण कर लेंगे। यह बात तर्क, व्यवहार-बुद्धि और प्रकृतिके विरुद्ध ही नही, असभव भी है। बच्चा हो या सयाना, अगर वह लगातार ज्यादती करता जाय तो कभी-न-कभी उसका स्वास्थ्य गिर ही जायगा। जिस रोगकी आशका है वह रोग भले ही न हो, दूसरा तो हो ही जायगा।

अकाल मृत्यु क्यों ?

तगडे बच्चे ही बढकर सयाने होनेपर लापरवाह होते हैं और यही कारण है कि सौ वर्षोंसे ऊपर चलने योग्य शरीर पाकर भी अधिकाश लोग पचासके पहले ही इस दुनियासे कूच कर जाते हैं। ऐसे ही लोग मीयादी बुखार, गठिया तथा वृक्क, हृदय और यकृतसबधी रोगोंके, जो सब-के-सब अति-भोजनके परिणाम हैं, शिकार हुआ करते हैं। वे तो अपनेको स्वस्थ समझते रहते हैं, पर ये रोग बिना कोई खुली चेतावनी दिये ही पहुच जाते हैं। दरअसल उन्हें सच्चे स्वास्थ्यका ज्ञान ही नही होता। उनका स्वास्थ्य कामचलाऊ होता है, कोई भयकर पीडा नहीं होती, पर शरीरकी अवस्था भी साधारण नही होती जो स्वच्छ और तीव्र बुद्धिका कारण है। अग्नि-माद्य बराबर बना रहता है जिससे आतोमे गैस बनती रहती है और जीभपर मैल जमा रहता है। अति-भोजनके कारण रक्तचाप भी बहुत बढ जाता है। जब ये तगडे लोग अस्वस्थ होते हैं तो उनके लिए कुछ कर सकना

कठिन ही नही, असभव भी हो जाता है, क्योकि उनकी आदतें इस कदर मजबूत और उनपर हावी हो गई होती हैं कि वे अपने तरीकोमे जरा भी हेर-फेर नही कर सकते। दुबले-पतले लोगोके दीर्घायु होनेकी अधिक सभावना रहती है, क्योकि जीवन-यात्राके आरभमे ही वे सावधानीका पाठ पढ लेते हैं। जो प्रसिद्ध व्यक्ति बहुत दिनोतक जीवित रहे हैं वे प्राय: दुबले-पतले ही रहे है।

दंत-प्रस्फुटन और उनकी रक्षा

दत-प्रस्फुटन एक स्वाभाविक क्रिया है; उसमे कष्ट उन्ही बच्चोको होता है जिनका लालन-पालन अप्राकृतिक ढगसे होता है। जिन बच्चोकी माताका स्वास्थ्य खराब रहता है, अप्राकृतिक जीवन व्यतीत करती एव अप्राकृतिक भोजन करती हैं उन्हीको दात देरसे और देरतक निकलते हैं।

दांत काटना प्यारका प्रदर्शन नहीं

दात निकलनेपर मसूडोंमे एक प्रकारकी स्वाभाविक खाज-सी चलती है और माताए दूध पिलानेके बाद जिन बच्चोका मुह और अपना दूध साफ नही करती उनमे यह खाज ज्यादा बढ जाती है। इसे दूर करनेका सरल उपाय है बच्चेका मुह साफ करना और उन्हे सेब, नाशपाती, अमरूद-सी कोई कडी चीज कुतरनेके लिए देना। चार-पाच महीनेका होनेपर बच्चेके मसूडोको कभी-कभी उगलीपर शहद लगाकर यदि धीरे-धीरे मल दिया जाय तो उसके दातोको निकलनेमे सरलता तो होती ही है खाज भी नही आती। इस खाजको मिटानेके लिए बच्चेके काटनेको प्यारका प्रदर्शन समझना अपनेको धोखा देना है।

बच्चे अकसर बडे होनेपर भी काटनेकी आदत नही छोड पाते—अपने नाडी-दौर्बल्यके कारण। दुबली, शिथिल और चिडचिडी माके बच्चे इस रोगके आसानीसे शिकार हो जाते हैं। भरे बदनके, मोटे-चिकने बच्चोको यह रोग बहुत कम होता है, उनकी नाडियोपर आवश्यक चर्बी रहती है जिससे साधारण-साधारण-सी बातोसे उनमे उत्तेजना पैदा नही होती और न उन्हे उस मुक्त-शक्तिके व्ययके लिए काटने, बकोटने या हाथ-पाव पटकने और रोने-चिल्लानेकी जरूरत होती है। रोगके ये सब लक्षण दुबले, दोषपूर्ण अथवा अपूर्ण भोजनपर पले बच्चोंमे ही पाये जाते हैं।

स्तन-विरतिकी समस्या

स्तन-विरति कोई कठिन समस्या नही है। प्रकृतिके प्रागणमे चरनेवाली किस हिरनीको यह सोचना पडता है कि वह कव और किस प्रकार अपने बच्चेकी स्तन-विरति कराये ? कौन-सा पक्षी यह सोचता है कि उसे बच्चेको कब चुगाना बद करना चाहिए ? फिर मनुष्यकी ही इस समस्यासे टक्कर क्यो ? मनुष्य स्वय समस्याए उत्पन्न करता है और उनमे स्वय उलझकर सुलझनेके लिए छटपटाता है। दत-प्रस्फुटन आरभ हुआ नही कि स्तन-विरतिकी समस्या सवार ! दात निकलना आरभ होनेका कदापि यह तात्पर्य नहीं है कि बच्चेको माताके दूधकी अब जरूरत नही रही। दो या चार दात उसे खाने या चबाने लायक नही बना देते। दात निकलना दो वर्षोंतक चलता रहता है और पूरे दात आ जानेपर ही वह पूर्णतया माताका दूध छोड सकता है। बच्चेके आठ-दस महीनेके हो जानेपर अर्थात् जब वह कुछ दूसरी चीजें खाने लगता है, कुछ फल-तरकारी चबाने लायक उसके दात हो जाते हैं तब माताके स्तनोमे दूध कम होने लगता है। इस वक्त प्रकृति उसके पूर्ण भोजनका नही, आशिक भोजनका ही इतजाम करती है और धीरे-धीरे जब बच्चा पूर्णतया बाहरी भोजनपर रहने लगता है, माताके स्तनोका दूध सूख जाता है। फिर स्तन-विरतिकी समस्या कैसी ? बच्चा आसानीसे समझ जाता है, अतमे वह अकसर दूध पीना भूलने लगता है और धीरे-धीरे अपने-आप अपनी माको तग करना बद कर देता है।

दांतोंकी रक्षा

बच्चेके दातोकी सुरक्षाका प्रयत्न उनके निकलनेके बहुत पहले—कम-से-कम बारह महीने पहले—आरभ हो जाना चाहिए। सुदर मजबूत दात निकलें इसके लिए शरीरकी अस्थियोको भरपूर पोषण मिलना चाहिए

और यह पोषण उन्हे उस आहारसे मिलता है जो बच्चेकी माता ग्रहण करती हैं।

बच्चेके मसूडोंमे दातोंकी नीव गर्भावस्थाके सातवें सप्ताहमे ही पड जाती है। इसी समयसे माताको करीब सेरभर दूध नित्य पीना आरभ करना चाहिए और उसे फल-तरकारियोका, विशेषतया कुछ नीबूजातीय फलोका व्यवहार रोज जरूर करना चाहिए जिसमे उसके शरीरमे उन तत्त्वोकी प्रचुरता रहे जिनसे बच्चेके शरीरकी अस्थिया मजबूत एव दात सुदृढ और सुदर बनते हैं।

दांतोंका निर्माण

बढिया अस्थि बनानेवाले तत्त्वोंके अलावा माताके आहारमे विटामिन डी० भी प्रचुर मात्रामे होना चाहिए। यह विटामिन शरीरमे अस्थियोका ढाचा बनानेमे राजगीरका काम करता है। जिस प्रकार सुदर घर बनानेके लिए ईंटोको सजाकर—एक दूसरेपर तरतीबसे—रखना पडता है उसी प्रकार विटामिन डी० अस्थिके कोषाणुओको उचित तादादमे और आवश्यक अवस्थामे रखता है। विटामिन डी० के अभावमे अस्थि बनानेवाले तत्त्व शरीरमे बेतरतीब इकट्ठे हो जाते हैं जिससे अस्थियोका ढाचा भद्दा—मोटा-पतला एव सूखा-सा—तैयार होता है जिससे उसपर बननेवाला शरीर सुडौल नही हो पाता। गर्भावस्थामे इस विटामिनकी निश्चित रूपसे अधिक मात्रामे जरूरत होती है। वह स्त्रीको सीधे धूपसे अथवा और किसी रीतिसे मिलना ही चाहिए। यदि गर्भिणीको यह विटामिन उचित मात्रामे मिला तो उसके बच्चेके दात जरूर मजबूत किस्मके निकलेंगे और उसका चेहरा भी सुदर होगा; क्योंकि चेहरेमे दातो और मसूडोंके अदरकी अस्थियोके अलावा दो ही अस्थिया होती हैं जो चेहरेको बनाती हैं—गालोकी अस्थि और नाककी अस्थि। इन दोनों अस्थियोंमे चूना (कैलसियम) गर्भके आठवें सप्ताहमे इकट्ठा होने लगता है और इनका सुघडपन एव स्थिरता

नीचे और ऊपरके जबडोपर निर्भर हैं जिनसे ये सबद्ध रहते हैं। अतमे जब बच्चा पैदा होता है तबतक उसकी मा उसके सारे दात बना चुकी होती है जो बच्चेके मसूडोमे छिपे रहते हैं।

इस प्रकार बच्चेको मजबूत एव सुदर दात देना पूरी तरह माताका काम है, पर इसके लिए माताकी दातसबधी पैतृक सपत्ति भी अच्छी होनी चाहिए। एक प्रसिद्ध वैज्ञानिकका कहना है कि यदि आप बच्चेकी अस्थिया मजबूत बनाना चाहते हैं तो यह काम जब बच्चेके दादा बच्चे रहे तभी शुरू होना चाहिए। इसलिए बच्चेके दातोकी हालत बहुत कुछ बच्चेके दादा एव परदादा के दातोकी हालतपर निर्भर है।

बच्चेका जन्म हो जानेके बाद भोजन एव अन्य नियमोद्वारा बच्चेके दातोको मजबूत बनानेका माताका काम तो पूरा हो जाता है, पर यह काम अब बच्चेके भोजन एव देख-भालके रूपमे फिर शुरू होता है, क्योंकि अब बच्चेको अपने दातोको अपने जबडोमेसे मसूडोको काटते हुए निकालना एव बाहर लाना होता है।

दांतोंकी सफाई

बच्चेके दात जब निकलने लगें तब माताको उनकी देखभाल एव सफाई करते रहना चाहिए। उसे एक पतला-सा कपडा नित्य जरा-सा नमक मिले पानीमे उबालना चाहिए और उसे अपनी अगुलीपर लपेटकर बच्चेके दातोको साफ कर देना चाहिए। इससे बच्चेके दात तो साफ हो ही जाते है मुहसे पाचक लार भी उचित मात्रामे स्रवित होने लगती है। अतमे जब सारे दात निकल जाय तब बच्चेको उसके तीसरे वर्षमे उन्हे किसी मुलायम दातुन या ब्रशसे स्वय साफ करना सिखाया जा सकता है।

दातोंके स्वस्थ रहनेके लिए मसूडोका स्वस्थ रहना जरूरी है। मसूडे जब सूज जाते हैं तो उनमे खाद्याश फँसने लगता है और सडकर दातोको

हानि पहुंचाता हैं। मसूडोंके अस्वस्थ होनेका कारण स्कर्वी रोग है जो भोजन-मे विटामिन 'सी०' के अभावके कारण पैदा होता है; पर जिन बच्चोंको दूधके साथ फलोका रस भी दिया जाता है उनको यह रोग नही होता। रोगके कारण भी बच्चोके मसूडे सूज जाते हैं, पर यह रोग उन्ही बच्चोको होता है जिन्हे कनसमेत चावलके बदले छटे सफेद चावल एव चोकरसमेत आटेकी रोटियो और दलियेकी जगह मैदेकी मिठाइया या बिस्कुट खिलाए जाते हैं। कभी-कभी बच्चोंके दातोमे पायरियासे पीडित व्यक्तिके चूमनेसे भी कष्ट हो जाता है। ऐसी अवस्थामे बच्चेकी उचित देख-भाल एव चिकित्सा होनी चाहिए।

चबानेकी कसरत

चबाना भी बच्चेके दातोको स्वास्थ्य प्रदान करता है। छोटे बच्चोको या तो तरल अथवा अर्धतरल भोजन दिया जाता है जिससे उन्हे चबानेका मौका नही मिलता। इसकी पूर्ति के लिए बच्चे कई चीजें चबाते हैं और कई तो हाथमे आनेवाली प्रत्येक चीजको काटना चाहते हैं। इसका एक वैज्ञानिक कारण है। स्वाभाविक जबडे, जिनका चबानेसे समुचित विकास हुआ रहता है, कडी-से-कडी चीजोको बिना हानिके चबा सकते हैं एव कडा खिचाव तथा दबाव बर्दाश्त कर सकते हैं। वे मजबूत दत-पेशियोंसे सबद्ध रहते हैं एवं उनपर चमकीला एनामेलकी तरहका एक द्रव्य, जो अच्छी-से-अच्छी धातुसे भी कडा और मजबूत होता है, लगा रहता है। इसलिए जबडोंके स्वाभाविक विकास और उनसे सबद्ध अस्थियोंको मजबूत बनानेके लिए चबानेकी कसरत करना आवश्यक है, तभी मुख भी सुदर बनेगा। चबानेसे बढते हुए दात अपनी जडोमे ठीक तरहसे बैठ जाते हैं और वहा रक्त-संचालन भी ठीक तरहसे होता है जिससे मसूडे भी मजबूत बनते हैं।

हर बच्चेको कोई उपयुक्त चीज चबानेको देनी चाहिए। बच्चेके गलेमे कोई रबडकी कडी चुसनी सुदर-से फीतेमे बाधकर लटका दीजिये जिसमे बच्चा जब चाहे उसे चबा सके अन्यथा वह अपने हाथ-पैरका

अगूठा मुहमे डालेगा। कभी-कभी उसे रोटीका कड़ा-सा टुकड़ा दिया जा सकता है ताकि वह उसे चूसता-चबाता रहे, पर इसमे पूरी निगरानी रखनी चाहिए।

एक सालका पूरा होनेपर, जब बच्चेका मुख मोतियोंसे भर जाय, बच्चेको, विशेषकर भोजनके अतमे, सेब, अमरूद या गाजर आदि फल-तरकारी चबानेको दी जानी चाहिए। इससे चबानेका काम पूरा होनेके साथ-साथ मुख और दात भी साफ रहते हैं।

अमेरिका, इग्लैड आदि सभी समुन्नत कहे जानेवाले देशोंके चिकित्सक नई पीढीके लोगोंके दात देखकर चिंतित हैं। उनका कहना है कि अबके नब्बे प्रतिशत लोगोंके दात खराब हैं और छानवे प्रतिशत बच्चोंके दात स्वाभाविक स्थितिमे नही हैं। यह अस्वाभाविक अवस्था बच्चोंके ठीक तरह चबाने और उन्हे चबाने योग्य चीज खानेको देनेसे ही बदली जा सकती है। इस बातका प्रत्येक माताके और माता बननेवाली महिलाके गले उतर जाना जरूरी है।

अल्पवयस्क बच्चोंका आहार

अगर बच्चेमे माता-पितासे प्राप्त कोई दोष न हो तो उसके स्वास्थ्य-का अच्छा या बुरा होना बहुत कुछ उसके आहारपर निर्भर है।

आहारके प्रकार

जिस प्रयोजनकी सिद्धिके लिए बच्चोको आहार दिया जाता है उसके तीन विभाग किए जा सकते हैं—(१) उनकी शक्ति बनी रहे, (२) क्षति-की पूर्ति होनेके साथ ही बाढ होती रहे और (३) कार्यक्षमताके साथ रोग-निरोधकी शक्ति पर्याप्त मात्रामे रहे।

जो खाद्य पदार्थ दिए जाते है वे सभी उक्त सभी कार्योको नही करते; विशेष प्रकारके खाद्य उक्त कार्योमेसे कोई एक कार्य विशेष रूपसे करते हैं। पहले कार्यकी पूर्ति कार्बोहाइड्रेट वर्गवाले खाद्यसे होती है जिसमें रोटी, आलू, शर्करा, सूखे फल, मक्खन आदि परिगणित होते हैं, दूसरा अर्थात् वृद्धि और क्षति-पूर्तिवाला कार्य प्रोटीन-वर्गके खाद्यसे होता है जिसमे पनीर, दूध, दही, छेना, अडा, गिरी, दाल, मछली और मास हैं।

तीसरा कार्य—कार्यक्षमता और रोग-निरोधकी शक्ति—पहले दोनो-की अपेक्षा कुछ जटिल है। जितने भी खाद्य पदार्थ ग्रहण किए जाते हैं उन सबको इस उद्देश्यकी पूर्तिमे सहायक होना चाहिए, पर अगर छिलका निकालकर उन्हे बारीक किया गया है, मसाले आदि डालकर उन्हे जायके-दार बनाया गया है या काफी भूनकर या अधिक पकाकर तैयार किया गया है तो इस उद्देश्यकी पूर्तिमे वे सहायक नही हो सकते, क्योकि इस प्रकार तैयार करनेमे उनका रक्षात्मक तत्त्व नष्ट हो जाया करता है। फलो और तरकारियोमे, यदि उन्हे कच्चा खाया जाय तो, खनिज लवण और विटामिन अधिक मात्रामे मिलते हैं, फिर भी केवल तरकारियो

और फलोसे काम नही चलता। जब चोकरदार आटे और मधुकी जगह मैदेकी रोटी और दानेदार चीनी खाई जायगी तो अधिक मात्रामे फल-तरकारिया खानेपर भी कार्यक्षमता और रोग-निरोधकी शक्तिका कायम रहना मुश्किल होगा।

संतुलनका अभाव

अगर बच्चोके आहारमे उपर्युक्त सतुलन न वरता जाय, एक वर्गका भोज्य पदार्थ आवश्यकतासे अधिक और दूसरे वर्गका आवश्यकतासे कम दिया जाय तो उक्त तीनो प्रकारके कार्य समुचित रूपमे सपन्न नही होगे और उनके अस्वस्थ हो जानेकी वहुत अधिक समावना रहेगी। आवश्यकतासे अधिक खिलाइए या कम, दोनो ही अवस्थाए अस्वस्थताका कारण हुआ करती हैं और इनमेसे प्रत्येक दूसरीके बुरे असरको और वढा देती है। आजकल साधारणत जो खाद्य पदार्थ दिए जाते है उनमे ये दोनो वातें मौजूद रहती हैं, इसलिए कम या अधिक मात्रामे वच्चोमे अस्वस्थताका रहना कोई आश्चर्यकी वात नही है।

आजकल बच्चोको श्वेतसार और शर्करावाले पदार्थ अधिक दिए जाते हैं। अन्य आवश्यक तत्त्वोंके न होनेसे एक तो यो ही वे हानिकारक हो जाते हैं, दूसरे उन्हे जिस ढगसे तैयार किया जाता है उसमे उनका सारा खनिज लवण और विटामिन नष्ट हो जाता है। उदाहरणके तौरपर रोटी ही ले लीजिए। चोकरदार आटेकी रोटीमे वी० श्रेणीके विटामिन काफी मात्रामे रहते हैं जो इसे पचानेमे सहायक होते हैं, अगर अधिक मात्रामे खा लीजिए तो भी इसे पचानेके लिए शरीरसे वी० विटामिनका अपहरण नही करना पडता, पर मैदेकी रोटीमे पचानेवाला वी० विटामिन नाम-मात्रका होता है, इसलिए इसे खानेपर, विशेषकर अधिक मात्रामे खानेपर, पचानेके लिए शरीरका वी० विटामिन लेना पडता है जिससे शरीरमे इस विटामिनका अभाव हो जाता है जो कब्ज या नाडी-सस्थानके रोगोका कारण

होता है।

जब बच्चेके शरीरमे खनिज लवणो और विटामिनोंकी कमी हो जाती है तो काफी मात्रामे कार्बोहाइड्रेट और प्रोटीन खिलानेपर भी वह सम्यक् रूममे अपना काम नही कर सकता। कार्यक्षमतामे कमी आनेके कारण शरीरमे मल एकत्र होने लग जाता है—ठीक उसी तरह जिस तरह प्रोटीन और कार्बोहाइड्रेट अधिक मात्रामे खिलानेपर होता है। शक्तिकी इस कमीके कारण जुकाम, कब्ज, खासी, टौंसिलकी वृद्धि, पायरिया आदि रोग हो सकते हैं। बच्चोंके आहारके सबधमे विचार करते समय इस कमीपर ध्यान देना बहुत आवश्यक है।

उपवासका उद्देश्य

अगर बच्चेमे अस्वस्थता स्पष्ट रूपमे प्रकट हो जाय तो उसके सारे शरीरकी सफाई आवश्यक हो जाती है और इसी स्थलपर उसके उपवासका प्रश्न उपस्थित होता है। शरीरको पुन सम्यक् रूपमे कार्य करने योग्य बनानेका सबसे अच्छा और सरल उपाय उपवास ही है, फिर भी यह अच्छी तरह समझ लेनेकी बात है कि केवल उपवास सब कुछ नही कर लेगा।

जो कमी होती है वह कई प्रकारकी हो सकती है और वह अधिक मात्रा-मे भी हो सकती है, इसलिए साधारण स्थितिमे उससे लबा उपवास कभी न कराया जाय और उपवासके बाद इस प्रकारका भोजन दिया जाय जिसमे कमी बहुत कुछ पूरी हो जाय। इस भोजनमे तरकारिया, फल, चक्कीके चोकरदार आटेकी रोटी और शुद्ध दूध हो। ऐसा भोजन न होनेपर उपवास-का सारा प्रभाव नष्ट हो जायगा।

कुछ लोगोंकी शिकायत है कि बार-बार उपवास करानेपर भी सर्दी, खासी आदिसे बच्चेका पिड नही छूटता; किंतु बार-बार उपवास कराना भी ठीक नही है; क्योंकि उपवासका मतलब यह नही है कि एक बार करानेपर जितना लाभ हुआ तीन बार करानेपर उसका तिगुना लाभ होगा।

प्राय इसका परिणाम उलटा भी हो जाता है; क्योकि बच्चेको अपना स्वास्थ्य बनाए रखकर बढना भी है। एक उपवास करनेके बाद दूसरा उपवास कमीकी मात्रा और बढा दे सकता है जिससे स्थिति ऐसी खराब हो जा सकती है कि विकार जितना हानिकारक होता उससे कही अधिक हानिकारक उपवास हो जाता है।

तीव्र रोगमे तापमान बढा हुआ होनेपर उपवास अनिवार्य हो जाता है, जीर्ण रोगोंमे उपवास और उसके अनतर युक्त-आहार स्वास्थ्य-लाभमे विशेष रूपसे सहायक होता है। बच्चोको बार-बार उपवास न कराया जाय; अगर उनका खान-पान ठीक रहे तो उपवासकी जरूरत भी महसूस न होगी।

आहारमें क्या और क्या नहीं ?

एक वर्षकी अवस्था हो जानेपर प्राय बच्चेका स्तन-पान बद होने लगता है। साधारण बच्चोको इसकी उतनी जरूरत भी नही रहती, क्योकि इस अवस्थामे उन्हे गायका दूध और श्वेतसार पचाने योग्य शक्ति प्राप्त हो जाती है। इस समय सबसे बडी समस्या यह होती है कि बच्चेको कैसे खिलाया जाय, क्योकि बडी-बडी भूलें होती रहनेपर रोगका होना निश्चित होता है। दो वर्षकी अवस्था होनेतक बच्चेका सर्वोत्तम आहार गायका दूध और पूर्ण गेहू है, और कोई चीज खिलानेकी जरूरत नही है। बच्चेका भोजन जितना सादा और प्राकृतिक होगा उतना ही उसके स्वास्थ्यके लिए अच्छा होगा।

उन्हे कुछ-न-कुछ खाते रहनेके लिए न देकर अधिक-से-अधिक तीन बार खिलाया जाय। पकवान-मिठाई कभी न दी जाय और फल दिनभर खाते रहने और जायका लेनेकी चीज न मानकर आहार माना जाय। अगर उन्हे नाश्तेका आदी न बनाया जाय तो उन्हे इसकी चाह भी न होगी।

बच्चोको भरसक दानेदार चीनी न दी जाय, क्योकि इससे उनकी रुचि विकृत हो जाती है और बादमे तरह-तरहकी परेशानिया होती हैं। खाद्य पदार्थकी दृष्टिसे भी यह अच्छी नही होती। मिर्च-मसाले आदि खानेपर तो यह विकृति और बढ जाती है। वे इनके इस कदर आदी हो जाते हैं कि न तो उन्हे सादे खाद्य पदार्थोके स्वादका ज्ञान होता है और न वे उन्हे खाना ही स्वीकार करते हैं। फलो आदिकी ओर भी उनकी प्रवृत्ति नही होती। परिणामस्वरूप वे प्राकृतिक लवणसे वचित हो जाते हैं और यही स्वास्थ्य खराब होनेका मुख्य कारण होता है। साधारण व्यक्तियोको ऐसे बच्चे स्वस्थ जान पडते हैं, पर दरअसल उनका स्वास्थ्य जैसा होना चाहिए उसका आधा भी नही होता।

मादक द्रव्योंसे हानि

बच्चोको कहवा या चाय कभी न दी जाय। बडोको भी इनसे नुकसान पहुचता है। इनसे बच्चोकी बाढ मद पड जाती है और इनसे प्राप्त होनेवाली क्षणिक उत्तेजना और सुस्थता नाडी-सस्थानके लिए बहुत हानिकारक होती है। बढते हुए बच्चेके लिए तो कहवा तबाकूकी ही तरह हानिकारक होता है।

मद्य पिलानेके सबधमे चेतावनी देना कुछ लोगोको अजीब-सा मालूम होगा, पर बहुतसे लोग दर्द होनेकी हालतमे तथा इस तरहके अन्य अवसरोपर मद्य पिला दिया करते हैं। ऐसे बच्चे जल्द ही मृत्युके शिकार हो जाते हैं। कुछ लोग निश्चित होकर काम करने तथा उनके कारण होनेवाली परेशानियोंसे बचनेके लिए अफीम आदि खिलाकर उन्हें सुला देते हैं, पर बच्चे इस प्रकारके द्रव्योको सहन नही कर सकते और इसके परिणामस्वरूप बहुतसे बच्चे ऐसी नीदमे सोते हैं कि फिर कभी जागनेका नाम ही नही लेते। बच्चोको ऐसी चीजें न खिलानेका नियम ही बना लीजिए और हमेशा याद रखिए कि बच्चोको शात करनेवाली चीजें विषैली ही होती

हैं। जिन वच्चोकी देख-भाल अच्छी होती है उन्हे ऐसी चीजोंके सहारे शात रखनेकी आवश्यकता भी नही प्रतीत होती।

नमक-मसाले-चीनी देनेकी जरूरत नहीं

वच्चोको नमक देनेकी भी आवश्यकता नही है, हाला कि अत्यल्प मात्रामे वह हानिकारक भी नही होगा। नमक खाना भी एक आदत है और जब इसमे अति होती है तो इससे वहुत-सी बुराइया पैदा होती हैं।

चीनी-मिसरीके वदले वच्चोको शहद, अजीर, खजूर, किशमिश आदि मीठे फल या इनको भिगो या उबालकर निकाला हुआ रस दिया जा सकता है। जिन वच्चोको ये फल मिलते हैं उन्हे चीनीकी चाह भी नही होती। इन्हे वे कृत्रिम चीनीसे अधिक पसद करते और ये फल श्वेतसारीय खाद्य पदार्थोंका स्थान भी ग्रहण कर लेते हैं।

खाद्य पदार्थ

खाद्य पदार्थोंके पोषक तत्त्वोके सवधमे वहुत कम लोगोको जानकारी होती है। वच्चोको लवण, प्रोटीन, शर्करा, चिकनाई और शर्कराके अभावमे श्वेतसारकी आवश्यकता होती है। दूधमे श्वेतसारके अतिरिक्त और सव पदार्थ होते हैं। एक वारके भोजनमे सिर्फ फल रहे और दो वार श्वेतसार-वाले पदार्थ दिये जाय। दूध इन सवके साथ या एक या दो वार दिया जा सकता है, पर मात्रा अधिक न हो, क्योंकि वह स्वय पूरा आहार है।

दो वर्षकी अवस्था होनेतक श्वेतसार केवल पूर्ण गेहूके रूपमे दिया जाय। मैदेकी रोटी न दी जाय, क्योकि इससे न तो पोषण प्राप्त होता है और न सतुष्टि ही। यह इतने स्वादहीन, नीरस और गेहूके प्राकृतिक लवणसे वचित होता है कि सतुष्टिके लिए इसे अधिक मात्रामे खाना आवश्यक हो जाता है। चोकरदार आटेकी बनी चीजोकी थोडी मात्रासे ही बच्चे सतुष्ट हो जायगे, पर मैदेकी चीजें अधिक [illegible]

न होगे। चावलके सबधमे भी यही बात है। लाल चावल पालिशदार चावलसे इतना अच्छा होता है कि दोनोमे कोई तुलना ही नही हो सकती।

दूसरा वर्ष पूरा हो जानेपर श्वेतसारकी और चीजें दी जा सकती हैं, पर वे ऐसे रूपमे दी जाय कि बच्चोंको उन्हे खूब चबानेके लिए बाध्य होना पडे। दूध ऐसे पदार्थोके साथ न देकर पहले या पीछे दिया जाय। श्वेतसार-वाले पदार्थोके साथ अम्लवाले फल कभी न दिये जाय। केवल मजबूत और खुली हवामे रहनेवाले बच्चे ऐसा योग बर्दाश्त कर सकते हैं, कमजोर बच्चोके लिए यह योग हानिकर होता है, पर इसका मतलब यह भी नही है कि पुष्ट बच्चोको यह योग बराबर या बार-बार दिया जाता रहे। फल खाकर दूध पीना अच्छा भोजन है। फलके साथ चीनी न दी जाय। अगर बच्चे शर्करा पसद करते हो तो भी मीठे फल दीजिए।

डेढ सालकी अवस्था होनेतक बच्चोंको चबाना सीख जाना चाहिए। मीठे फलोको चबाना आवश्यक है इसलिए उनके चबाने योग्य न होनेतक उन्हे सिर्फ उनका रस दिया जाय। केला भी चबाने योग्य होने पर ही देना चाहिए। कच्चे केलेमे श्वेतसार ही होता है, पर पकनेपर श्वेतसार नामका ही रह जाता है।

अगर बच्चोको मास खानेका चस्का न पडे तो यह उनके लिए कल्याणकर ही होगा। चार सालकी अवस्था होनेके पहले तो मास देनेका खयाल भी नही करना चाहिए। बच्चोके लिए अडा माससे अच्छा होता है, पर उन्हे देना आवश्यक नही है। दूधसे उन्हे काफी प्रोटीन मिल जायगा। पहले बहुत थोडी मात्रामे ही अडा दिया जाय, दूधके साथ अडा कभी न दिया जाय, हा, फलो और तरकारियोंके साथ दिया जा सकता है। दूधके साथ अडा देनेपर प्रोटीनकी मात्रा बहुत बढ जाती है जिससे रोग उत्पन्न हो सकता है।

गिरी भी खूब चबानेकी आदत होनेपर ही दी जानी चाहिए। इसका योग भी अडे-जैसा ही हो। छह सालसे कमके बच्चेको एक-सवा तोलेतक

गिरी दी जा सकती है। बच्चे गिरी बहुत कम चबाते हैं इसलिए अधिक मात्रामे कभी न दी जाय। दो सालकी अवस्था होनेके पहले मक्खन या घी भी न दिया जाय। मक्खन आसानीसे पच तो जाता है, पर घनीभूत होता है। दूधसे ही काफी चिकनाई मिल जायगी।

मात्रा क्या हो ?

यह प्रश्न पुन उपस्थित होता है कि बच्चोको कितना खिलाया जाय। इसका उत्तर हम नही दे सकते, केवल इतना कह सकते हैं कि तीन बारके भोजनमे उन्हे पूरा पोषण मिल जायगा। कुछ लोगोको विष भी सह्य हो जाता है और कुछ दिनोतक इसका कोई बुरा फल प्रत्यक्ष नही होता, पर अगर उसका सेवन जारी रहे तो वह बरबाद करके ही छोडता है। अतिभोजनका भी यही हाल है।

अस्वस्थताके चिह्न

मा-बाप अपने बच्चेकी हालत खूब समझते हैं और माताको तो आगतुक खतरेको समझने योग्य होना ही चाहिए। अगर बच्चेके स्वभावमे कोई अतर देख पडे तो वह रोगका ही सूचक होगा। कुछ बच्चोका स्वभाव रोग होनेके पूर्व बहुत मधुर हो जाता है, पर अधिकाश इतने चिडचिडे हो जाते हैं कि सारे परिवारकी जिदगी हराम कर देते हैं। रोगका हमला होनेके पहले सास गदी और गरम निकलने लगती है, जीभका रग बदल जाता है और चेहरा तमतमा जाता है। चिह्न चाहे जैसे भी प्रकट हो खिलाना फौरन बद कर दीजिए। इससे रोगकी प्रगति रुक जायगी। ये चिह्न खराब पाचनके ही सूचक होते हैं। अग्निमाद्यकी अवस्थामे खिलाना बहुत बडी गलती है और निर्दयताका काम है, क्योकि इससे कष्ट बहुत बढ जाता है। अनुचित भोजनसे ही ये चिह्न प्रकट होते हैं और अति-भोजन ही मुख्य कारण होता है। इसका उपाय भी बहुत साधारण है—कम खिलाना।

जीभपर मैल जमना अतिभोजनका ही परिणाम है। अगर जीभ साफ है तो समझिए कि पाचनक्रिया ठीक तरहसे हो रही है; अगर साफ न हो और रग गुलाबी लाल हो तो यह अतिभोजनका सूचक होगा, अत जीभ साफ न होनेतक मात्रा घटाये रखिए। अगर जीभके पार्श्व और अग्र भागमे दाने निकले हो तो यह महास्रोतके क्षोभका कारण होगा और इसके लिए भी आहारकी मात्रा कम करना आवश्यक है।

अगर मा-बाप इन सकेतोपर ध्यान दे तो उन्हे बच्चेके आहारकी उचित मात्राका शीघ्र ही ज्ञान हो जायगा। बच्चेका स्वास्थ्य खराब होना उनके अज्ञान और असफलताका ही परिचायक होगा।

तीन वर्षकी अवस्था हो जानेपर बच्चोको सलाद अर्थात् कच्ची तरकारिया जैसे गाजर, टमाटर, पालक, खीरा, ककडी आदि भी दिया जा सकता है, क्योकि इस अवस्थामे वे खूब चबाकर खाने योग्य हो जाते हैं। सात-आठकी अवस्था हो जानेपर वे मा-बापका आहार मजेमे अपना सकते हैं, बशर्ते कि उनका आहार सादा हो। उत्तेजक आहार मिलनेपर या भोजनकी मात्रा अधिक होनेपर उनमे यौन-प्रवृत्ति समयसे पहले ही उत्पन्न हो जाती है और वे लुक-छिपकर और कभी-कभी प्रकट रूपमे भी बुरे काम करने लगते हैं। अगर मा-बापका खान-पान सादा न हो तो बच्चोका सयत और सादा आहार कुछ दिन और चलाया जाय जिसमे वे उसके अच्छी तरह आदी हो जाय। हमेशा याद रखिए कि सादगी और सयम ही बच्चोकी सतोषजनक प्रगतिका मूलमत्र है।

बच्चोंकी सुरक्षा

शिशुओकी स्वास्थ्यकी देख-भालका यह अभिप्राय है कि उनके आहार, स्वच्छता तथा उनके निमित्त किए जानेवाले प्रत्येक कार्यमे उनकी स्वास्थ्य-रक्षाका पूरा-पूरा ध्यान रखा जाय। पाश्चात्य देशोमे, राष्ट्रके भावी नागरिक होनेके विचारसे बच्चोके लालन-पालनपर बहुत अधिक ध्यान दिया जाता है, पर अज्ञान और निर्धनताके कारण भारतमें माताए बच्चोकी ओर समुचित ध्यान नही दे पाती जिसका परिणाम यह होता है कि ससारके अन्य देशोंकी अपेक्षा अधिक बच्चे यहा रोग और मृत्युके शिकार हुआ करते हैं।

गिरना और ठोकर लगना

घरमे रोज छोटी-मोटी कितनी ही घटनाओंके घटित होनेका खतरा बना रहता है। शुरू-शुरूमे खडा होकर चलनेका प्रयत्न करते समय या घरमें रखी किसी चीजसे ठोकर खाकर बच्चे प्राय गिरते हैं। आमतौरसे लोगोकी यह धारणा है कि अगर बच्चा चलते समय किसी चीजसे उलझकर या ठोकर खाकर गिरता है तो यह तो उसके चलना सीखनेकी प्रक्रियाका एक अगमात्र है। यह ठीक है, पर उसी हालतमे जब उसे ऐसी घटनाओका बार-बार शिकार न होना पडे, क्योकि बार-बार ऐसा होनेपर उसका नाडी-सस्थान कमजोर पड जायगा और उसके मनमे अनिश्चयकी भावना बद्ध-मूल हो जायगी।

यों तो ऐसे बहुत कम लोग होगे जिनके कमरोमे सगमरमरका फर्श हो या पालिशदार गच हो, पर जिनके कमरे ऐसे हो उनको फिसलकर गिरते रहनेसे बच्चेको बचानेके लिए कमरोमे साफ दरी या जाजिम बिछवा देनी

चाहिए। अगर जमीन कच्ची है तो वह साफ और सूखी रहनी चाहिए वरना बच्चेके स्वास्थ्यपर इसका बहुत बुरा असर होगा। कुछ लोग चलना आरभ करनेके पहलेसे ही बच्चेको जूते-मोजे पहनाने लगते हैं। अच्छा तो यह है कि उन्हे ये चीजें पहनाई ही न जाय, अगर पहनायी भी जाय तो दो बातोंपर विशेष रूपसे ध्यान दिया जाय—एक तो यह कि जूतेकी बनावट ऐसी हो कि वह बच्चेके सीधा खडा होकर चलनेमे सहायक हो और दूसरी यह कि वह ऐसा कसा न हो कि पैरके विकासमे बाधक हो। पैंट या पाजामा पहनानेपर वह कमरकी पट्टीसे न बाधा जाय, क्योकि ढीला पड जानेपर वह बच्चेके गिरनेका कारण होगा, इसलिए पट्टी गलेवाली ही लगाई जाय।

बच्चोकी इस अवस्थामे गाडीनुमा खिलौना उन्हे गिरनेसे बचाने और चलनेमे भी सहायक हो सकता है, पर यह भी उन्हे बहुत दिनोतक मदद नही दे सकता। आरभमे तो वे इसकी ओर बहुत आकृष्ट होते हैं, पर पाच-सात दिनोंमे ही इसकी ओरसे उन्हे विरक्ति हो जाती है और स्वतत्र रूपसे चलने-फिरनेका प्रयास करने लगते हैं। इस हालतमे घरके सामानके सबधमे काफी सावधान रहनेकी जरूरत है। घरमे ऐसी कोई नोकदार चौकी या मेज न हो जिसकी ऊचाई बच्चेके बराबर हो। चलने-फिरनेकी धुनमे बच्चे ऐसी चीजोकी ओर ध्यान नही देते और टकराकर सिर घायल कर लेते हैं। साहसिक कार्योंकी ओर बच्चोकी बहुत अधिक प्रवृत्ति हुआ करती है इसलिए कमरेकी सजावटका खयाल छोडकर खतरेकी सभी चीजोको अन्यत्र रख देना चाहिए या इस प्रकार रखना चाहिए कि चोट या ठोकर लगनेकी सभावना न रहे।

बिजली और सीढ़ियां

शहरके बच्चोके लिए बिजली और सीढिया कम खतरनाक नही हुआ करती। सीढियो और छतसे गिरकर आहत हुए बच्चे प्राय अस्पताल पहुचते देखे जाते है जिनमेसे अधिकाशकी चोट घातक ही हुआ करती है।

अचानक घटना हो जानेके वाद कही लोगोको खतरेका ज्ञान हो पाता है। बिजलीका प्लग इतनी कम ऊचाईपर न हो कि वच्चेका हाथ आसानीसे पहुच जाय; क्योकि चमकीली और आकर्षक वस्तु देखनेपर अपनेको रोक सकना उसके लिए सभव नही होता। प्रथम सतान घटनाओका शिकार अधिक होती है, क्योकि माताको वच्चेकी प्रकृति और उसकी प्रगतिका विशेष अनुभव नही रहता। वच्चा अभी भोजनालयमे शातिपूर्वक वैठा दिखाई देगा और दूसरे ही क्षण, माताका ध्यान हटते ही सीढिया चढता हुआ या उनसे लुढकता दिखाई देगा। वच्चेके पास ऐसा कोई साधन तो होता नही कि वह आपको पहले ही वतला दे कि अव वह क्या करना चाहता है, इसलिए सीढियोका मार्ग वदकर या और कोई ऐसा उपाय कर खतरा दूर कर देना चाहिए।

आग और जल

आग और जल भी प्राय खतरे का कारण हुआ करते हैं। प्रकाशके चमकसे आकृष्ट होकर वच्चे उसकी तरफ वडी तेजीसे वढते हैं। गरम दूध और जल भी खतरा कर बैठते हैं। इन सब चीजोसे उन्हे दूर ही रखना अच्छा है। उनको शात बैठे देखकर इस भ्रममे न रहिए कि वे उनमे हाथ न डालेगे। हौज, कुए और तालावके पास भी वे न रखे जाय। वे कुतूहल-वश उनकी ओर आकृष्ट हो अपनेको घोर सकटमे डाल दे सकते हैं। वागमे भी बच्चेको अकेला छोडना ठीक नही। अगर घासपर शात वैठा हो तो वह इससे ही सतुष्ट न होकर मौका मिलते ही कोई अनिष्टकर पदार्थ चटपट मुहमे डाल ले सकता है।

जवतक वच्चा पाच-सात महीनेका न हो जाय, उसके सिरके नीचे तकियेका सहारा भूलकर भी न दें। तकियेसे उसे सास लेनेमे कठिनाई होती है और कभी-कभी दम घुट जानेकी भी आशका रहती है। विस्तर-पर सपाट लिटा देना ही उसके लिए स्वास्थ्यकर होता है। हा, उसके सोते

समय चारपाईपर अगल-बगल कुछ रोक अवश्य हो जिसमे उसके लुढककर गिरनेकी सभावना न रहे। कपडेमे सेफ्टिपिन न लगाई जाय; क्योकि वह आसानीसे निकालकर मुहमे पहुचाई जा सकती है। सर्दीसे बचानेके खयालसे गुलूबद देना भी ठीक नही, क्योकि वह बारबार जमीनपर गिरकर गदा होता रहता है और बच्चे उसे मुहमे डालकर जमीनकी गदगी अदर पहुचाया करते हैं। अगर आहार, निद्रा आदिकी आवश्यकतापर समुचित ध्यान दिया जाय तो सर्दीसे बचानेके लिए गुलूबदकी कोई आवश्यक्ता भी नहीं रहेगी।

छोटे खिलौने, छुरी आदि

बच्चोके जीवनमे एक ऐसी अवस्था भी आती है जब वे प्रत्येक वस्तु मुहमे डाल लिया करते हैं; इसलिए मुद्रा, मनका या इस आकारका कोई खिलौना उन्हे नही देना चाहिए जिसे वे मुहमे डालकर गलेमे फसा लें। बच्चे प्राय चने या मटरका दाना नाकमे घुसाकर ऊपर चढा लिया करते हैं जिसे निकालनेके लिए डाक्टरकी सहायता लेनी पडती है। अगर मिठाई दी जाय तो टुकडे या चूर करके दी जाय जिसमे वे एक ही बारमे गलेके नीचे उतारनेकी कोशिशमे गला न रूघ लें। सूजा, छूरी, कैंची आदि उनकी दृष्टि और पहुचसे बिलकुल परे रहनी चाहिए , क्योकि मौका मिलते ही वे उनका उलटे-सीधे, जगह-बेजगह प्रयोग करने लग जाते है। इस स्थलपर एक पडोसी सज्जनकी बात याद आ रही है। उनके शैशवकालमे एक बार उनके पिता सूजेसे किसी अखबारकी फाइल लगा रहे थे और वे बैठे-बैठे अपने पिताका यह कार्य देख रहे थे। किसी जरूरी कामसे पिताके हटनेपर उन्हे सूजेका प्रयोग करनेकी सूझी और अखबार या और किसी चीजपर प्रयोग न कर अपनी एक आखपर ही कर लिया जिसके फलस्वरूप वे जीवनभरके लिए एकाक्ष हो गए हैं।

स्थान और परिस्थितिके अनुसार ऐसे और भी कई खतरेके कारण हो

सकते हैं। समव है, ये दुर्घटनाए घटित न हो, पर घटित नही होगी, ऐसा भी नही कहा जा सकता। इसलिए माताको बच्चेके सबधमे सर्वदा सतर्क रहना चाहिए। कहा जा सकता है कि वह अपने सिरमे पीछेकी ओर दो आखें नही बढा ले सकती कि हमेशा बच्चेको देखती रह सके। हम मानते हैं कि गृहिणीके लिए गृहकार्योको करते हुए बच्चेकी हर एक हरकतपर नजर रखना समव नही हो सकता, पर यह तो हो ही सकता है कि घरको और बच्चेको भी बहुत कुछ ऐसी स्थितिमे रखा जाय कि खतरेकी बहुत कम समावना रहे। बच्चेकी सुरक्षासे बढकर किसी पारिवारिक या घरेलू कार्यका महत्त्व नही हो सकता।

बच्चेके प्रथम दो वर्ष

नवजात शिशु कितना असहाय होता है और अपने तथा ससारके बारेमे कितना अनभिज्ञ, इसके बारेमे आपने कभी सोचा है? अपने अगो-पर उसका करीब-करीब कोई अधिकार नही होता, अपनी आखोको वह चीजोपर जमा नही पाता, उसके कानमे जो आवाज पडती है उसका वह अर्थ नही समझता, न वह दुर्गंध-सुगधमे ही कोई अतर कर पाता है। उसकी रसनेंद्रियको स्वादका पता नही होता और स्पर्शेंद्रिय भी सर्वथा अविकसित होती हैं। ऐसे अविकसित ज्ञानेंद्रियवाले बच्चेको तो मनुष्य ही न कहना चाहिए। मनुष्य शब्द पूर्णताका बोधक है। बच्चा मनुष्य बननेके रास्तेपर होता है। यह सही है कि मनुष्यको मनुष्यकी सज्ञा दिलानेवाली ज्ञानेंद्रियो-का नवजात शिशु स्वामी नही होता, पर आप लौकी या कुम्हडेसे उसकी तुलना नही कर सकते। बच्चेमे चेतना होती है, नैसर्गिकबुद्धि उसका पथ-प्रदर्शन करती है, जिसकी प्रेरणाके अनुसार वह अपने सारे कार्य करता है। नैसर्गिकबुद्धि निम्नलिखित बातोंसे प्रकट होती है —

भूख—जब भूख लगती है तो वह रोने लगता है, वह रोते-रोते अपने-को थका डाल सकता है।

भय—बच्चोको तीन प्रकारका भय होता है—जोरकी आवाजका, गिरनेका और दर्दका।

क्रोध—हिलने-डुलने, हाथ-पैर फेंकनेकी कठिनाई होनेपर बच्चेको बडा क्रोध आता है। जबरदस्ती पकडे रहनेपर वह क्रोधके मारे कापने-सा लगता है।

प्रेम—हलराने-दुलरानेपर प्रेमकी किरणें बच्चोंके मुखपर प्रस्फुटित होने लगती हैं।

भयका आरंभ

नये पैदा हुए बच्चेका यह सही चित्र है। इतनी-सी पूजी लेकर बच्चा पैदा होता है और उसकी उस पूजीको बढाकर हमे उसे भविष्यका मनुष्य बनाना होता है और उसकी इस पूजीका हम कैसा उपयोग करते है इसीपर उसका भविष्य निर्भर है। बच्चेके बनने-बिगडनेका बहुत कुछ काम उसके जीवनके प्रथम दो वर्षोमे ही समाप्त हो जाता है। बच्चेकी इस प्राथमिक शिक्षाके सबधमे हमारे समाजमे अनेक गलत धारणाएं घर कर गई हैं जिनकी वजहसे बच्चेको बहुत नुकसान होता है, यहातक कि उसकी नाडिया दुर्बल हो जाती हैं। उदाहरणके लिए—हम सभी जानते हैं कि, बच्चेको तेज, कडी आवाजसे भय मालूम होता है और कोई माता, जो नियमकी लकीरकी फकीर है, इसलिए कि बच्चेको रातभर चुपचाप सोनेकी आदत पडे, रातको एक निश्चित वक्तपर रोशनी बुझा देती है। दूसरी ही रातको बत्ती बुझानेके थोडी देर बाद बिजली कडकने लगती है और बादल गरजने लगते हैं। बच्चा अधेरेमें अपनी माको देख नही पाता, वह समझता है कि कमरेमे या अपने बिछावनपर वह अकेला ही है। फिर बादल गरजते हैं, बच्चा भयसे सहम जाता है, वह आख फाड-फाडकर देखता है, पर उसे चारो ओर अधेरा-ही-अधेरा नजर आता है। उसे अधकार भय लगने लगता है, वह अधकारको ही उस भयकर शब्दका कारण समझता है और रोने-चिल्लाने लगता है। माता इसे समझ नही पाती, इस विशेष रुदनपर ध्यान नही देती और वह सोचती है कि बच्चा यो ही रो रहा है, चिल्ला-चिल्लाकर, अपने आप चुप हो जायगा, पर भय एक शक्तिशाली राक्षसके समान है—बच्चा उसके डरके मारे जोर-जोरसे चिल्लाता ही रहता है और जब कभी अधेरेमें वह जागता है अधेरेके डरसे रोने लगता हैं। इस प्रकार दो-चार बार रोनेपर मा समझ लेती है कि बच्चेका ऐसा स्वभाव ही पड गया है। वह दिन-रात गोदमे रहनेके लिए जिद करने लग गया है और

बच्चा जिद्दी न हो जाय इसलिए मा उसके रोनेपर ध्यान नही देना चाहती। बच्चा रोते-रोते थक जाता है, उसकी नाडिया विच्छिन्न हो जाती हैं। ऊपरसे उसे अपनी मांका क्रोध भी सहना पडता है। कभी-कभी उसकी मा उसके चिल्लानेपर क्रुद्ध होकर उसे उठा लेती है और क्रोधमे प्यार तो होता ही नही, यो ही हिलाती-डुलाती है। भला इससे बच्चा चुप हो सकता है? माको अधिक क्रोध आता है और वह उसे बिछावनपर पटक देती है जिससे बच्चेका रहा-सहा नालीबल भी नष्ट हो जाता है।

देखा आपने, बच्चा तो घड-घड, तडतड़-की आवाजसे घबराकर उठा, उसे अंधेरा ही अधेरा दिखाई दिया, वह डरा और सहायताके लिए चिल्लाया; पर 'मागी रोटी, मिली लाठी'के अनुसार जब उसे रक्षा और प्यारके बदले झकझोर और क्रोध मिला और उससे जो बच्चेका मात्र आधार है वो उसे एक और बड़े भयने घेर लिया। यह नया डर मृत्युसे भी अधिक भयावना होता है। वह अपनी मासे ही डरने लगता है, और सभवत वह जन्मभर अधकारसे डरता रहेगा और साथ-साथ अपनी मासे भी। ये ही बच्चे बढकर कायर, डरपोक, निराश, स्वाभिमानरहित व्यक्तियोंके रूपमे हमारे सामने आते हैं। उनमे किसी प्रकारका आत्म-विश्वास नही होता, और विना आत्म-विश्वासके भला जीवनकी किसी दिशामे भी कोई सफलता मिलती है? सबसे बुरी बात यह होती है कि उनमे उस प्यारका माद्दा नही रह जाता जिसपर कोई विश्वास कर सके; अत वे भावुकोका-सा जीवन व्यतीत करते हैं और फलस्वरूप दु ख और असफलताए उनके पल्ले पडती हैं।

स्वार्थपरता क्यों?

क्या आपने उस माताके भी दर्शन किये हैं जिसने अपने बच्चेपर अपने जीवनको न्योछावर कर दिया है और ऐसा करना उसके लिए उतना ही स्वाभाविक है जितना सास लेना? वह अपने बच्चेके लिए हर तरहका

इतजाम रखती है, वह अपने लाडलेको खिलाती है, हँसाती है, कसरत कराती है। उसका बच्चा, जिससे जो चाहे, कह सकता है। घरका हर एक आदमी उसकी सेवामे हाजिर रहता है। बच्चा अधिकारीकी तरह रहता है और सब लोग उसके मातहत बनकर।

ऐसा बच्चा आगे चलकर घमडी निकलता है। उसे किसी प्रकारका भय नही होता, आत्म-विश्वास और बढना उसके व्यक्तित्वकी विशेषता होती है। वह बेहद खुदगर्ज होता है। उसे तो यही सिखाया गया है न, कि दुनिया उसकी सेवा करनेके लिए ही बनी है। आजके सफल जीवन व्यतीत करते दिखाई देनेवाले बहुतसे लोग ऐसी ही शिशु-शिक्षाकी गलीसे गुजरते हैं। वे दुनियामे जो मिले उसे हडपते रहते हैं, उन्हे दूसरोके अधिकारोसे कोई मतलब नही, कोई वास्ता नही।

अच्छे गुणोंका अभ्यास

सभी बच्चे भौचक राहीकी तरह इस दुनियामे आते हैं। हमे सहृदयता एव शातिपूर्वक उनकी सहायता करनी चाहिए। तभी वे सुदर शक्तिशाली व्यक्तित्ववाले मनुष्य बन सकेंगे। ऐसे व्यक्तित्वके निर्माणका रहस्य बच्चोकी माको समझ लेना चाहिए और इसका समझना तभी सभव है जब माताए बच्चोके अत करणको समझनेकी कला जान लें।

तीन महीनेका बच्चा दुनियाकी चीजें पहचानना शुरू कर देता है। उसकी मा जब उसे प्यार करती है तो वह बदलेमे मुस्कराने लगता है। चार महीनेका होनेपर वह भी एक बच्चेको रोते देखकर उसका साथ देने लगता है।

जब बच्चा छोटा होता है तब उसके हाथकी चीज ले लीजिए वह जरा भी एतराज न करेगा, पर सात महीनेका होनेपर अपनी पसदकी चीज वह कभी देना न चाहेगा; पर जैसे तीन महीनेका बच्चा अपनी माके प्यारका बदला मुस्कराहटसे देने लगता है उसी तरह वह अपना घुनघुना या गेंद

अपनी माको उसके मागनेपर देना सीख सकता है। बदलेमे धन्यवाद पानेका सम्मान पानेकी आशा उसे उदार बनाती है, उसे ऊचा उठाती है। सुखमय ससार बनानेका स्वर्णसूत्र—लो और दो—उसे इस प्रकार हृदयंगम करा दिया जाता है जिसके कारण आगे चलकर उसके चरित्रमे उदारताका प्रवेश होता है और उसमे अपनेको काबूमे रखनेकी शक्ति जाग्रत होती है।

उस दिन मैंने बीस महीनेका एक बडा होनहार बच्चा देखा। लोगोंने उसे मुट्ठीभर फूल दिये और दूसरे बच्चोसे कहा उससे फूल मागे। उसने हर मागनेवाले बच्चेको एक-एक फूल दिया और अपनी माकी गोदमें चढकर उसने मुस्कराते हुए अपना अतिम फूल उसे दे दिया। उसकी मुस्कराहटमे मुझे स्वर्गकी-सी झाकी मिली।

जिस प्रकार कोई चीज देते समय बच्चा अपनेको गौरवशाली समझता है उसी प्रकार उसे कार्योंके सपादनमे भी गौरवका अनुभव करना सिखाया जा सकता है। यदि कोई अठारह महीनेका बच्चा अपने हाथसे खाने लगे और उसके इस कार्यकी समुचित प्रशसा की जाय तो वह कार्योंको पूर्णताके साथ करनेकी ओर अग्रसर होता है और इसमे उसे आनद आने लगता है। बच्चेका काम दिनभर खेलना ही है। यदि उसे खेलनेके प्रत्येक नये प्रयासके लिए उत्साहित किया जाय, उसकी सूझकी दाद दी जाय तो इसका अर्थ यह होता है कि उसके भावी जीवनमे उसके द्वारा बडे-बडे कार्य होनेकी हम नीव डाल रहे हैं। हमारे बढ़नेमे हमारे मित्रोकी शाबाशीका कितना हाथ रहता है ?

बच्चेको किसी कामसे रोकते समय बडी समझदारीसे काम लेना चाहिए। उस वक्त हमे भलीभाति समझ लेना चाहिए कि बच्चा जो कुछ कर रहा है उसमे हम बाधा पहुचाने जा रहे हैं। ध्यान रहे, कडी रोक-थामसे और ऐसी रोक-थामसे जिसका कारण बच्चा समझ नही पाता, बच्चेमे बगावतका भाव पैदा होता है। रोक-थाम अगर और कस दी जाय,

जिसके माने अत्याचारसे कम नहीं होते, तो आगे चलकर वही बच्चा अपने कुटुंबसे, समाजसे शत्रुता करने लगता है और मौका मिलनेपर देश-के साथ भी विश्वासघात तक कर सकता है।

हर एक माताको याद रखना चाहिए कि बच्चेको पूरी तरह समझना ही उसे प्यार करना है।

नेत्रोंकी रक्षा

जन्मके समय प्राय शत-प्रतिशत बच्चोकी आखें बिल्कुल ठीक रहती हैं, पर यह क्या तमाशा है कि ससार छोडनेके समयतक हम सबकी आखें किसी-न-किसी तरह खराब हो ही जाती हैं।

आंखकी बनावट

बहुतसे अच्छी आखोवालोके अधे होकर मरनेका एक खास कारण आखोकी नाजुक बनावट भी है, इस वजहसे इसमे बडी आसानीसे नुकसान पहुच जाता है। बचपनमे यह खतरा और भी ज्यादा रहता है।

आखोकी जिस खिडकीसे हम दुनियाको देखते हैं उसके बाहरी भागको बहिष्पटल कहते हैं। इससे ठीक पीछे एक प्रकारकी गाढी तरल, स्वच्छ, अत्यत पारदर्शक वस्तु रहती है। इसके ठीक पीछे मध्यपटल होता है जो पारभासक तो होता है, पर पारदर्शक नही। मध्यपटलके भीतरकी ओर अन्त पटल होता है। इसके और मध्यपटलके बीचका अतर भी एक स्वच्छ गाढी चीजसे भरा रहता है। जिन चीजोको हम देखते हैं उनपरका प्रकाश पारदर्शक और पारभासक पटलोद्वारा अत पटलपर पहुचना है। अत-पटल एक पतली झिल्लीकी तरह होता है जो नेत्रके गोलेपर चिपका रहता है। इससे दृष्टिसबघी नाडिया भी जुडी रहती हैं। अत पटलपर पडी प्रकाश-किरणोद्वारा जो चित्र बनता है उसकी छाप मस्तिष्कपर पडती है।

पोषणकी प्राप्ति

आखोकी तुलना फोटोके कैमरेसे की जा सकती है, फर्क इतना ही है कि कैमरा निर्जीव और आख सजीव होती है। आखोके स्वस्थ रहनेके लिए यह आवश्यक है कि उनकी बनावटमे कोई फर्क न पडे। उन्हे ठीक

भोजन मिले और आखोके कार्य करनेमे जो कचरा पैदा हो वह साफ होता रहे। शरीरके अन्य अगोके लिए ये दोनो काम रक्त-वाहिनी नलिकायें करती हैं, पर यदि रक्त आखोमे पहुच जाय तो उनकी पारदर्शकता ही नष्ट हो जायगी और देखनेमे दिक्कत होगी।

तब आखोको भोजन कैसे मिलता है? यह भी एक मजेदार किस्सा है। रक्त लाल और सफेद कणो तथा एक पारदर्शक तरल पदार्थका बना हुआ होता है। कण उसी सरल पदार्थमे तैरते रहते हैं। रक्त स्वयम् लाल नही होता, उसमे तैरते हुए कण उसे लाली प्रदान करते हैं। रक्तका यह स्वच्छ भाग आखोके चारो ओरकी नलिकाओसे निकलकर चक्षु-यत्रके प्रत्येक भागको भोजन पहुचाता जाता है और कचरा इकट्ठा करता चला आता है।

आखोको भोजन पहुचनेकी यह रीति वडी नाजुक है और मजा यह है कि उन्हे भोजन नही मिलता तो और अगोकी अपेक्षा उन्हे अधिक हानि पहुचती है। आखोंको पूर्ण भोजन प्राप्त हो इसके लिए यह आवश्यक है कि उन्हे सिर्फ रक्तका पारदर्शक भाग न मिले वरन् उन्हे पूर्ण भोजन-युक्त रक्त मिले। जब यह नही होता और जो चीज मिलती है उसमे उसकी खूराकका पूरा सामान नही होता तब उनका लचीलापन नष्ट हो जाता है, वे ढीली और कोमल हो जाती हैं। उस वक्त उनमे आसानीसे नुकसान पहुच सकता है और नुकसान पहुचनेका मतलब है, कम दिखाई देना।

बच्चेका भोजन

अब देखिए कि जब रक्तमे शरीरके आवश्यक तत्त्वोमेसे कोई या कई तत्त्व नही होते तो आखोपर इसका क्या असर पडता है। विटामिन 'ए' को ही लीजिए। इसकी कमीसे चक्षु-यत्रके तालोंकी पारदर्शकता नष्ट होने लगती है। बच्चोको रतौंधी हो जाती है। उसका दिनमे भी देखना कठिन हो जाता है। उसे कम रोशनीमे साफ दिखाई नही देता,

तो चीजें स्पष्ट दिखें इसके लिए बच्चा आखकी मासपेशियोको सिकोडता है उनपर जोर डालता है। इससे वाहरकी तरफ वे कुछ उमर-सी आती हैं। यदि इसी तरह आखोपर जोर पडना जारी रहा और विटामिन 'ए' की कमी भी वनी रही तो आखोके गोले प्रकृत्या मुलायम होनेके कारण लबानमे कुछ वढ जाते हैं और बच्चेको दूरकी चीजें कम दिखाई देने लगती हैं। उसकी आखोका बहिष्पटल सूख जाता है। उसमे एक तरहकी चमक पैदा हो जाती है और अतमे उसमे सिकुड़न-सी पड जाती है। इसके वाद उसपर कुछ घुघले दाग पड जाते हैं और वहिष्पटल पतला पड जाता है। इसे अग्रेजीमे 'एरोपथलिमया' रोग कहते हैं। आखोके रोगोकी रोकथामके लिए अपने वच्चोमे सादी चीजे खानेकी आदत डालिए। आप उन्हे जो कुछ प्यारसे खिलायेंगी वे खुश होकर खायेंगे। यह तो आप जानती ही हैं कि विटामिन 'ए' दूध, दही, मक्खन, मलाई, सभी हरी तरकारियो, पीले रगके फलो और टमाटरमे खूब मिलता है।

कुछ और भी ऐसे भोजनतत्त्व हैं जिनके अभावसे बच्चोकी आखोपर बुरा असर पड़ता है। हालमे पता चला है कि भोजनमे विटामिन 'बी' की कमीके कारण बरौनी झडने लगती है और आंखोमे खाज चलती है। यदि इस विटामिनकी वहुत अधिक कमी हो जाय तो बच्चोको मोतिया-बिंदतक हो सकता है। विटामिन 'बी' शरीरकी समस्त नाडियोको सशक्त वनाता है। इसके अभावके कारण आखोसे सबद्ध नाडिया कमजोर हो जाती हैं। विटामिन 'बी' चोकरसमेत आटेकी रोटी, सतरेके रस, पालक, करमकल्ला, दूध, गाजर, केले और चोकरमे वहुत होता है।

भोजनमे विटामिन 'सी' की कमीके कारण कभी-कभी आखोके चारो ओरकी रक्त-नलिकाए फट जाती हैं और आख अपने स्थानसे च्युत होकर वाहरकी ओर निकल आती है। विटामिन 'सी' वाले प्रधान खाद्य हैं सेव, करमकल्ला, हरे मटर, सतरेका रस, नीबूका रस, प्याज, केला, चकोतरा, टमाटर, हरी मिर्च और आवला।

विटामिन 'डी'का सूर्यसे सबध है। इसकी भी बच्चेके स्वास्थ्यके लिए बडी जरूरत होती है। भोजनमे इस विटामिनकी कमीसे अनेक रोग होते हैं और खास तौरसे दूरकी चीज कम दिखाई देनेका रोग हो जाता है। ईश्वरकी कृपासे हमारे हिंदुस्तानमे सालभर सूर्य भगवान्के दर्शन होते हैं। बच्चेको दस मिनटतक सबेरेकी धूपमे खुले बदन रखनेसे उसके शरीरमे विटामिन 'डी'की कमी न होगी।

रक्त-चाप आदिसे हानि

बच्चोको ठीक भोजन न मिलनेसे उन्हे अक्सर रक्त-चापका रोग हो जाता है। यह रोग जिस बच्चेको होता है उसकी आखोको भी उचित भोजन नही मिलता, और आख उठने आदिका रोग होनेका हमेशा डर बना रहता है।

निमोनिया-जैसे भयकर रोग जब बच्चोको हो जाते हैं तो उनकी आखोको भी बहुत नुकसान पहुचता है। यह तो दिखाई देता है कि बच्चा दुबला होता जा रहा है, पर उसकी आखोको जो नुकसान पहुचता है वह जबतक आखें बिल्कुल गड्ढेमें न पहुच जाय, उनके चारो ओर काले छल्ले न पड जाय, तबतक सामने नही आता। इस वक्त उचित भोजन न मिलनेसे आखोके सौत्रिक ततु मुलायम हो जाते हैं, जिससे बहुधा पुतली एक कोनेकी ओर खिसक जाती है और नजर तिरछी हो जाती है। आखोमे रोहे पड जाते हैं जो बडी मुश्किलसे जाते हैं।

बच्चा जब बीमारीसे उठे तो उसे स्वास्थ्यकर भोजन देनेका बहुत खयाल रखना चाहिए ताकि उसका स्वास्थ्य ठीक एव शरीर पुष्ट हो जाय। स्वास्थ्य ठीक हो जानेपर बहुत बार रोगमे बिगडी आख भी ठीक हो जाती है।

बच्चा जब दो वर्षका हो जाय तब उसकी आखकी जाच करा ली जाय तो अच्छा है। अब ऐसा उपाय निकल आया है जिससे पढनेकी उम्रके

वहुत पहले ही उसकी आखें अच्छी तरहसे जाची जा सकती हैं। अक्सर, बच्चोकी खराब आखें उचित भोजन देने और आखोकी कुछ कसरत करा देनेसे ठीक हो जाती हैं।

उपचार

आखोके रोग दूर करनेके लिए जिसने जो कहा आखोमे डाल लिया, जो अजन बताया लगा दिया—ठीक नही है। सुकुमार आखोके साथ यह खेल करना वुरा है। किसी प्रकारकी तकलीफ होनेपर आखोको किसी अच्छे जानकारको ही दिखाना चाहिए। और यदि आपके बच्चेको ठीक भोजन मिले तो उसकी आखें स्वय स्वस्थ रहेगी।

तिरछी आखोमें एक तरफकी मासपेशिया कमजोर हो जाती हैं जिससे दूसरी ओरकी मासपेशिया पुतलीको अदरकी ओर खीचती हैं। अच्छी आखपर घटे आध घटेके लिए रोज पट्टी बाध देनेसे आखकी गडबडी अक्सर दूर हो जाया करती है। आख बाधकर बच्चेको दूसरे बच्चोके साथ खेलने देना चाहिए। बच्चेके भोजन करते वक्त आख बाधना ज्यादा लाभदायक है।

आत्मविकासका अवसर

मनुष्यका मस्तिष्क दुनियाकी सभी शक्तियोंसे अधिक शक्तिशाली है। अनिष्ट करने और कष्ट देनेवाली शक्तियोको मस्तिष्क ही मिटा सकता है, यह युद्धको समाप्त कर मनुष्यका जन्म-सिद्ध अधिकार स्वतन्त्रता और शाति दिला सकता है; पर मस्तिष्क है वहुत नाजुक चीज। शरीरसे तो वहुत ही अधिक नाजुक। आकडे बताते हैं कि सभी शारीरिक रोगोंसे पीडित व्यक्तियोकी सख्यासे मानसिक रोगियोकी सख्या अधिक है।

मनोवैज्ञानिकोका कहना है कि मानसिक विकासकी अवधिमे हमारे जीवनके प्रथम दो वर्षोंका वहुत महत्त्वपूर्ण स्थान है। यही माताकी कठिनाई उत्पन्न होती है। उसके लिए वच्चेको शारीरिकसे अधिक मानसिक स्वास्थ्य प्रदान करना कठिन होता है।

अनुभवका महत्त्व

नवजात शिशु टटोलकर अपना मुखद्वार पा सकता है और अपना अगूठा चूसने लग सकता है। बच्चा अपने जीवनके पहले कुछ सप्ताहोतक अपनी आखें किसी वस्तुपर गडा नही पाता। उसे अपना हाथ नही दिखाई देता, उसके मुहतक अगूठेके पहुचनेका कार्य स्वाभाविक रीतिसे हो जाता है। वह अपने हाथको इधर-उधर तेजीसे फेकता है और अतमे उसे उसका हाथ दिख जाता है जिसे वह मुहमे डालनेकी कोशिश करता है। इसके बाद वह चूसनेमें होनेवाली गतिका अनुभव करता है। उसके लिए इस अनुभवका महत्त्व किसी अन्वेषणसे कम नही होता। उसकी बढती हुई चेतनापर यह प्रकट होने लगता है कि वह ऐसी किसी चीजको चूस रहा है जिसे उसने देखा है और वह कोई चीज उसीका अग है। वह अपने इस प्रयोगकी पुनरावृत्ति बार-बार करता है।

प्राय बच्चेकी मा अपने बच्चेका अगूठा चूसना देखती है, उसे चिंता हो जाती है कि कही बच्चेको यह बुरी आदत लग न जाय। वह जब-तब बच्चेका हाथ पकडकर उसके मुहसे अगूठा निकाल देती है। अपनी माताकी इस सेवाके उपहारस्वरूप बच्चा उसे अपनी चिल्लाहट और क्रोधका उपहार प्रदान करता है। बच्चेके मानसिक उद्योगका यह प्रयास, एक कार्य करने-का उसका साहस, कुचल दिया जाता है। इस तरह माता अपने बच्चेके साथ एक युद्धका आरभ कर देती है और यह विनाशक युद्ध बच्चेके बाल्य-जीवनपर्यंत चलता रह सकता है।

मस्तिष्कका विकास

आरभमे बच्चेके मस्तिष्कका कार्य उसके पास रहनेवालो एव उनके सबधपर निर्भर रहता है। उसके मस्तिष्कका विकास और उसका स्वास्थ्य लोगोके इस सबधद्वारा उत्पन्न मनोवैज्ञानिक, वायुमडल, उसकी समझ, सहायता और प्रेमपूर्ण पथप्रदर्शनपर निर्भर है।

बच्चा अपने हाथसे कोई काम ले सके, उसकी पेशिया और नाडिया इस कदर विकसित हो जाय कि वह अपने हाथसे अथवा चम्मचसे ग्रास उठाने जैसा कठिन और दुस्तर कार्य कर उसे मुंहमे सफलतापूर्वक ले जाय, इसके पहले उसे अपने छोटे-छोटे हाथोंसे महीनो उद्योग और अभ्यास करने-की जरूरत होती है। अपने इस प्रयासमे उसे जितनी बार सफलता मिलती है उसे उतनी बार एक काम पूरा कर लेनेका सात्त्विक आनद प्राप्त होता है। चित्रकारको उसके चित्रके बोल उठनेपर जो आनद प्राप्त होता है अथवा सितारियेको अपने हृदयके भाव तारोपर तरगित हो उठनेपर जो आनद मिलता है ठीक वही आनद इस समय बच्चेको मिलता है।

कार्यकी पूर्णताका आनद जितना मस्तिष्कको विकसित करता है उतना ही वह मस्तिष्कके लिए स्वास्थ्यकर भी है। बच्चेके कार्य और उसकी सफलताका संसार उसकी अपनी निजी सहायतातक परिमित है

और अपने ससारमे आनद प्राप्त होना उसके लिए अतीव आवश्यक है। उसकी माता उसके इस ससारकी शिक्षिका है; उसे बच्चेको अपने कार्यसे मिलनेवाली सफलताके आनदमे हिस्सा बटाना चाहिए और उसे बच्चेको अपना कार्य करते रहनेके लिए उत्साहित करना चाहिए। बच्चा सफलता प्राप्त करे इसके लिए उसे इस खूराकका मिलते रहना आवश्यक है; पर, यह कार्य माताके लिए बडा कठिन और उबा देनेवाला है, फिर भी बच्चेके प्रति उसका स्वाभाविक प्यार उसमे अखड उत्साह भरे रहता है।

बच्चेको अपने उद्योगमे बडे धैर्यसे काम लेना पडता है, क्योकि उसकी उन्नतिकी गति बडी धीमी होती है। उदाहरणार्थ बच्चेको चम्मचसे काम लेनेमे क्या-क्या कठिनाइया होती हैं, इसे एक बाल-विज्ञानविशारदने सक्षेपमे इस प्रकार गिनाया है—

"मनुष्यके सास्कृतिक विकासके जीवनमे चम्मचका प्रवेश अभी हाल-की चीज है। बच्चेको हाथ और मुह तथा चम्मचको औंधा और सीधा, खाली और भरा होनेके अतरको समझना होता है। सस्कृतिकी इस नवीन उपजके भारको अपने मुख-विवरतक सफलतापूर्वक पहुचानेके लिए बच्चेको आख और मुखकी मास-पेशियोको साधकर अपने हाथ, सिर, गले और कमरके अग-विन्याससे समन्वय करना पडता है।"

बच्चा तीन महीनेका हो जानेपर चम्मच पहचानने लगता है और उससे भोजन ग्रहण करनेके लिए मुह खोलने लगता है। छह महीनेका होने-पर चम्मच अपने मुहमे लेनेके लिए वह जरा झुकने लगता है और हाथमे देनेपर चम्मच पकडने लगता है। नौ महीनेका होनेपर वह चम्मच उलटने-पलटने लगता है और एक हाथसे दूसरे हाथमे लेने लगता है।

सीखनेका स्वाभाविक ढंग

अपने दूसरे वर्षमे वह चम्मचसे खाना सीखने लगता है, पर यह सीखनेमे उसे सफलताओके कितने गोरखधधे तोड़ने पडते हैं। कभी वह उसे बीचमे

पकड लेता है, कभी सिरा मुहमे डालता है, औधे चम्मचसे भोजन उठानेकी कोशिश करता है, भोजन चम्मचसे गिरकर उसके पैरोपर पड जाता है। कुछ ऐसी ही बाते उसके हाथसे खानेपर भी होती हैं। बच्चेको बार-बार घबराहट और तकलीफ होती है, पर यदि मा अपने हाथसे बच्चेको खिलाने लगे तो भला कही बच्चेको चम्मचपर आधिपत्य प्राप्त हो सकता है ? अत. बच्चेको हमेशा अपने हाथसे खाना सीखने देना चाहिए।

यदि बच्चा दस महीनेका होनेतक माका दूध पीये और इसके बाद दिनमे चार बार खाये-पीये तो उसे दो वर्षका होनेतक स्वय खाना सिखानेके लिए माताको करीब सत्रह सौ कठिन मौके मिलते हैं। बच्चा भोजन और भोजनके बर्तनोंसे खेलनेकी कोशिश करता है—और यह सीखनेका स्वाभाविक रास्ता है; पर यदि बच्चा मनुष्यका हो या पशुका, उत्तेजित हो जाय, क्रुद्ध हो जाय या वह डर जाय अथवा उसका ध्यान भोजनके प्रधान कार्य क्षुधाकी शातिकी ओरसे हट जाय तो वह कभी अच्छी तरह नही खायगा।

बच्चोको खाना सिखानेकी श्रेष्ठ विधि, जो अबतक जानी जा सकी है, यह है कि पहले बच्चोको अपने हाथोसे इतना खिला-पिला देना चाहिए कि उसकी क्षुधा शात हो जाय और फिर उसे अपने हाथ चम्मच, कटोरी, प्याले, थाली, भोजन आदिके साथ अपने प्रयोग खुलकर करने देने चाहिए और माताको चाहिए कि जब बच्चा अपने डगमगाते हाथो और अपने अविकसित शरीरको वशमे करनेकी कोशिश करे तो वह उसे यह सब खुशी-खुशी करने दे और उसे इसके लिए उत्साहित करती रहे।

माताको जानना चाहिए कि नाडियो और पेशियोका विकास और उनपर अधिकार बहुत धीरे-धीरे ही प्राप्त होता है और उसे उसी धैर्यसे अपने बच्चेकी सहायता करनी चाहिए जिससे गायन और विभिन्न वाद्योके आचार्य अपने शिष्योको सिखाते समय काम लेते हैं। उनके जल्दी करनेसे कुछ नही हो सकता। सीखनेका काम अकेले शिष्योको ही करना होता है।

स्वावलंबनका अभ्यास

जितना समय बच्चेको खाने और अपना कपडा पहननेमे लगता है उससे बहुत थोडे समयमे मा अपने बच्चेको खिला-पहना दे सकती है, पर उसके बच्चेको इससे न तो कार्य-सपादनसे मिलनेवाला आनद प्राप्त होगा और न वह आगे चलकर अपनी शक्तियोका भलीभाति उपयोग कर सकेगा। इस विधिके उपयोगसे बच्चेकी कुछ करनेकी नैसर्गिक इच्छा मद पड जाती है और उसे काम करनेमे न मजा आता है और न उसमे उसे आनद मिलता है। ऐसे बच्चे आलसी, निराश, अतर्निर्दिष्ट चित्त और मिलनसारीसे दूर होते हैं—फल यह होता है कि उनका मानसिक स्वास्थ्य विनष्ट हो जाता है। ऐसे बच्चेको जिंदगीभर अपने कार्यों, अपने बडो और अतमे अपने सारे ससारसे युद्ध करते रहना पडता है।

बच्चेका अपने प्रत्येक कार्यसे वही सबध होता है जो सबध उसका चम्मचसे बताया गया है। चम्मचका उदाहरण यहा केवल एक सकेतकी भाति समझना चाहिए।

मूर्ख माता सबेरे बच्चेको उठाती है, कपडे पहनाती है, खिलाती-पिलाती है और बच्चेको, जो वह चाहे, करनेको छोड देती है। फिर जब खानेका समय होता है तब बलपूर्वक वह बच्चेको उनसे छुडा ले जाती है और अतमे रातको सुला देती है। उसके ये कार्य बच्चेको मानसिक रोगी बनाते हैं।

बुद्धिमती माता बच्चेके इन्ही सब कार्योंको स्वय करनेमे सहायक होती है, उसे सिखाती है और बढावा देती है। वह उसके सभी कार्योंमे खुशी-खुशी सहयोग करती है, उसके अपने ससारपर पूर्ण प्रभुत्व पानेमे सहायक होती है, जब उसका बच्चा किसी कार्यको पूरा करता है तो उससे आनदित होती है और इस प्रकार वह अपने बच्चेके मानसिक स्वास्थ्यकी पुष्ट नीव बचपनमे ही डाल देती है और यह अस्त्र उसको जिंदगीभर ससार-युद्धमे मदद देता है।

शिशुओंका शिक्षण

दड भयकी भित्तिपर प्रस्थापित है। जिस दडसे भय न लगे वह दड नही है।

नवजात शिशु केवल दो चीजोसे डरता है: गिरनेसे और जोरकी आवाजसे। केवल ये दोनो डर जन्मजात होते हैं, आगे चलकर बच्चा जिन और चीजोसे डरने लगता है उनसे डरता वह यहा सीखता है।

भयका आरंभ

बच्चा आरामसे अधेरे कमरेमे सो रहा है, बिजली कडकती है और वह चौंक उठता है। बिजलीकी कडकडाहट उसे डरा देती है और वह चिल्ला उठता है। अब अधेरेको वह दूसरी ही दृष्टिसे देखने लगता है; क्योकि अब वह अधेरेका सबध बिजलीकी कडकडाहटसे जोडता है। अब वह अधेरेसे डरने लगता है। इस प्रकारके डरको मनोविज्ञानवेत्ता गुण-भयके नामसे पुकारते हैं। बचपनमे सीखा हुआ यह अधेरेसे डरना मनुष्यकी जिंदगीभर चलता रह सकता है।

बच्चेके लिए और उसके आसपास रहनेवालोंके लिए जो कार्य हानि-प्रद हो उससे बच्चेको दडके आधारपर डरना सिखानेकी जरूरत होती है, पर यह कार्य बडा कठिन है, क्योकि उसे हमारी इच्छित वस्तुसे डरना सिखाना लगभग असभव है। गलत और सही वस्तुको समझनेमे यह हमेशा गडबडी करता है, अत जिस चीजसे न डरना चाहिए, उससे ही वह डरने लगता है। इस प्रकार यदि वह बहुत-सी चीजोसे डरने लगे, तो फल यह होगा कि उसका जीवन दु खद हो जायगा, नाडिया दुर्बल हो जायंगी और वह रोगी हो जायगा। सुरक्षाकी दृढ आशाके साथ-साथ खतरेकी पूरी समझदारीकी नीवपर ही स्वस्थ मस्तिष्कका निर्माण होता है। अनेक

चीजोंसे डरते रहने एव अपनेको अरक्षित दशामे समझनेसे बच्चेका दिमाग कमजोर हो जाता है।

शिक्षणका ढंग

छोटा बच्चा पथसे डरता, आगे बढता न जाने किस अज्ञात स्थानसे हम लोगोंके पास आता है। वह न तो हमे जानता-पहचानता है, और न हमारी रीति-रिवाजको ही समझता है और हम लोगोकी आज्ञाका पालन करना भी वह बहुत धीरे-धीरे सीखता है। वह पूर्णतया हमारी दया-पर निर्भर रहता है, उसे सभ्य बनानेके लिए हमे उसके साथ कम-से-कम वैसा व्यवहार तो करना चाहिए जो हम अपने एक ऐसे अतिथिके साथ करेंगे जो हमारी भाषामे न बोल ही सकता है न समझ ही सकता है। बुद्धिमनी माता बच्चेको सिखानेका काम बहुत नम्रतापूर्वक करती है। उसे याद रखना चाहिए कि 'दुनियाका न कोई आदमी इतना बुद्धिमान् है और न भला ही जो किसी दूसरेपर शासन करनेका अधिकारी समझा जाय।'

जिस बच्चेका पालन-पोषण उचित ढगसे किया जाता है वह नियम-प्रिय होता है। मेरे इस कथनमें लोगोको कुछ विरोधाभास-सा प्रतीत होगा, पर असलियत यही है और इसीमे बच्चोंके पालनका सारा रहस्य छिपा हुआ है। बच्चा नियमप्रिय हो, इसके लिए उसे पहले सिखाना और समझाना होगा, उसका सस्कार करना होगा। इसके बाद नियम भग करनेका फल दडकी जरूरत ही नही रह जायगी।

आज्ञा-पालन

बच्चा कुछ सीख सके इसके लिए यह जरूरी है कि वह आज्ञाओका पालन करे और उसमे दूसरी अच्छी आदतोकी तरह आज्ञापालनकी आदत भी डाली जानी चाहिए, पर यह आदत हुक्मके बलपर नही डाली जा

सकती। बच्चेकी जरूरतें उससे फुसलाकर ही जानी जा सकती हैं, डाटकर नही पूछी जा सकती। "बाबू आओ खा लो!" "चलो घूमने चलें।" "बच्चा, अपने खिलौनेसे खेलो!"—कहा, जरा कधेपर थपथपाया, थोडा मुस्कराये और बच्चेने हामी भरी और इसके साथ ही लोगोके साथ उचित व्यवहार करनेके बीज उसमे पड गये, उसके बाल-ससारमे आनदका उद्-भव हुआ और वह दूसरी अच्छी आदतोके ग्रहण करनेके पथपर लग गया। आदत ग्रहण करनेका स्वभाव बच्चा अपनी रगोमे लेकर पैदा होता है।

केवल दडके बल बच्चोंसे बुरी आदतें नही छुडवाई जा सकती। एक बुरी आदतके बदले बच्चेमे कोई दूसरी अच्छी आदत डालनेसे बुरी आदत स्वय चली जाती है। उदाहरणके लिए यदि बच्चा भोजनके लिए बुलानेपर अपने खिलौने छोडकर आनेसे इन्कार करता है, तो उसकी यह आदत याद रखने योग्य है। अब चाहिए यह कि भोजनके समयसे थोडा पहले बच्चेसे भोजन करनेके लिए चलनेको नही वरन् रस्सी कूदनेका खेल खेलनेके लिए चलनेको कहा जाय। खिलौनोसे खेलनेके बजाय रस्सी कूदनेमे थकान जल्दी आती है और इस खेलसे सतोष भी जल्दी हो जाता है। अब बच्चेको भोजन करनेके लिए चलनेको कहिए, वह तुरत आपके साथ हो लेगा।

कभी-कभी ऐसा होता है कि बच्चा यकायक सोनेके लिए बिछावन-पर जानेसे ही इन्कार करने लगता है। ऐसी नाहीका कारण जान सकना जरा कठिन होता है। मूर्ख माता-पिता कभी-कभी रोते बच्चेको उसके रोनेका कारण न ढूँढकर अधीरावस्थामे उसे खाटपर पटक देते हैं और रो-चिल्लाकर स्वय चुप हो जानेके लिए छोड देते हैं। इस प्रकारका केवल एक अनुभव उस बच्चेको, जो खुशी-खुशी अपने बिछावनपर जाकर सोता था, बिछावनसे डरा देता है। बच्चेके पेटमे दर्द था, उसके इस दर्दको दूर करनेका कोई उपाय न कर उसे बिछावनपर पटक दिया जाता है, बच्चा बिछावनको ही पेटके दर्दका कारण समझने लगता है, वह पेटके दर्दका सबध बिछावनसे जोडने लगता है और वह बिछावनके विरुद्ध हो जाता है।

बचपनके अनुभव

यह समझना तो कठिन है कि बच्चा इन चीजोका अनुभव कितनी स्पष्टतासे करता है, पर अधिकतर लोग जानते हैं कि बचपनके कुछ अनुभव बडे महत्त्वके होते हैं और उनका असर जीवनभर रहता है। प्राय सभीने देखा है कि बच्चा लालटेनके पास लडखडाता हुआ पहुचता है और वह लौको पकडनेके प्रयासमे चिमनीको छू देता है—वह रोने लगता है और फिर वह लालटेनके पास नही जाता। अनुभवने लालटेनसे उसे डरना सिखा दिया और जिस तरह आप खतरेकी चीजे बच्चेकी आखोसे दूर रखकर बच्चेको उनसे बचाते हैं, उसी तरह आप अपने बच्चेको बुरी आदतोके खतरोंसे उन्हे बुरी बातोंसे दूर रखकर बचा सकते हैं। उसे इतना थकने मत दीजिए कि थकानके मारे रोने लगे, ऐसी परिस्थिति ही उत्पन्न न होने दीजिए कि उसे क्रोध आये। उसे सतुलित भोजन दीजिए, कसरत कराइये, शुद्ध वायुमे रखिए, उसके शरीरको नित्य सूर्यकिरणोको चूमने दीजिए, उसमे चिडचिडापन उत्पन्न न होगा। पूर्ण स्वस्थ बालकका जैसा सुदर स्वभाव होता है, वैसा बढिया स्वभाव इस पृथ्वीपर किसी दूसरेका मिलना असभव है। बच्चेको ठाला न रहने दीजिए कि 'शैतान' उसे शरारत सिखाये। उसे कुछ करते रहने दीजिए। किसी खिलौनेसे खेले या कोई खेल खेले। छोटे बच्चोको तो खास तौरसे किसी काममे लगाये रहिए।

स्वास्थ्यसंबंधी नियमोंका ज्ञान

दांतोंकी सफाई

कारण न मालूम होनेपर बच्चे नियमोको भग करते रहते हैं और जल्द ही उन्हे भूल भी जाते हैं, पर अगर कारण मालूम रहे तो इसकी सभावना कम रहती है। 'मैं चाहती हू कि तुम रोज प्रात.काल दातून किया करो'—इस तरहके आदेश बच्चोके लिए निरर्थक प्रमाणित होते हैं, पर अगर उनको यह समझा दीजिए कि अच्छी तरह चबानेसे खाना जल्द पचता है और इस चबानेकी क्रियाके लिए दातोका मजबूत और बढिया रहना जरूरी है, तो वे आसानीसे यह शिक्षा ग्रहण कर लेंगे, और अगर आप यह भी हृदयगम करा दें कि चमकते हुए दात मोती-जैसे सुदर और आकर्षक होते हैं, तो वे इस उद्देश्यको ध्यानमे रखते हुए रोज दातुन करने भी लगेंगे।

भोजनसंबंधी स्वच्छता

अब खानेके पहले हाथ धोनेकी बात लीजिए। बच्चोको विशेषकर लडकोको—दैनिक कृत्यसबधी यह बात हृदयगम करानेमे बहुत अधिक समय लगेगा। आप भोजनके समय उन्हे बतलाइए कि गदगी और उसमे रहनेवाले कीटाणुओंके खाद्य पदार्थमे प्रविष्ट हो जानेपर वह बहुत हानिकारक हो जायगा और अगर खानेके पहले हाथ न धोया जाय तो इस तरहकी खराबी होनेकी बहुत अधिक सभावना रहेगी। अगर माता गदे हाथोसे खाना परसती है या खाना बनानेमे सफाईका ध्यान नही रखती तो इस तरहके उपदेशसे कोई लाभ नही होगा। इसलिए बच्चोके सामने कोरा उपदेश न रखकर उदाहरण भी रखा जाना चाहिए। इस तरीकेसे दुराग्रही-से-दुराग्रही लडका भी तथ्य ग्रहणकर अच्छे नियमोके पालनपर ध्यान देने लगेगा।

अंदरकी सफाई

अदरकी सफाई भी बडे महत्त्वकी चीज है। खराबीका भय दिखलाने या डाट-फटकारसे इस उद्देश्यकी पूर्तिमे कोई सहायता नही मिलती। 'शौचादि नित्य क्रियाओको नियमित रूपसे किया करो, नही तो रोग हो जायगा'—इस तरहकी बात बच्चोंके मनमे भय उत्पन्न कर देती है, और भय प्रायः कब्जका कारण हुआ करता है। उन्हे समझाइए कि नित्य क्रियाओको नियमित रूपसे करनेसे अदरकी सफाई ठीक उसी तरह होती है जिस तरह नहाने-धोनेसे बाहरकी सफाई होती है। उन्हे यह भी समझाइए कि किस प्रकार उपयुक्त आहार—ताजा फल, तरकारिया, चोकरदार आटा, सलाद—पेटकी सफाईमे मदद करता है और ठढा जल कैसे कब्ज दूर करनेका सर्वोत्तम साधन है।

व्यायामकी प्रवृत्ति

आजकलके बच्चोको व्यायाम—विशेषकर टहलना—बहुत खलता है। 'मैं बस या और किसी सवारीका उपयोग क्यो न करू? मैं पैदल चलना पसद नही करता। बेकार ही पैरोको क्यो थकाने जाऊ?'—इस तरहके भाव उनके मनमे उठा करते हैं। उन्हे समझाइए ताजी हवामे टहलना—इससे होनेवाला पेशियोका व्यायाम और इसके कारण फेफडोमे भरनेवाली ताजी हवा किस प्रकार स्वास्थ्यदायक होनेके साथ-साथ शक्ति-वर्धक भी होती है।

ताजी हवाकी प्राप्ति

अब ताजी हवाकी आवश्यकतापर आइए। जिन बच्चोका पालन-पोषण शैशवकालसे ही हवादार जगहमे हुआ है वे तो इसके आदी हो जाते हैं और इसका महत्त्व भी कुछ-कुछ समझते हैं, पर बहुत-से लडके ऐसे भी मिलेंगे जिनको इसके महत्त्वका जरा भी ज्ञान नही होगा। वे पूछ बैठेंगे

'कमरेकी खिडकिया क्यो खुली रखी जाय? मैं वाहर न निकलकर अदर ही क्यो न वैठा रहू?' अगर कोई वाधा न हो तो उन्हें रोज मैदानमे ले जानेका प्रयत्न कीजिए जिसमे वे कुछ बडे होनेतक इसके अभ्यस्त हो जाय।

निद्राकी आवश्यकता

अधिकाश बच्चे तो जल्द ही सो जाते हैं, पर कुछ ऐसे भी होते हैं जो अनाप-शनापमे लगे रहकर जल्द सोनेका नाम ही नही लेते। विना कारण बतलाए जल्द सोनेके लिए हठ करने या न सोनेपर झिडकनेसे काम नही चलेगा। मनोरजक ढंगसे उन्हे समझाइए कि वाढके लिए निद्रा क्यो आवश्यक है और शरीरके विभिन्न अग निद्रामें कैसे अपने क्षयकी पूर्ति और नवजीवन प्राप्त करते है और अगर वे पूरा सोयें तो शरीर और मस्तिष्कका विकास जैसा होना चाहिए वैसा क्यो नही होगा।

स्वास्थ्य और भविष्य

अव सव प्रश्नोका एक प्रश्न उपस्थित होगा कि 'अच्छा स्वास्थ्य ही इतना क्यो आवश्यक है?' इस प्रश्नके समाधानके लिए माताको भविष्यसे इसका सबध जोडते हुए चतुरताके साथ वतलाना चाहिए कि जीवनके किसी भी क्षेत्रमे सफलता प्राप्त करनेके लिए स्वास्थ्य ही सवसे अच्छा साधन होता है और चूकि यह वडी देन है इसलिए इसकी उपेक्षा न कर सावधानीके साथ इसकी रक्षा करनी चाहिए। इस प्रकार स्वास्थ्य-सवधी दैनिक नियमोकी शिक्षा देने और शरीरको रुग्ण तथा अयोग्य वनानेवाले कार्योंसे विरत करनेका कार्य वचपनमे घरमे ही सबसे अच्छे ढग और सरलतासे हो सकता है।

असंगत व्यवहार

यदि हम चाहते हैं कि हमारे बालक अच्छे हो तो हमे इसके लिए बहुत कोशिश करनी होगी। जब कोई हमसे मिलने आये तब उसके सामने हम एक तरहकी बात करें और उसके चले जानेपर दूसरी तरहकी बात करें, तो हमारे इस व्यवहारसे बालकमे असगति पैदा होगी। कोई हमारे घर कुछ मागने आये और हम उसे तो कह दें कि घरमे वह चीज है ही नही और फिर उसके चले जानेके बाद माता या पितामेसे कोई वही चीज बालकको निकालकर दे, तो फिर बालकमे भी यही दोष पैदा होगा।

तात्पर्य यह कि यदि हम अपनी बातचीतमे या व्यवहारमे सगतिका, मन, वचन और कर्मकी एकताका खयाल न रखेंगे और कभी कुछ और कभी कुछ कहते या करते रहेगे, जो कुछ कहेगे या करेगे उसके खिलाफ कुछ भी कहने या करनेको तैयार रहेगे, तो विश्वास रखिए कि हमारा बालक भी वैसा ही बनेगा और इसमे उसका कोई दोष न होगा। उस हालतमे हमारा यह कहना कि यह लडका या यह लडकी ऐसी क्यो है, व्यर्थ होगा और इस सवालका जवाब हमे अपने अदर ही ढूढना होगा।

जबतक बच्चोको दुनियाकी हवा नही लगती तबतक वे बिल्कुल सरल होते हैं। यह तो हम हैं जो निर्मल पानीके सरोवरको मथकर गदा कर डालते हैं और उसे मिट्टी और कचरेसे भर देते हैं। इसी कारण जो बालक आरभमे सब प्रकारसे सुदर रहता है वही ज्यो-ज्यो बडा होता जाता है—बालक मिटकर आदमी बनता जाता है त्यो-त्यो अपनी अतर और बाह्य सुदरता भी खोता जाता है। उसके अदर भी हम कलियुगका प्रवेश करा देते है। इस तरह जब वह ठीक हमारे समान बनकर हममे घुल-मिल जाता है तभी हमे सतोष होता है।

अगर कोई बालक अपने माता-पिताकी किसी असगतिकी ओर इशारा

करता है तो माता-पिता उसपर नाराज होते हैं। मा-बापकी भूल दिखाने-वाला बालक उनके क्रोधका शिकार बनता है। वे उसे आडे हाथो लेते हैं और कहते हैं—'बहुत सयाना बनता जा रहा है—क्यो ?' दुनिया-भरके लौंडोके साथ खेल-खेलकर मुहफट बन गया है, जो मनमे आता है सो बक जाता है, मगर खबरदार, हमसे यह सब बर्दाश्त न होगा।"

बालक मनमे सोचता है कि उसने जो बात कही या विचार प्रकट किए वे किसीकी देखा-देखी या माग-मूंगकर नही किए थे। माता-पिताके असगत व्यवहारको देखकर ही मनमे ये बाते पैदा हुई थी। मुहजोरी करने-की या हेकडी दिखानेकी तो उसमे कोई बात ही नही थी। शायद मा-बाप अपनी जिम्मेदारीको छिपाने और अपना बडप्पन जतानेके लिए ही ऐसा व्यवहार करते हैं। वे इससे नावाकिफ हैं या इसे समझते नही हैं, ऐसी भी कोई बात नही। उनके दिलमे यह खयाल होता रहता है कि इस तरह हम बालकको धोखेमे रख सकेंगे अथवा डरा, धमकाकर झूठा ठहरा सकेंगे, लेकिन उनका यह खयाल गलत है, भ्रमपूर्ण है।

बालक श्रद्धालु होता है और इसी कारण वह श्रद्धा या विश्वास रखता है। जब श्रद्धा नही रह जाती तब सब खतम हो जाता है। माता-पिताका असगत व्यवहार बालकोके और उनके बीचके श्रद्धाके बाधको तोड डालता है अतएव आवश्यक है कि माता-पिता चेतें और सजग रहे।

बच्चोंकी समस्याओंका हल

बच्चे परिवारमे विशेष प्रकारकी समस्याए प्रस्तुत करते हैं। अग्नि तथा दुर्घटनाओ आदिसे रक्षा, भोजन, वस्त्र, खिलाने आदिकी व्यवस्था, अनुशासनकी शिक्षा आदि इसी प्रकारकी समस्याए हैं।

अगर हम इन समस्याओपर एक दूसरे ही दृष्टिकोणसे विचार करे तो इनका रूप कुछ सरल हो जा सकता है। बच्चे जवानोंसे बिलकुल भिन्न होते हैं और उनके लिए भिन्न प्रकारके आहार, रहने और बढनेके लिए भिन्न प्रकारके स्थान, भिन्न प्रकारके व्यायाम और भिन्न प्रकारके ही विश्राम-की भी आवश्यकता होती है। अगर हम यह बात अच्छी तरह समझ लें तो उनके लिए स्वास्थ्यकर स्थिति प्रस्तुत करनेमे आसानी होगी। आज बच्चोंसे सबध रखनेवाली आधी परेशानिया केवल इस कारण हैं कि हमने जवानो और बच्चोंके बीच जो बहुत बडा अतर है उसे दृष्टिसे ओझल कर दिया है। उदाहरणार्थ, बढते हुए बच्चोंके लिए एक आवश्यकता यह है कि उनके दौडने, कूदने, शोर-गुल करने, तरह-तरहके खेल खेलनेके लिए स्थानकी व्यवस्था हो। उनकी इस आवश्यकताको समझें और जब वे काफी बडे हो जाय तो उन्हे किसी सुरक्षित स्थान या खेलके मैदानमे भेज दें जिसमे वे वहा अपनी इच्छाभर चिल्ला और उछल-कूदकर अपना व्यायाम कर लें। इसके अनतर वे अगर खिलौनोंसे खेलने, पुस्तकें देखने, चित्र बनाने आदिमे लगा दिए जाय तो काफी देरतक उनके शात बने रहनेकी आशा की जा सकती है। बच्चोको चिल्लाने देकर सारे घरको सिरपर उठा नहीं लेने देना चाहिए, पर साथ ही शोर-गुल मचानेके लिए उन्हे स्थान और अवसर देना भी आवश्यक है। जो शहरोकी तग गलियो या घनी आबादीमे रहते हैं उनके लिए बच्चोके जीवनयापनके निमित्त उचित प्रबध करना कठिन होता है, पर थोड़ा प्रयत्न करनेपर कुछ-न कुछ

व्यवस्था हो ही जाती है। चाहे जैसे भी हो, इसका प्रबध तो होना ही चाहिए नही तो बच्चे बिलकुल दब्बू स्वभावके हो जायेगे।

बच्चोंके लिए निजी स्थान

बच्चोके लिए बुद्धिमत्तापूर्ण और दृढ नियमोवाले व्यवस्थित जीवनकी आवश्यकता होती है। उनके लिए एक खास जगह—चाहे छोटी ही क्यो न हो—अवश्य होनी चाहिए जहा वे अपनी निधिया रख सकें और बडे लोगोकी चीजोको नुकसान पहुचाए बिना आजादीसे खेल सकें। अच्छा तो यह हो कि उनके लिए एक कमरा ही अलग कर दिया जाय। अगर इस तरहका कोई प्रबध न हो तो उनके लिए गृहोद्यान या मकानसे लगी हुई जमीनमे झोपडी-जैसी कोई चीज बना दी जाय जिसमे वे मौसिम अच्छा होनेपर खेल सकें। सयाने लोगोका उन्हे साथ-साथ दुकान-दुकान या जहा-तहा घुमाते फिरना या बराबर उनका मनोरजन करते रहना बहुत बुरा होता है।

मनोरंजनके साधन

बच्चोका खिलौना भी उनकी अवस्थाके अनुरूप और उपयुक्त होना चाहिए। यह कोई जरूरी नही कि खर्चीली चीजे ही खरीदी जाय, छिटपुट चीजें प्रस्तुत कर दी जाय जिनसे वे अपनी बुद्धिसे तरह-तरहके खिलौने बनाकर खेलते रहे। उन्हे स्वय अपना मन-बहलाव कर लेनेका तरीका सिखला देना चाहिए। वे किसीको साथमे रखना चाहते है और अगर बहुत छोटे हो तो अपनी माताको बराबर देखते रहना चाहेगे। अगर वे दूसरे बच्चोके साथ न खेल रहे हो तो अपने साथ बहुत देरतक खेलनेका अवसर उन्हे नही देना चाहिए। सयाने लोगोका काम सिर्फ यह है कि वे बच्चोके पास ही बने रहे जिसमे वे अपनेको निरापद समझते रहे।

परिवर्तनकी व्यवस्था

संतानवालोका यह कर्तव्य है कि वे अपने काम करनेके ढगपर विचार करे, यह स्मरण करनेकी कोशिश करे कि उनका अपना बचपन कैसा जान पडता था और इस अनुभवके आधारपर अपने बच्चोके लिए स्वस्थ और प्रसन्न घर प्रस्तुत करे। सभी अवस्थाओके बच्चोके सबधकी अधिकाश कठिनाइया इस कारण प्रस्तुत होती है कि हम यह ठीक-ठीक नही जान पाते कि बच्चा कितना समझ सकता है और कितना कर सकनेकी उसमे क्षमता है। वह जितना छोटा होगा उसमे अपनी इच्छाओपर नियत्रण करने और कुछ देरतक किसी काममे लगे रहनेकी शक्ति उतनी ही कम होगी। कम अवस्थाका बच्चा किसी खेलसे जल्द ही ऊब जाता है, उसका ध्यान इधर-उधर बट जाता है और परिवर्तन चाहता है। इसलिए हमारे लिए यह आवश्यक है कि हम उसके लिए तरह-तरहके काम प्रस्तुत रखे जिसमे उसके परिवर्तन चाहनेपर इसकी व्यवस्था जल्द ही हो जाय। अगर बच्चा किसी एक काममे देरतक नही लगा रहता है तो इससे हमे यह न समझ लेना चाहिए कि वह नटखट है। दरअसल उस समय वह उसी अवस्थामे होता है और बुद्धिमानीका काम यह हो कि उसके लिए एक छोटी-सी आलमारीका प्रबध कर दिया जाय जिसमे वह अपने खिलौने रख सके और उसे यह सिखला दिया जाय कि उसमेसे एक समय एक खिलौना कैसे निकाला और उपयोगमे लाया जाय। उदाहरणार्थ, आप उसमेसे घोड़ा या और कोई खिलौना निकाल लीजिए, उसका उपयोग या उसके सबधकी कुछ बाते बतलाइए और तब उसे रखकर कोई दूसरा खिलौना निकालिए। शिशुशालाओमे यही किया जाता है और बच्चे अपनी अवस्थाके अनुरूप खिलौनो या कामोमे खुशीके साथ लगे रहते है।

गृहकार्यमें सहायता

कुछ अधिक अवस्थाके बच्चोको आप यह बतला सकते है कि घरके

कामोमे कैसे सहायता दी जा सकती है। इससे वे स्वावलबी और उपयोगी बननेकी शिक्षा प्राप्त करते हुए माताको श्रमसे बहुत कुछ बचा सकते हैं यह समझना मूर्खता है कि हम बच्चोको काम न करने देकर उनके साथ बडी मेहरवानी कर रहे हैं घरमे काम करना स्वाभाविक है, इससे बच्चोमें परिवारका सदस्य होनेकी भावना उत्पन्न होती है और वे धीरे-धीरे अपने कपडे साफ कर लेना, थोडी लकडी काट देना, कोयला लाकर देना (इस तरहके गदे कामोमे उन्हे बडा आनद आता है), कुर्सी आदि ठीक तरहसे रखना तथा इस तरहके अन्य छोटे-मोटे काम करना बहुत जल्द सीख जाते हैं।

यह अच्छी तरह समझ रखना चाहिए कि शारीरिक श्रम मानव-जातिके लिए और विशेषत. बच्चोके लिए जो विकासकी दृष्टिसे अभी आदिम अवस्थामे होते हैं, सर्वथा स्वाभाविक है। जो बच्चे घर-परिवारके लिए लाभदायक कामोमे प्रवृत्त किए जाते है उनमे जल्द ही आत्म-विश्वास-की भावना उत्पन्न हो जाती है और वे सुखी भी होते है। इसके अलावा एक लाभ यह भी होता है कि उनकी पेशियो और शरीरके विभिन्न अगोके पारस्परिक सबधका विकास होता है और उनका स्वास्थ्य सुधरनेके साथ-साथ उनका मानसिक क्षितिज भी विस्तृत होता जाता है।

मानसिक स्वास्थ्य

वच्चेके शारीरिक अस्वस्थताका ज्ञान उसके मा-बापको आसानीसे हो जाता है।

अगर बच्चेका जीवन सुखमय और उपयोगी बनाना अभीष्ट है तो शारीरिक स्वास्थ्य-जैसा ही इसपर भी ध्यान देना आवश्यक होगा। मां-वाप सिर्फ यह कहते हैं कि बच्चा नटखट, वरबादी, ढीठ, चिडचिडा या काबूके बाहर है और इन दोषोका सुधार करनेके लिए भिन्न-भिन्न उपायोका सहारा भी लेते हैं—दड देते, उसकी खुशामद करते, लानत-मलामत करते या आधुनिक दृष्टिकोण अपनाकर उसे स्वतत्र रूपमे आचरण करनेके लिए विलकुल छोड देते हैं पर जिस तरह वढी हुई उपजिह्विका (टॉंसिल) शारीरिक अवस्था बहुत खराब होनेकी सूचक है। उसी तरह उक्त बुरी प्रवृत्ति भी वहुत वढी हुई मानसिक अस्वस्थताका लक्षण है।

मानसिक दोष और अस्वस्थता

मानसिक अस्वस्थता मानसिक दोष अर्थात् दिमागकी कमजोरीसे विलकुल भिन्न चीज है। मानसिक दोष तो लगडापन आदि शारीरिक दोषके समान है जो बच्चेके शरीरमे वरावर बना रहता है, पर मानसिक अस्वस्थता साधारणत स्वस्थ रहनेवाले, पर कुछ कालके लिए रोगके चगुलमे फँस जानेवाले वच्चेकी शारीरिक अस्वस्थताके समान है।

किसी भी वच्चेके सवधमे यह आशा नही की जा सकती कि वह विलकुल पूर्ण होगा और उसमे कभी खीझ या चिडचिडापन नही देख पडेगा। प्राय वच्चे ऐसी अवस्थासे भी गुजरते है जिसमे वे वहुत कम सह-योग करते और नियत्रणके वाहर भी हो जाते हैं हाला कि वे साधारणत. ऐसे नही होते। इससे मा-वापको घवडाना या यह न समझ वैठना चाहिए

कि बच्चा मानसिक रोगसे ग्रस्त है, उन्हे नये सिरेसे विचारकर यह देखना चाहिए कि व्यवस्था या व्यवहार आदिमे ऐसी कोई बात तो नही आ गई है जो बच्चेके मानसिक स्वास्थ्यकी उन्नतिमे बाधक हो रही है।

मानसिक स्वास्थ्यकी आवश्यक शर्तें

बच्चेके मानसिक स्वास्थ्यके लिए सबसे अधिक आवश्यक सुरक्षित और निश्चित होनेकी भावना है। ऐसा वातावरण, जिसमे मा-बाप बच्चे-को ही नही बल्कि एक-दूसरेको भी प्यार करते हो, अन्य बहुत-सी कमियो-की पूर्ति कर दिया करता है। हा, जहा निवाससबधी कठिनाइया है, एक ही मकानमे कई परिवार निवास करते है वहा इस प्रकारकी भावनाका आधार प्रस्तुत कर सकना कुछ कठिन होगा। जो लोग बच्चेमे खामिया होनेकी शिकायत करते है वे छोटे बच्चेमे अरक्षित होनेकी भावना उत्पन्न करनेवाली परिस्थितियोका सुधार करनेकी ओर समुचित ध्यान देनेमे उतने सतर्क नही रहा करते और यह बच्चेमे मानसिक अस्वस्थता बढाकर उसकी भावी असफलताकी नीव डाल दिया करता है। अगर बाल-अपराधो-के कारणोकी तहतक पहुचनेका प्रयत्न किया जाय तो उसमे असतोपजनक पारिवारिक जीवन ही प्रधान रूपमे देख पडेगा।

सुरक्षाके साथ-साथ बच्चेको प्यार भी प्राप्त होना चाहिए। सुरक्षा चाहे जितनी हो, पर अगर बच्चेकी भावना यह हो कि उसे प्यार नही प्राप्त है, परिवारमे उसे चाहनेवाला या अपना समझनेवाला कोई नही है तो उसे भावनात्मक पोपण उचित रूपमे प्राप्त नही होगा जिसका उसके मानसिक स्वास्थ्यपर बहुत बुरा असर होगा। किसीका अपना समझे जानेकी आव-श्यकता ही शायद वह कारण है जिससे माता न रहनेकी अपेक्षा बुरी समझी जानेवाली माता भी बच्चेके मानसिक स्वास्थ्यके लिए लाभदायक होती है। बुरी माता बच्चेको कभी चाटे लगा और उसके प्रति अन्याय कर सकती है, यहातक कि उसकी शारीरिक आवश्यकताओकी उपेक्षा भी कर सकती

है, पर साथ ही वह उसका आलिंगन और चुबन भी करती रहेगी और वच्चा यह समझेगा कि वह उसका अपना है और ससारमे उसका भी कोई स्थान है भले ही वह स्थान उसके लिए उतना आनददायक न हो।

तीसरी आवश्यकता वाढका उपयुक्त अवसर है जिसे प्राय वच्चेको प्यार करनेवाले खुशहाल माता-पिता भी नही प्रस्तुत कर पाते। कभी-कभी उनका वात्सल्य प्रेम ही इस सीमातक पहुच जाता है कि उसका प्रभाव वच्चेको पगु वना देनेवाला हो जाता है और उनका रक्षणात्मक और निर्देशात्मक प्रयत्न वच्चेकी शक्तिका विकास नही होने देता। वे बहुत कडाई रखते या बात-बातमे 'हा'-'ना' कहकर आदेश देते रहते है जिससे वच्चा अपनेसे कुछ भी नही कर पाता। पहले तो यह प्रवृत्ति माता-पितामे वहुत देखनेमे आती थी, पर अव इस प्रवृत्तिकी प्रतिक्रिया यह देखनेमे आती है कि वहुनसे लोग किसी प्रकारका निर्देश नही देते और न वच्चेके आचार-व्यवहारपर किसी तरहका नियत्रण रखते है।

अनुशासन

अनुशासनका साधारण-सा ढाचा और बधा हुआ कार्यक्रम वच्चेके मानसिक स्वास्थ्यके लिए वहुत लाभदायक सिद्ध होता है। इस ढाचेके अदर उसे आजमाइशके लिए काफी गुजाइश रहनी चाहिए। अगर तीन वर्षका कोई वच्चा अपनी मा या पिताके साथ किसी दोस्तके घर जानेपर गुलदस्तेका फूल नोच ले, छोटी मेजपर रखी हुई कोई चीज सहनपर लुढका दे या दावातमे उगली डाल दे तो समझना चाहिए कि वह मानसिक अस्वस्थतासे ग्रस्त है। उसमे अरक्षित होने या द्वेषकी भावना हो सकती है या सभव है, वह दुर्भाग्यवश उस सिद्धानका शिकार हो जो यह मानता है कि वच्चेको 'ना' कहकर उसके मनका दमन नही करना चाहिए।

व्यावहारिक नियम

वच्चेका पारिवारिक जीवन सुखमय वनानेके लिए उसे सामाजिक

व्यवहारसबधी कुछ नियमो तथा माता-पिता, भाइयो और बहनोंके कुछ अधिकारोका सम्मान करनेकी शिक्षा देना आवश्यक है। बच्चा एक-डेढ वर्षका होते-होते 'हा' और 'ना'का अभिप्राय प्राय समझने लगता है। अगर माता-पिता इन शब्दोका उचित प्रयोग करे और बात-बातमे 'ना' न कहा करे तो बच्चेको भले-बुरेका ज्ञान जल्द हो जायगा और यह उसके मानसिक स्वास्थ्यमे बहुत सहायक होगा। अच्छा व्यवहार करना सीखनेके लिए ये शब्द पथप्रदर्शकका काम करते हैं और बच्चेमे अच्छी आदतें डालनेमे सहायक होते हैं। व्यवहारके इस ढगका अभ्यास हो जानेपर बच्चेमे स्वाभिमान और आत्मसम्मानका भाव दृढ हो जायगा और उसे मा-बापकी प्रशसा प्राप्त होगी जो उसके सुख और आनदके लिए बहुत आवश्यक है।

जिस बच्चेको आरभसे ही कर्तव्याकर्तव्य—अच्छे-बुरे व्यवहारकी शिक्षा मिलती है वह स्वय तो अधिक प्रसन्न रहता ही है, अपने परिवारमे भी आनद फैलाता है। जिस बच्चेके पालनमे इस तरहका कोई नियत्रण नही होता उसमे औचित्यके ज्ञानका अभाव होता है। वह स्वय तो दु खी रहता ही है, जिनके साथ रहता है उनके लिए भी सरदर्द बन जाता है और प्राय अपनी ओर ध्यान आकृष्ट करनेके लिए मूर्खतापूर्ण कार्य कर बैठता है जिससे दूसरोका प्यार और अनुमोदन प्राप्त करनेका सतोष उसे नही मिल पाता। यह सत्य है कि कुछ औचित्यके ज्ञानसे हीन बच्चोको शरारत करने—खिडकीका शीशा तोड देने, दूसरोकी किताबे फाड डालने, मेजपरकी चीजे लुढककार तोड देने आदि—की आजादी दे दी जाय तो वे ये सब तथा और भी बहुतसे अनिष्ट कर बैठते हैं, फिर भी आगे चलकर अपने ढगमे सुधार कर अपना जीवन सुखमय बना लेते हैं, पर इसके आधारपर यह दलील पेश करना कि किसी बच्चेको ऐसा कार्य करनेसे रोकना नही चाहिए, ठीक वैसा ही होगा जैसा एक लडकेको कब्ज होनेपर क्लासके सारे लड़कोको जुलाब देना।

अच्छे स्वास्थ्यकी पहचान

मानसिक स्वास्थ्य अच्छा होनेपर भी किसी बच्चेके सबधमे यह आशा नही करनी चाहिए कि वह हमेशा नेक ही रहेगा, पर उसे ऐसा भी नही होना चाहिए कि लोगोके लिए कष्टका कारण हो जाय। मोटे तौरपर यही समझना चाहिए कि जिस बच्चेका मानसिक स्वास्थ्य अच्छा होगा वह विश्वसनीय होगा, सहयोग करेगा, मित्रतापूर्ण व्यवहार करेगा, प्रसन्न रहेगा, आज्ञाकारी होगा और प्राय. अपनी अवस्थाके अनुसार समझदारीके साथ व्यवहार करेगा। वह जैसे-जैसे बढता जायगा बडोंकी सहायता लिये बिना ही प्रसन्नतापूर्वक अपना कार्यभार ग्रहण करता जायगा और बिना किसी तरहकी कमजोरी या खिन्नता प्रकट किये नैराश्य तथा विफलताका सामना करने लगेगा।

प्रेमका पाठ

बच्चोमे ईर्ष्याका जन्म प्रेम, भय और क्रोध—तीन स्वाभाविक वृत्तियो-द्वारा होता है। उनमे ये जन्मजात होती है। अनेक विद्वानोका कहना है कि जबतक बच्चा नौ महीनेका नहीं हो जाता उसमे ईर्ष्याकी भावना नही आती। इस उम्रमे अपनी माताके प्रति उसका प्यार पूर्णतया विकसित हो जाता है और वह अपनी प्रत्येक आवश्यकताके लिए अपनी मातापर ही सर्वथा निर्भर रहता है। इस समयतक उसमे अधिकार-भावनाका भी जन्म हो जाता है। जब उसे कोई चीज मिलती है और उसे वह पसद आती है तो वह उसे छोडना नही चाहता, उसे पकडे रहना ही उसे प्रिय लगता है। इसके पहले उसके हाथकी चीज कोई भी ले सकता था, उसे कोई एतराज न होता, पर नौ महीनेका होनेके बाद बच्चा अपनी माके समझावन-बुझावनके बाद बडी मुश्किलसे अपने हाथकी चीज छोडता है। आगे चलकर वह अपनी माको पूरी-पूरी अपनी बनाना चाहता है, क्योकि उसे उसकी मा दुनियाकी प्रत्येक वस्तुसे अधिक प्यारी होती है। अगर बच्चेका पिता उसकी माको प्यार करता है, उसे साथ टहलानेके लिए ले जाता है तो बच्चेका अपनी माको खोनेका भय जाग्रत् हो उठता है और अपना विरोध प्रकट करनेके लिए वह चिल्ला उठ सकता है। बच्चेके इस भावका तमाशा देखनेके लिए यदि पिता अपनी पत्नीपर अपने आधिपत्य तथा प्रेमका और अधिक प्रदर्शन करता है तो बच्चा भयके अलावा क्रोधसे भर जाता है। उसकी सर्वाधिक प्रिय वस्तु—उसकी माताका अपहरण करता हुआ उसका पिता उसे शत्रुके समान प्रतीत होता है। बच्चा मारे क्रोधके हाथ-पाव पटकने लगता है और यदि उसका पिता उसके निकट आ जाय तो वह उसे मारने और काटनेकी कोशिश करता है। लोगोको बच्चेकी यह बेबसी देखनेमे मजा आता है, वे यह नही जानते कि

वच्चेकी जन्मजात वृत्तिया—प्रेम, क्रोध और भय—पूरी तरह जगा दी जानेपर बच्चेके मस्तिष्कपर ऐसी रेखाए छोड जा सकती है जिनका असर जन्मभर रह सकता है। वे यह नही समझते कि अनजाने वे अपने वच्चोको ऐसी शिक्षा दे रहे है जिससे वे बढनेपर समाजके कामके न हो सकेगे, उनका जीवन भय और क्रोधसे भरा होगा और वे भाव आसानीसे घृणामे परिवर्तित होकर नीचता और वदला लेनेकी इच्छाको जन्म देते हैं।

ईर्ष्याका आरंभ

जव नया वच्चा पैदा होता है तो उसके प्रति उसके वडे भाईमे अक्सर ईर्ष्याका भाव पैदा हो जाता है। दो वर्षका वच्चा जव देखता है कि उसकी मा एक नए वच्चेको प्यार कर रही है और दूध पिला रही है तो उसके मनमे भय और क्रोधकी उत्पत्ति होती है जो धीरे-धीरे नवजात शिशुके प्रति ईर्ष्या और घृणामे परिवर्तित हो सकती है।

अक्सर ये वडे बच्चे अपने छोटे भाइयोको सताते देखे गए है। वे क्रोधमे आकर उनपर हमला कर वैठते है, उसके ऊपर वैठ जाते है, मुक्केसे मारते हैं और कभी-कभी लोहे लक्कडसे साघातिक चोट भी पहुचा देते हैं। एक वच्चेने हमारे देखते-देखते दूध पीनेकी वोतलसे मारकर अपने छोटे भाईका सिर फोड दिया था। काममे फसी हुई मा अनजाने सदाके लिए अपने दो वर्षके वच्चेके मनमे लडाई और घृणाके भाव भर देती है। यह वच्चा ज्यो-ज्यो वडा होता जाता है अपनेसे सभी छोटे बच्चोसे घृणा करने लगता है और मौका पानेपर उन्हे सतानेमे नही चूकता। वह आपेमे नही रहता, उसके सभी कार्य ईर्ष्याद्वारा सचालित होते हैं।

पारस्परिक सहायता

वच्चेको इस स्थितिसे निकालनेका, उसे ईर्ष्यालु होनेसे वचानेका उपाय क्या है?

जीवनके लिए एक दूसरेकी सहायता करनेका भाव समाजका प्राण है। इसीके कारण हमारा परस्पर बर्ताव सभ्यतापूर्ण होता है। सहज सहानुभूति सहायताकी जननी है। एक बच्चेको रोते सुनकर दूसरा बच्चा सहानुभूतिके कारण ही रो उठता है। इस वैज्ञानिक तथ्यका अनुसरण कर माताए अपने बच्चोको जगलीकी भाँति व्यवहार करनेसे बचा सकती हैं। मुट्ठी और आखे बद, रग लाल, पिडकी तरह पड़े हुए नवजात शिशुके दर्शन दो वर्ष पहले इस दुनियामे आए उसके बडे भाई साहबको करा देने चाहिए। बडे भाई साहब उसका रोना भी सुनें और जाने कि उनका छोटा भाई भूखा है। तब वे दूध पीनेमे उसकी सहायता करेंगे और उसकी देखभाल भी रखेगे। बडे बच्चेको यह अनुभूति करा दी जाय कि छोटा बच्चा उसकी चीज है—उसका भाई है। इस रीतिसे वह अपने भाईको प्यार करना सीखेगा और प्यार करने लगनेपर वह उसे अपनी सर्वोत्तम निधियोमे भी हिस्सा देगा।

कई भयभीत माताए अक्सर पूछती हैं कि यदि बडे बच्चेको छोटे बच्चेको छूने दिया जाय तो ऐसा तो न होगा कि वह उसे मार दे या दबा दे ? उन्हे हमारी सिखावन है कि यदि वे अपने द्विवर्षीय बालकको पारस्परिक सहायताकी शिक्षा न देगी तो निश्चय ही उनका लाडला अपने छोटे भाईको नुकसान पहुचायेगा, यही नही वह स्वय अपनी हानि भी करेगा। उसके निर्मल चरित्रमे ईर्ष्याके काले धब्बे पड जायेंगे।

एक मनोविज्ञानकी पडिता माताने एक बार अपने कुछ अनुभव एक पत्रिकामे लिखे थे जिनमेसे कुछ अपने पाठकोको भेट करनेका लोभ हम सवरण नही कर पा रहे हैं।

'मैं अपने बच्चेको यह सिखानेका हमेशा ध्यान रखती थी कि जब मैं किसी दूसरे बच्चेको या उसके किसी खिलौनेको प्यार करू तो वह खुश हो। इसके लिए मैं दूसरोको प्यार करते वक्त अपने बच्चेकी ओर मित्रता-पूर्ण आखोसे देखती और हसती रहती थी। इसी तरह मैंने उसे उसकी

गुडिया और काठके कुत्तेको प्यार करना सिखाया। ये चीजें जब पहले-पहल उसे दी गईं तो वह उन्हे लेता ही न था और उसकी ओर तिरछी नजरसे देखता था। मैं अपने बच्चेको देख-देखकर इन खिलौनोसे खेलती और प्यारसे हँसती रही और उसे इन्हे प्यार करनेको कहती रही। थोडी ही देरमे वह मेरे साथ खेलनेमे शरीक हो गया और खिलौनोको प्यार करने लगा।

'अपने मा-बापको आपसमे प्यार करते देखकर बच्चोको अक्सर बुरा लगता है, पर हमे ऐसा करते देखकर मेरा बच्चा खूब खुश होता था। वह हँसता था और खुशीके मारे चिल्लाने लगता था। कभी-कभी अपनी प्रसन्नताके प्रदर्शनके लिए वह हम लोगोके चारो ओर लिपट जाता था और हम लोगोकी ओर मुह ऊचा करके हसते हुए देखता था।"

सफल माता बननेके लिए यह आवश्यक नही है कि प्रत्येक गृहिणी मनोविज्ञानकी पडिता ही हो, पर यह आवश्यक है कि वह अपने बच्चेके दिमागमे उलझे विचारोकी चलती आधीका प्रेमपूर्वक अध्ययन करे ताकि बच्चेको वह दुनियाका सही-सही ज्ञान दे सके, अन्यथा वह आगे चलकर जीवनमे सुखी नही होगा और न उसका चरित्र ही उच्च होगा।

मानसिक शिक्षा

जानकारोका कहना है कि सात वर्षकी अवस्थातक मनपर जो छाप पडी होती है वही सारे जीवनको प्रभावित करती है और चौदह वर्षकी अवस्थाके बाद मनोवृत्तिमे शायद ही कोई परिवर्तन होता है। सबल मस्तिष्कवाले ऐसे भी कुछ लोग है जिन्होंने युवावस्थामे अपनी मनोवृत्तिमे परिवर्तन किया है, पर उनकी सख्या नगण्य है और उनपर भी शैशव तथा कौमारका कुछ-न-कुछ प्रभाव है ही। अच्छी आदते भी बुरी आदतोकी ही तरह आसानीसे डाली जा सकती है। माता-पिता चाहे तो अपनी सतानको स्वस्थ शरीर और स्वस्थ मन प्रदान कर सकते हैं, और इस कर्तव्य-का पालन आनददायक भी होता है, पर स्वय उनका जीवन अव्यवस्थित होनेके कारण अधिकाश बच्चे इस उत्तराधिकारसे वचित रह जाते हैं।

मनोवृत्तिकी प्रधानता

जीवनकी सफलता मनोवृत्तिपर ही निर्भर है। मन ही शरीरको योग्य बनाता है। जन-साधारणकी दृष्टिमे किसी व्यक्तिकी सफलता कितनी ही बडी क्यो न जान पडे, पर अगर उसमे सभी वस्तुओंके साथ सामजस्य स्थापित करनेकी शक्ति नही है, दृष्टिकोण और समझ ठीक नही है, तो उसकी सफलता बिलकुल निस्सार है। लोग साधारणत सपत्तिको ही सफलता माना करते है, पर हमने तो निर्धनोकी अपेक्षा श्रीमानोको ही अधिक दु खी देखा है। शरीरकी आवश्यकता पूर्ण हो जानेपर उससे सबद्ध कष्टका अत हो जाता है, पर मानसिक अभावकी पूर्ति बोधसे ही हो सकती है जो आरभिक अवस्थामे ही प्राप्त होना चाहिए।

हमारी सारी समस्याए—भ्रष्ट राजनीति, बेईमानी, व्यापारमे लोभ, युद्ध, अराजकता, मद्यादिका व्यसन, अयोग्यता, अपराधकी मनोवृत्ति

आदि—शैशवसे ही सबद्ध हैं। स्वस्थ शरीर और सबल मस्तिष्कवाला प्रत्येक व्यक्ति समाजका उपयोगी अग होता है। साधारण श्रेणीके आदमीमे इससे अधिककी आशा नही की जा सकती। सब लोग प्रख्यात नही हो सकते और यह आवश्यक है भी नही ।

तरुण और प्रौढ अवस्थाकी मानसिक क्रियाए और आदते शैशवमे पडी हुई छाप और आदतोपर ही निर्भर है, इसलिए बच्चोका लालन-पालन अच्छे वातावरणमे होना चाहिए। अगर शैशवमे अच्छी शिक्षा मिली है तो तरुण होनेपर ऐसी कोई बुरी आदत नही पडेगी जिसपर विजय पाना कठिन हो। आदतोका बधन आसानीसे नही टूटता। तबाकू और शराबकी लतपर विजय पाना कठिन है, पर मानसिक दुष्प्रवृत्तियोपर विजय पाना और भी कठिन है।

पालनेमें ही नींव

यथासभव बच्चेको एकातमे रहने दीजिए। कुछ माताओमे प्यार और अज्ञानकी मात्रा इस कदर ज्यादा होती है कि वे थोडी-थोडी देरपर बच्चेको गले लगाती, प्यार करती और मित्रो-सबधियोको बार-बार दिखलाती रहती है। इससे वह चिडचिडा हो जाता है, बराबर ध्यान देते रहनेकी माग करता है और ध्यान न देनेपर क्रुद्ध होकर रोने लगता है। इस प्रकार बुरे स्वभावकी नीव पालनेमे ही पड जाती है। रोनेसे ही मतलब पूरा होते रहनेसे आगे चलकर उसमे मचलने और रूठनेकी आदत पड जाती है।

काम निकालनेका तरीका बच्चे बहुत जल्द सीख लेते है। अगर वे अप्रिय बनकर यह कर सकते हैं तो यह मानी हुई बात है कि वे अपना स्वभाव बिगाड लेगे। अगर बच्चोको यह अनुभव करा दिया जाय कि अप्रिय बननेसे कोई लाभ नही होता, तो उनकी इस प्रवृत्तिका शीघ्र ही अत हो जायगा। माता आरभमे तो अधिक ध्यान दे सकती है, पर दस-

वारह वर्षकी अवस्था हो जानेपर, जब उसे बिगडे हुए बच्चेकी देखभाल करनी पडती है, स्थिति बिलकुल दूसरी हो जाती है।

प्यारके नामपर अपराध

वहुत-से मा-बाप यह समझते हैं कि हम बच्चोमे लगे रहकर उनके प्रति प्यार प्रकट कर रहे हैं, पर दरअसल वे उनको इस प्रकार शारीरिक और मानसिक ह्रासके मार्गपर ले जाते हैं, सच्चे प्यारमे सहायता, दया और धीरता होती है, पर नकली प्यारमे होहल्ला, दिखावा और अधीरता होती है। उनके लिए जो आवश्यक हो वही कीजिए, अनावश्यक कार्य करना बुरा होता है। सहायक होना तो उन्हे बहुत जल्द सिखाया जा सकता है। सफाईसे रहने, अपनी चीजे करीनेसे रखने, कपडे पहनने आदिकी शिक्षा नौकरोके रहते हुए भी आरभिक जीवनमे ही दी जानी चाहिए।

धनी परिवारोंके बच्चे

धनी परिवारोके वहुतसे बच्चे वस्तुत भाग्यहीन होते है। गरीब तो अपनी आर्थिक समस्याओमे उलझे रहनेपर भी बच्चोपर कुछ ध्यान दे लेते हैं, पर अमीर लोग धन-सग्रह और सामाजिक स्तर ऊचा करनेके प्रयत्नमे इस कदर व्यस्त रहते हैं कि बच्चोके लिए उनको समय ही नही मिलता और वे नौकरोके जिम्मे कर दिए जाते है। क्रीतसेवा चाहे कितनी ही अच्छी क्यो न हो, वह वात्सल्य प्रेमकी समता नही कर सकती। सेवा भी अधिक नही होनी चाहिए, इससे बच्चे स्वार्थी हो जाते हैं, दूसरोका स्वत्व हरण कर अपनी कोई चीज देनेका नाम भी न लेगे। यह सर्वथा अनैतिक है। जीवनमे क्षति और पूर्तिका ही सिद्धात चलता है, आदानके साथ प्रदान भी लगा हुआ है। उन्हे दूसरोका खयाल रखनेकी शिक्षा मिलनी चाहिए, हमेशा नौकरोपर हुकूमत ही नही चलाते रहना चाहिए। नौकरोको तो यह बुरा मालूम होगा ही, उनके लिए भी हानिकर होगा।

परिवार चाहे जितना भी समृद्ध हो, बच्चोको जीविका प्राप्त करनेकी शिक्षा मिलनी ही चाहिए। उनके मनमे सेवाका भाव भी दृढ कर देना चाहिए। आलस्यमय जीवनको कभी सफलता नही मिलती—कामसे भागनेवालो और समय नष्ट करनेवालोका जीवन कभी सुखमय नही होता। अच्छे कार्योंसे ही जीवनमे सर्वाधिक सतोष प्राप्त होता है। भावावेशयुक्त प्रेम और मौजके दिन ज्यादा नही चलते। प्रेम और उत्साहसे काम करना कल्याणकर होता है, पर कामके अभावमे प्रेम और उत्साह पतनकी ओर ले जाते है।

आज्ञापालनकी शिक्षा

बच्चोके विकासका काल बहुत लबा होता है इसलिए मा-बाप तथा परिवारके अन्य लोगोके साथ उनका मेल बैठना बहुत जरूरी है। इसके अभावमे मा-बाप, विशेषकर माता बहुत जल्द ऊब जाती है जिसकी बच्चो-पर बहुत गलत छाप पडती है। सघर्ष बचाने तथा अच्छा फल प्राप्त करनेके लिए बच्चोको आरभसे ही आज्ञापालनकी शिक्षा दी जानी चाहिए। आज्ञापालनसे ही शासन करनेकी योग्यता प्राप्त होती है। जिन परिवारो-मे मा-बापके शब्द कानून जैसे माने जाते है उनमे सघर्ष बहुत कम होता है। अगर बच्चे यह जान जाय कि मा-बाप जो कहते है वह होकर ही रहेगा, हीला-हवाला करना बेकार है, तो कोई झमेला नही उठ खडा होगा। आज्ञाका उल्लघन करनेवाले बच्चोकी हालत बिलकुल भिन्न होती है। मा-बापको बार-बार आदेश देना पड़ता है और प्राय आदेशका पालन नही होता।

बच्चोको कुछ समझ हो जाय तभीसे आज्ञापालन और तत्परताकी शिक्षा दी जानी चाहिए। पीछे यह कार्य कठिन हो जाता है और अवस्थाके साथ कठिनाई भी बढती जाती है। बच्चे इतने अबोध होते हैं और उनमे इतनी आत्मप्रवचना होती है कि वे यह बात समझ ही नही पाते कि अनुभव

और विवेकके अभावमे हम अपना मार्ग निर्धारित नही कर पायेंगे। अपनी हानि और दूसरोको परेशानी होनेपर भी वे इस अधिकारका त्याग करनेको तैयार नही होते। कडा पडनेका अवसर आनेपर कडाई वरतनी ही चाहिए, पर कडाईके साथ भी सहयोगकी ही भावना होनी चाहिए।

वच्चोको सुधारनेका माता-पिताका ढग भिन्न-भिन्न हुआ करता है, पर यह वात अच्छी तरह समझमे आ जानी चाहिए कि आज्ञापालन आरभिक योजनाका एक मुख्य अग है। उदाहरणार्थ, अगर वच्चा खानेके लिए वुलाया जाता है तो उसे फौरन पहुच जाना चाहिए, अगर उसमे देर करनेकी प्रवृत्ति देख पडे तो उसे साफ-साफ कह दिया जाय कि वुलानेके साथ ही न आनेपर इस वक्त खाना न मिलकर दूसरे ही वक्त मिलेगा, और यही किया भी जाय। यह निर्दयता नही है। एक वक्त खाना न खानेसे कोई क्षति भी नही होती। इस उपायका अच्छा असर होता है। इसी तरह उनके करनेके जो भी छोटे-मोटे काम हो उन्हे उनसे उत्काल कराना चाहिए। हा, मा-वापको भी समझदारीसे काम लेना चाहिए, अनावश्यक काम करनेके लिए वार-वार आज्ञा न देते रहे।

प्रेमका बंधन

जिस परिवारमे मा-वाप और वच्चे एक-दूसरेको जानते-समझते और प्यार करते हैं वह वहुत सुखी होता है। जिन्हे अपने वच्चोसे घनिष्ठता प्राप्त करनेका समय नही मिलता वे जीवनका एक ऐसा अग खो देते है जो न तो धनसे प्राप्त हो सकता है और न समाजमे प्राप्त ऊचे स्थानसे। कुछ लोग यह घनिष्ठता प्राप्त करनेमे वहुत विलव कर देते हैं। जव वच्चे वहुत छोटे रहते है तभी वे वहुत प्रिय होते हैं। उस समय जो प्रेमवधन प्रस्तुत होता है उसे समय या सकट छिन्न-भिन्न नही कर सकता। वडे हो जानेपर इस प्रकारका सवध स्थापित करना असभव हो जाता है। इस अवस्थामे वे अपने माता-पिताको भी उसी आलोचक दष्टिसे देखते

हैं जिससे वे दूसरोको देखते है। उनसे मैत्रीभाव हो तो भी प्रेमका अभाव ही होता है। दाम्पत्य प्रेम अस्थायी होता है, पर माता-पिताके साथ संतान-का जो प्रेम होता है वह बराबर बना रहता है।

शारीरिक दंड

शारीरिक दंडका प्रयोग किया जाय या नही, इसका निश्चय मा-बापको ही करना चाहिए। बहुतेरे लोग बच्चोके कामोमे दोष ही देखा करते हैं और 'यह मत करो', 'वह मत करो'की रट लगाया करते है। बेचारे बच्चे समझ ही नही पाते कि क्या किया जाय, क्या न किया जाय। बच्चोमे आगेकी बात सोचनेकी शक्ति नही होती, दो बाते भी एक साथ नही सोच सकते। फल यह होता है कि वे भूल जाते हैं कि क्या नही करना है, और कर देनेपर मा-बाप उनपर बरस पडते है। मा-बापको बहुत-सी बातोकी ओरसे आख-कान मूद भी लेना चाहिए। जो माताए बराबर मना ही करती रहती है उनके स्वरमे जल्द ही कर्कशता और चिडचिडापन आ जाता है जो सबको बुरा मालूम होता है। आवश्यकता न होनेपर बच्चोके संबंधमे हस्तक्षेप न करनेका नियम ही बना लेना चाहिए और एक समय एक ही काम करनेको कहना चाहिए, बहुतसे कामोकी आज्ञा देनेपर वे भूल जायेगे।

अगर मा-बाप शारीरिक दड देनेका निर्णय करें तो उन्हे उसके उचित होनेका निश्चय होना चाहिए। अनुचित दड हमेशा हानिकारक होता है। बहुतसे लोग तो इतने क्रोधाभिभूत हो जाते हैं कि सिर्फ गुस्सा उतारनेके लिए बच्चोको पीटते है। यह बहुत बुरा होता है। अगर ठंढे दिमागसे विचार करनेपर दड देना आवश्यक जान पडे तो शातिपूर्वक ही दड दिया जाय। अरक्षित बच्चेपर क्रुद्ध पिताका पाशविक आक्रमण कायरपनका सूचक है। पीछे, उत्तेजना शात हो जानेपर, अपनी गलतीपर अफसोस करना पड़ता है, पर उनमे इतना नैतिक बल नही होता या इतना मिथ्या-

भिमान होता है कि इस अन्यायके लिए क्षमा भी नही माग सकते। ऐसे लोग बच्चोको कष्ट देकर प्रेमका अत कर देते हैं। बच्चोमे उचित-अनुचितकी बडी तेज परख होती है।

डराने-धमकानेसे हानि

"अमुक बात बुरी है"—इस तरहका वाक्य बच्चोंसे कभी न कहा जाय, केवल अच्छी बातोपर जोर दिया जाय। बार-बार बुरी चीजोका नाम लेते रहनेसे वे ही उनके दिमागमे बनी रहेगी। बच्चोको डराना भी ठीक नही है। उनके रोने या कोई बात न माननेपर, लोग हौवेकी बात कहते, अधेरेमे छोड आने या किसी बुरे आदमी या जानवरसे पकडवानेकी धमकी देते है। भय सबके लिए बुरा होता है। शरीर और मन दोनोको इससे क्षति पहुचती है। बढते हुए बच्चोके लिए तो यह खास तौरसे बुरा होता है। बचपनमे मनमे घुमा हुआ डर बहुतोके जीवनभर बना रहता है। बचपनमे डराए गए बहुतसे लोग जवान होनेपर भी अधेरेमे बाहर निकलनेसे डरते है।

भोजनसंबंधी नियमोंका ज्ञान

बच्चोको भोजनसबधी नियमोका भी कुछ ज्ञान करा देना चाहिए। भीतर बेचैनी मालूम होनेपर भोजन हानिकारक होत कम चबाने या। आवश्यकतासे अधिक खानेसे शरीर और मन दोनोका अपकर्ष होता है—यह समझ गणितका कोई प्रश्न हल करनेकी योग्यतासे अधिक मूल्यवान् है, पर ऐसी बातोकी शिक्षा इस ढगसे दी जाय कि उन्हे यह भान भी न हो कि शिक्षा दी जा रही है।

व्यावहारिक शिक्षा

वच्चोको शिक्षा देनेके दो उद्देश्य होते है—एक तो यह कि वे स्वस्थ और मदाचारी वने रहकर अपनेको सुखी और परिस्थितियोको अनुकूल वनाने योग्य हो जाय और दूसरा यह कि वे अपनेको पहले अपने परिवारके छोटेसे समाजके और बादमे स्कूल तथा ससारके वडे समाजके उपयुक्त वना सके। कुछ काल पूर्व मा-वाप लडकेसे कडाईके साथ अनुशासन आदि-का पालन कराकर उसे परिवारका एक योग्य सदस्य बनानेका प्रयत्न करते थे और इस प्रयत्नमे सफलता प्राप्त करनेका अर्थ वच्चेके व्यवितगत सुखका नाश ही होता था, पर आजकलके आजाद वच्चे न तो व्यक्तिगत रुपसे सुखी हो पाते है और न परिवार और समाजके योग्य सदस्य ही। ऐसा वच्चा शायद ही कही मिलेगा जो अनुशासनहीन वातावरणमे पलकर उन वच्चोके समान सुखी और परिवारके कल्याणका साधन हो जो शैशवसे ही सद्व्यवहार, अच्छे रहन-सहन और दूसरोके प्रति सद्भावनावाले वातावरणमे पले हैं। सच पूछिए तो माता-पिताके प्यारमे ही वह वातावरण प्रस्तुत हो जाना चाहिए जिसमे बच्चा कुछ साधारण कर्तव्यो और बुद्धि-मत्तापूर्वक वनाये हुए कार्यक्रमकी परिधिमे अपनी ही गतिसे सुखपूर्वक आगे वढता जाय।

माताका कर्तव्य

शिक्षा ऐसी ही होनी चाहिए जिसमे वच्चा वडा होनेपर मा-वापपर अवलवित न रहकर अपने पैरोपर मजेमे खडा होने योग्य हो जाय। दरअसल यह कर्तव्य माताका ही है, पर इस कर्तव्यके पालनमे पिताकी अपेक्षा उसे अधिक कठिनता होगी, फिर भी जवतक वह इस कार्यको सपन्न नही करती उसका कर्तव्य पूरा नही होता। जो माताए अशिक्षा और

अज्ञानके अधकारमे पडी हुई हैं उन्हे तो इस कर्तव्यका ज्ञान भी होना मुश्किल है। कुछ माताए आवश्यकतासे अधिक लाड-प्यार कर बच्चेको इस कदर परावलवी और आत्मवलसे शून्य वना देती हैं कि वह स्वतत्र रूपसे आगे नही बढ सकता जिसका दु खद परिणाम यह होता है कि वह भविष्यमे कभी अपनेको समाजके योग्य ही नही बना पाता। उसका दापत्य जीवन भी अच्छा नही होता, क्योकि उसमे अज्ञात रूपसे पत्नीके बजाय माताकी आवश्यकता और चाह बनी रहेगी। बच्चोके वालिग हो जाने और स्वय कर्ता-धर्ता बन जानेपर उनके और माता-पिताके बीच नये प्रकारका प्रेम और मैत्रीका भाव वढता है और अगर उनका शैशव अच्छे ढगसे व्यतीत हुआ है तो यह मैत्री और प्रेम दिनोदिन गाढा ही होता जाता है।

कहानीद्वारा शिक्षा

छोटे बच्चोको कथा-कहानी बहुत प्रिय होती है। ऐसी बहुत-सी कहानिया गढकर उन्हे सुनाई जा सकती हैं जिनमे नायक बच्चे हो और कहानी सुननेवाले बच्चे अपनेको उन नायकोके स्थानपर प्रतिष्ठित कर सके। चरित्र-निर्माणकी शिक्षा आदर्शसे ही मिलती है, इसलिए आदर्शात्मक कहानिया भी इस उद्देश्यकी पूर्तिमे वडी सहायक होती हैं। सीधे नसीहत देनेका खयाल भी नही होना चाहिए, क्योकि इसका परिणाम उलटा ही होता है। कहनेका अभिप्राय यह कि वच्चेको जैसा बनाना अभीष्ट हो उसका चित्र उसके मानसमे विद्यमान होना चाहिए जिसमे उसका अतर्मन उसे वैसा वननेके लिए प्रेरणा प्रदान करता रहे। कल्पनाकी उडान इस कार्यमे वाधक नही होगी।

बच्चे क्यों खीझते हैं ?

अगर वच्चा चीखता-चिल्लाता और क्रोध करता या खीझता है तो

यह माता-पिताका ही दोष समझा जाना चाहिए, क्योंकि वे प्राय ऐसे कार्य कर बैठते हैं कि बच्चेकी सहन-शक्तिके परे हो जानेपर उसका धैर्य छूट जाता है। कभी-कभी माता-पिता यह नही समझ पाते कि बच्चेकी आवश्यकता या कहनेपर ध्यान न देना उसके लिए कितना कष्टकर होता है। कुछ लोग तो जान-बूझकर बच्चेकी ओर ध्यान न देकर दूसरोसे बात करते रहते हैं और बच्चेको क्षुब्ध बनाए रहते है। उनकी यह धारणा होती है कि बच्चेको आत्मनियत्रण और प्रतीक्षा करनेका अभ्यास होना चाहिए। कुछ हदतक यह खयाल ठीक हो सकता है, क्योकि बच्चेको कामोंके क्रमका ज्ञान होना चाहिए और चलते हुए वार्तालापमे बाधक नही होना चाहिए, पर माता-पिताको भी यह विवेक होना चाहिए कि कैसे अवसरोपर बच्चेकी आवश्यकतापर तत्काल ध्यान देना चाहिए और कब उससे प्रतीक्षा करानी चाहिए। स्थितिका रूप चाहे जैसा भी हो, पर बच्चेको इस तरह परेशान करनेसे उसे कोई शिक्षा नही मिलती।

बच्चा कभी-कभी खीझ भी जाया करता है जिसे माता-पिता उसकी नटखटी समझ लेते हैं। यह स्थिति प्राय उस समय प्रस्तुत होती है जब वह अपनी सारी शक्ति लगाकर कोई काम करता होता है, र ठीक तरहसे न होते देख माता झटसे काम पूरा कर देकर सतोषका अनुभव करती है। यही बात बच्चेको खिझानेवाली हो जाती है, क्योकि काम पूरा करनेके लिए तन-मनसे लगे होनेपर उसे बीचमे ही अपने प्रयत्नमे विफल होकर कामसे विरत हो जाना पडता है। इस हालतमे बच्चा कभी-कभी खीझकर चिल्ला पडता है और माताको मार भी बैठता है। उसका यह कार्य नटखटी-मे शामिल किया जा सकता है, पर इसका मूल कारण माताका ही हस्तक्षेप होता है। इस प्रकारके बहुतसे कार्य बच्चे तथा माताकी ओरसे होते रहते हैं, पर माताको यह स्मरण रखना चाहिए कि किसी तरह बच्चेको खिझाना —चाहे शब्दसे हो या कार्यसे—शिक्षा नही बल्कि बच्चेको तग करना है और यह माताका बहुत बडा दुर्गुण समझा जायगा।

जेब-खर्च

बच्चेको शैशव—लगभग ५ वर्षकी अवस्था—से ही जेबखर्चके लिए कुछ पैसे देना अच्छा सिद्धात है, क्योकि इसके व्यय और बचतसे वह इस विषयमे बहुत कुछ सीख ले सकता है। बच्चेकी अवस्था तथा माता-पिताकी आर्थिक स्थितिके अनुसार इस रकममे कुछ अतर हो सकता है, पर उसकी अवस्था बढनेके साथ-साथ यह रकम भी कुछ-कुछ बढाते जाना चाहिए। सस्तीके जमानेमे जो रकम दी जाती थी वह इस महगीके जमानेमे बहुत कम होगी। यह रकम नियमित रूपसे दी जानी चाहिए और आकस्मिक व्ययसे इस रकमका कोई सबध नही होना चाहिए, क्योकि समय-समयपर बच्चा कोई खास चीज खरीदनेके लिए आग्रह कर सकता है। उसे अपना पैसा अपने ढगसे और इच्छानुसार खर्च करने देना चाहिए, पर कुछ लिख-पढ लेने योग्य हो जानेपर खर्चका हिसाब रखनेकी शिक्षा अवश्य देनी चाहिए। इस प्रकार वह रुपए और उसे बचानेका महत्त्व आसानीसे समझ जायगा। अगर वह और कुछ खरीदना चाहे, पर नियमित रूपसे मिलनेवाली रकम खर्च करना न चाहे या पर्याप्त न हो तो उसे उपार्जन करनेके लिए कुछ छोटे-मोटे कार्य करनेके लिए भी प्रोत्साहित करते रहना चाहिए, पर यह काम परिवारकी सहायताके लिए नही होना चाहिए और ऐसा भी नही होना चाहिए जो समाजके लिए उपयोगी न हो। पारिश्रमिक भी सभी कामोके लिए न दिया जाय, क्योकि कुछ काम ऐसे भी होते है जिन्हे परिवारके सब लोगोको मिलकर करना चाहिए। अतिरिक्त कार्यके लिए दिया जानेवाला पारिश्रमिक माकूल होना चाहिए और वह बच्चेका अपना धन होना चाहिए। बच्चेसे अधिक कामकी आशा रखकर उसकी प्रवृत्तिको कुद भी नही करना चाहिए, उसका अधिक समय खेल-कूदमे ही लगना चाहिए।

बच्चोंके प्रति व्यवहार

यह कोई जरूरी नही है कि आपका लडका आपके ही विचारोका हो। प्राकृतिक नियमोके आप चाहे जितने भी कायल और समर्थक क्यो न हो, पर अपने बच्चेसे यह आशा करना कि वह भी आपकी ही तरह आपके सिद्धातोको, जिन्हे कुछ लोग सनक भी कहते-समझते होगे, प्रचार करनेका प्रयत्न करेगा, उचित नही माना जा सकता। यह आवश्यक भी नही है, क्योकि अगर हम कुछ खास बातोमे ढीलापन ला दें तो बच्चे और उसके समवयस्को या मित्रोका आपसका सबध उसे दड देकर खराब करनेकी मूर्खता न कर व्यवहारमे प्राकृतिक नियमोका मजेमे पालन कर सकते हैं।

सबसे विषम अवस्था

बच्चोकी किशोरावस्था, जो लगभग ग्यारहवे वर्षसे आरम होकर लगभग सोलहवें वर्षतक चलती है, उनके लिए सबसे विषम होती है। शरीरमे होनेवाले परिवर्तनो और विस्तृत होते हुए जीवन-सबधी दृष्टि-कोणसे उत्पन्न होनेवाली कठिनाइया घरकी परिस्थितियोके कारण कम भी हो जा सकती है और बहुत बढ भी जा सकती हैं। अगर बच्चेमे माता-पिताके प्रति सहानुभूति न हो तो इस अवस्थाका आगमन होनेपर उनके साथ उसका सघर्ष अनुचित रूपमे बढ जा सकता है। अगर इस तरहका कोई चिह्न देख पडे तो अपने सिद्धातोका पालन करानेका आग्रह अग्निमे घी डालनेका काम करेगा और आपसकी तनातनी इस कदर बढ जायगी कि वह शीघ्र ही विद्रोहका रूप धारण कर लेगी। यह कोई जरूरी नही कि इस विद्रोहका कारण आपका सिद्धात उसे पसद न आना हो, बल्कि यह होगा कि वह इस समय ऐसी ही अवस्थासे गुजरता होता है जिसमे वह अपने घरको, यहातक कि मा-बापको भी नापसद करने लगता है और घरमे जो

भी चीज प्रचलित व्यवहारके अनुरूप नही होगी वह उसमे विशेष रूपसे कुढन पैदा करनेवाली होगी।

पारिवारिक ऐक्यका भग होना बहुत बुरा होता है। हम लोगोमे ऐसा कोई नही होगा जो वात्सल्यप्रेम खोना पसद करे, फिर भी बहुतसे माता-पिता और बच्चे इस अवस्थामे आपसका सवध बहुत कटु वना देते है। यह अवस्था प्रस्तुत हो जानेपर आपसमे सतोपजनक रूपमे वरतना बहुत कठिन हो जाता है। इस तरहकी कठिनाइयोंसे वचनेका सबसे अच्छा और सरल उपाय यह है कि पूर्ववर्ती कालमे एक-दूसरेको समझने-की प्रवृत्ति उत्पन्न की जाय।

आरभिक कालसे ही मा और वच्चेमे परस्पर विश्वास और सम्मान-का भाव होना आवश्यक है। अगर भय—डाट-डपट, भर्त्सना, शारीरिक दड आदि—के द्वारा शैशव और कुमारावस्थामे अनुशासन कायम रखनेका प्रयत्न किया गया है तो किशोरावस्थामे, जव कि वच्चेके साथ इस तरहका वर्ताव करना सभव नही हो सकता, घरके नियत्रणोके विरुद्ध उसमे प्रति-क्रिया हो सकती है, पर अगर युक्तिसगत आधारपर—छोटी उम्रसे ही अच्छी आदते डालकर, अच्छे उदाहरण प्रस्तुतकर, समझा-वुझाकर और अच्छे कामोके लिए पुरस्कृतकर—अनुशासनका पालन कराया गया है तो इस कालमे विरोधकी स्थिति प्रस्तुत होनेकी सभावना नही रहेगी।

किशोरावस्थामे बने रहनेवाले आपसके सम्मान और सहानुभूतिकी नीव भी माता बच्चेकी अल्पावस्थामे ही उसकी वातोपर ध्यान देकर डाल सकती है। प्राय माताको इतनी कम फुरसत मिलती है और वच्चोकी योजनाए और समस्याए पारिवारिक कार्योके मुकावलेमे इतनी महत्त्वहीन होती हैं कि माताए प्राय उनकी वाते ध्यानसे नही सुनती। अगर नौ-दसकी अवस्थामे भी वच्चेको यह विश्वास हो जाय कि माता उसकी वातोपर पूरा ध्यान देगी और उसकी समस्याओके प्रति सहानुभूति दिखलायेगी और कभी-कभी कठिनाईसे निकलनेका मार्ग सुझा भी देगी तो आगे चलकर

भी अपनी कठिन समस्याओके हलके लिए उसके माताका सहारा ढूढते रहनेकी बहुत कुछ सभावना रहेगी, इसके विपरीत अगर माता-पिताने शैशवकालकी समस्याओको समझने और सहानुभूति दिखलानेपर ध्यान नही दिया तो बडा होनेपर वह अपनी समस्याए उनके सामने रखनेका शायद ही खयाल करे।

दूसरोकी समस्याओको कोई समस्या न मानकर टाल देना, कम महत्त्वकी मानना या उनके पीछे माथापच्ची करना, बेकार समझना आसान होता है, पर यह अच्छा नही है। अगर बच्चोकी समस्याओके प्रति भी ऐसी ही मनोवृत्ति दिखलाई गई तो उनमे यह विश्वास उत्पन्न नही होगा कि आगे चलकर आवश्यकता पडनेपर माता-पिता उनकी समस्याए समझने और उनके प्रति सहानुभूति दिखलानेका खयाल रखेगे।

विरोधका कारण

अगर चौदह या इससे अधिककी अवस्थामे बच्चेमे विद्रोहकी भावना बढती हो, विशेषकर उस हालतमे जब आपसमे मैत्री, सहयोग और सहानुभूतिका भाव नही उत्पन्न किया गया है, तो वे माता-पिता जो किसी अच्छी बातमे बहुत विश्वास करते हैं और अपने बच्चेके सबधमे उसे ही बरतना चाहते हैं, यह देखेगे कि वही बात विरोधका कारण बन रही है। उदाहरणके लिए प्राकृतिक आहारकी ही बात ले लीजिए। माता-पिता तो यह खयाल करते है कि बच्चेके शारीरिक लाभके विचारसे विशेष प्रकारका आहार रखनेका आग्रह सर्वथा न्याय्य है और बच्चेको स्कूलमे दिया जानेवाला नाश्ता न लेने देकर उसके लिए खास तरहका नाश्ता घरसे भेज सकते हैं। अगर बच्चा घरकी चीजोसे सतुष्ट है तब तो कोई बात ही नही, पर अगर वह उन्हे नापसद करे और अपने साथियोसे भिन्न पदार्थ खाना बुरा माने तो घरसे नाश्ता भेजना बद कर देना चाहिए। अगर बच्चा अपने मित्रो या सहपाठियोंसे मिलना चाहता है या उनके साथ

भ्रमणमे बाहर जाना चाहता है तो यह जानते हु
भिन्न प्रकारका, औरो-जैसा ही होगा, उसे जानेसे न
विरोधसूचक विचारोको मुहपर नही लाना चाहिए

हठी बच्चे

बच्चेकी दुनिया

ज्यो-ज्यो बच्चा बडा होता है उसकी आखे देखने लगती है और नाडीसस्थानका बल बढनेके साथ-साथ उसका सबध बच्चेके दिमागके साथ जुडने लगता है। इस समय बच्चा कोई चमकीली-सी चीज—जैसे कोई खिलौना—पकडनेकी हालतमे हो जाता है, धीरे-धीरे वह हाथको हिलाने लगता है और खिलौनेको अपने खटोलेपर पटक देता है। इस वक्त बच्चेकी खुशी बढ जाती है, उसकी खुशीमे देखने और कुछ करनेकी खुशी शामिल हो जाती है। यही उसकी दुनिया है और उसे इससे जो खुशी मिलती है उससे प्रतीत होता है कि उसे उसकी दुनिया बहुत मधुर लगती है। जब उसकी बोलनेकी शक्ति बढती है तब अपनी इस प्रसन्नताको प्रकट करनेके लिए वह किलकारिया मारता है।

बच्चा धीरे-धीरे शोर करना सीख जाता है। मान लीजिए ऐसे वक्त किसीके सिरमे दर्द है, बच्चेका शोर करना उससे सहन नही होता। वह बच्चेके हाथसे झिडककर खिलौना छीन लेता है और उसके हाथोको दबाकर उसे चादर उढा देता है। बच्चा विवश हो जाता है और आप जानते है विवशता उसमे क्रोध उत्पन्न करती है जिसे व्यक्त करनेके लिए वह चिल्लाने और रोने लगता है। उसके आनद और खुशीकी सारी दुनिया ही उजड गई है और वह चादरके छोरसे बाध दिया गया है। विवशताके इस बधनसे मुक्त होनेके लिए वह पागलकी तरह प्रयास करता है। यदि उसके जीवनमे इस प्रकार क्रुद्ध होनेके मौके बराबर आते रहते है तो उसमे घृणा करनेकी शक्ति उत्पन्न हो जाती है। इस प्रकार हम बच्चेको दुनियासे घृणा करना एव उससे लडना सिखा देते है।

भयका तूफान

जव बच्चा जरा बडा होता है और घुटनोके बल चलने लगता है तब वह हर चीजके निकट पहुचनेकी कोशिश करता है। वह देखिए उसने अपने पिताजीकी सोनेकी घडी उठा ली कितना सुदर खिलौना है वह! अब वह उसे धरतीपर पटकने जा रहा है। पिताजीने देखा। डाटा बच्चेको। दौडकर उसे दो धौल लगाये और उसके हाथसे घडी छीन ली। बच्चेकी सुनहली चिडिया उड गई। पिताजीके डाटनेकी आवाज और मारसे हुई पीडा उसके मनमे क्रोध उत्पन्न कर देती है। बेचारा बच्चा जमीनपर लोट जाता है और जोर-जोरसे रोने लगता है—वह दुनियाके सबसे महान् एव विनाशक शत्रु भयसे आक्रात है। बच्चेको घरमे क्या नही छूना चाहिए किस चीजसे उसे नही खेलना चाहिए यह सिखानेका यदि माता-पिताका यही तरीका रहा तो बच्चेको भयके इन तूफानोका बार-बार सामना करना पडता है और अतमे बच्चेमे दुनियाकी चीजें ढूंढने और उनसे खेलनेकी इच्छा और शक्ति ही मर जाती है। अब हर चीज छूते, हर नया काम करते उसे डर सताने लगता है। इस प्रकार कोई भी माता अपने बच्चेको हीन बना रहनेवाला लडका बना सकती और उसमे हर चीजसे और हर आदमीसे डरनेकी आदत डाल सकती है।

कुछ करनेका हौसला

बच्चा इस सारी धरतीका राजा है, दुनियाकी सारी चीजे उसकी हैं, उसके खेलनेके लिए बनी हैं। जिन चीजोको मा बच्चेकी निगाहसे बचाना चाहती है उन्हे उसे अक्लमदीसे जरा ऊचेपर या दूर रखना चाहिए, पर अगर बच्चेने कहीसे कैंची खोज ही निकाली तो उसे कोई दूसरी चीज देकर बहला लेना कठिन नही है। इस समय बच्चेके लिए जीवनका अर्थ ही नई-नई चीजें करना है। उसके शरीरका अग-अग प्रत्येक मिनट दुनियामे जो चीजे हैं उन सबके साथ कुछ कर देखनेकी कोशिश करता है।

इस प्रकार माका बच्चेको एक चीजके बाद दूसरी चीजसे परिचित कराना, उसे हर चीजको अपनी शक्तिके अनुसार पूरी तरह समझनेका मौका देना ही बच्चेमे कुछ नया करनेका बीज बोता है एव उसके मस्तिष्क-को सही अर्थमे शक्तिशाली बनाता है।

योगधर्म

बच्चेमे न तर्क करनेकी शक्ति होती है, न नैतिक बुद्धि और न उसमे स्मरणशक्तिका विकास हुआ होता है। चीजें उसे योग-धर्मके अनुसार याद रहती है जिसका अर्थ है उसके अचेतन मनपर बाहरी प्रभाव पडता है और यदि वह प्रभाव काफी गहरा है तो वह हमेशाके लिए बच्चेके मनपर लिखा रह जाता है। उदाहरणके लिए बच्चा जब जलती लालटेनकी चिमनीसे हाथ लगाता है तो उसकी अगुलिया जल जाती हैं, अब दर्द और लालटेनका योग हो जाता है वह लालटेनसे डरना सीख जाता है।

बच्चेका लालटेनसे डरना उसकी याददाश्तके बलपर नही होता, यह डर उसके चेतन नही, अचेतन मस्तिष्कमे होता है। डरना उसकी नैसर्गिक वृत्तिमे शामिल हो जाता है जिसपर बुद्धिका कोई प्रभाव नही पडता। प्राय सभीको लालटेनसे जलनेका अनुभव हुआ है, फलत गरम चीजके सपर्कमे आते ही हर आदमी सिकुड जाता है। यह क्रिया सहानु-भूतिसाध्य है। दिमाग उसके लिए कुछ करे इसके पहले ही वह पूरी हो जाती है। इससे बचपनमे चरित्रपर पडनेवाले कार्योके प्रभावको अच्छी तरह समझा जा सकता है। जिसके दिमागपर 'यह मत करो', 'वह मत करो'के हथौडेकी चोटके बचपनमे पडे अनगिनत दाग होते हैं वह स्वभावत. हर हुक्मके विरुद्ध हो जाता है। असलमे वह बागी बना दिया जाता है।

हठकी प्रवृत्ति

अपने दूसरे वर्षमे बच्चेको अपनी मिली चीजे अधिक प्रिय हो जाती हैं

और जब बच्चेसे वे छीन ली जाती है, उसे अपनी इच्छाकी पूर्ति नही करने दी जाती तो बच्चा जोरोसे रोने और पैर पटकने लगता है, यहातक कि वह जमीनपर लोटने लगता है। ऐसा प्रतीत होता है जैसे उसे कोई दौरा आ गया हो। उसकी यह दशा उसके क्रोध एव नैराश्यकी गहराईके द्योतक है। वह इन आवेगोके वशीभूत होकर तबतक रोता-चिल्लाता रहता है जबतक कि उसमे शक्ति रहती है, अतमे वह शिथिल होकर पड जाता है और सिसकिया भरने लगता है। अब मा डर जाती है, बच्चेको गोदमे उठा लेती है और उसे उसकी इच्छित वस्तु दे देती है। बच्चा रोने और वस्तुके मिलनेसे सबध जोडता है और जान जाता है कि क्रोध करना और रोना विजयके सहायक हैं और इस प्रकार वह हठ करना सीख जाता है।

शिक्षणकी रीति

बच्चेके शिक्षणकी उचित रीति यह है कि दुनियाको समझनेमे उसकी उचित सहायता की जाय और उसे समझनेका आनद उठाने दिया जाय। आनदप्राप्तिकी कोशिश ही उसके हर कामके पीछे होती है। जो माता दुनियाको समझनेमे बच्चेकी सहायता ईमानदारीके साथ इस रीतिसे करती है उसका बच्चा उसकी आज्ञाओका पालन बडी खुशीसे करता है और ज्यो-ज्यो उसकी याद रखनेकी शक्ति बढती है, तर्कशक्ति एव नैतिकता जाग्रत् होती है वह आवश्यक नियमोका पालन करने लगता है।

बस, इसी एक उपायसे माता बच्चेके मस्तिष्क और चरित्रको सौदर्य और आनदका पथिक बना सकती है अन्यथा बच्चेमे शरारतके बीज बोये जाते हैं, वे लडना-झगडना सीखते है और बडे होनेपर सारी दुनियाको युद्धकी अग्निमे झोक देते है।

हम बालकको बार-बार कहा करते हैं—"अब हठ मत करना, तू कितना हठी है? कितना जिद्दी है?" ऐसा कहनेसे बालकको यह ज्ञात होता है कि उसमे हठ करनेकी शक्ति है, वह हठी है, जिद्दी है। इस प्रकार

वालक अधिकाधिक हठी होता जाता है। इससे हम दुखी होते है किंतु वालक हमसे भी दस गुना दुखी होता है। उसका सारा दिन "ए-ए-ए" करनेमे बीतता है। फलत वालक और हममे एक नई अनावश्यक खटपट होने लगती है।

दूर कैसे किया जाय ?

वालकका हठ दूर करनेका सच्चा उपाय यह है कि हम अपने मनमे तो यह समझ ले कि वह हठी है, किंतु उससे न कहे कि वह हठ करता है हठका ठीक-ठीक इलाज करनेके लिए सबसे पहले यह जानना-समझन चाहिए कि हठ है क्या ? कई वार हठका कोई इलाज नही होता। इसक कारण यह है कि हठ-जैसी दिखाई देनेवाली वहुत-सी वातोको हम ह मानने की भूल करते है अथवा वास्तविक हठको ठीक-ठीक नही समझते

एक चार वर्पकी लडकी अपनी वडी वहनके साथ किसी पडोसिनवे यहा गई। पडोसिनने कहा "वहन, हमारा पटडा भिजवाना"। घर पहुच कर लडकी पटडा उठाने लगी और उसके न उठनेपर जोर-जोरसे रोने औ चिल्लाने लगी। जव घरके आदमियोने उसके रोनेकी ओर ध्यान ही नह दिया तो वह और भी जोरसे रोने लगी। अव पिताका ध्यान उसकी ओ गया। रोनेका कारण पूछनेपर मालूम हुआ कि वह पटडा उठाकर पडो सिनके घर ले जाना चाहती है। पिताके अकेले ही पटडा उठानेपर वह फि रोने लगी, क्योंकि वह सिर्फ सहायता चाहती थी। इसपर पटडेको ए तरफसे उसके पिताने और दूसरी तरफसे उसने और उसकी वहनने पकडा इस प्रकार पटडा पडोसिनके घर पहुचाया गया। लडकी आनदसे नाच लगी और खुश होकर पडोसिनसे कहने लगी—'देखिए हम आपका पट ले आये हैं।'

पटडेके न उठनेपर लडकीका रोना और चिल्लाना कोई सामा वाल-हठ जैसी चीज न थी। आवश्यक सहायता देनेके वदले "लड

कितनी हठीली है ?" "एक बातके पीछे पड जानेपर उसे छोडती ही नही" "किस लिए चिल्ला रही है ?" "अभी नही", "हम मिजवा देंगे" "क्यो दिमाग चाट रही है ?" आदि बातोमेसे कोई बात उसे कही जाती तो उसको भारी दु ख होता--एक तो अपने निश्चित अच्छे एव निर्दोष कार्यके अधूरे रह जानेका और दूसरे अपने घरके प्रियजनोकी असहानुभूतिका।

वास्तविक हठको पहचाननेके लिए बालकको निकटसे, उसीका बनकर, उसीकी दृष्टिसे देखने और समझनेका अभ्यास करना चाहिए और जब वह ऊधम करे तब इस बातका सदा ध्यान रखना चाहिए कि असली हठ है क्या चीज।

ऐसा करनेपर हमे मालूम हो जायगा कि पहले जिन घटनाओमे हमे हठ नजर आता था उनमे हठ नही था। अशक्ति, अस्वस्थता अथवा थकावटके कारण बालकके रोने और झगडनेको ही हम हठ समझ बैठते है। ज्यो-ज्यो हम कारणोकी खोज करेंगे त्यो-त्यो हमे हठके असली रूपका पता लगता जायगा और एक बार तो ऐसा लगेगा कि बाल-जगत्मे हठ-जैसी कोई चीज है ही नही, किंतु यह बात नही है। बालक कितनी ही बार हठ-रोगसे पीडित होता है जिसका तत्काल इलाज होना चाहिए।

अस्वस्थताकी अवस्थामें

शारीरिक अस्वस्थता या निर्बलताके कारण यदि बालक झगडालू और चिडचिड़ा हो गया है तो उसका इलाज करना और उसकी सार-सभाल रखना आवश्यक है; किंतु ऐसे समय बालकका मानसिक निर्बलता या विकारका शिकार हो जाना भी सभव है। अत इस ओर भी हमारा ध्यान होना चाहिए। ऐसे समय बालककी बीमारीकी अवस्थासे अधिक महत्त्व देने अथवा जरूरतसे ज्यादा उसकी सार-सभाल करने तथा सब कुछ उसके इच्छानुसार करते रहनेसे उसके हठीला बन जानेकी सभावना है। घरमे एक ही बालक होनेके कारण जरूरतसे ज्यादा उसका मान होनेसे भी वह

हठीला बन जाता है। अक्सर सबसे छोटा बालक हठी बनता है। धनवानो-के बालक प्राय. हठी होते हैं।

हठ करनेकी लत

बाल-हठमे बालकको दुनियाका राजा बननेकी इच्छा होती है। इसका मतलब यह है कि जिनपर बालकका प्रभाव होता है उन सबको अपने इच्छानुसार वह चलाना चाहता है। ऐसी विकृत इच्छाका उदय तभी होता है जब बालकको यह ज्ञान हो जाता है कि उसके रोने और झगडनेमे बडे-से-बडेको अपने सामने झुकानेकी शक्ति है।

एक चार वर्षकी इकलौती लडकी थी। उसकी सार-सभाल करनेके लिए उसकी मा के अलावा एक नौकरानी भी थी। नौकरानीका यह खयाल था कि घरमे एक ही बच्ची है, वह जो कुछ कहे वह करना ही चाहिए। माका खयाल था कि घरमे एक ही लडकी है, इसलिए बडे अच्छे ढगसे इसका पालन-पोषण होना चाहिए। जब बालिका स्वच्छद होकर कुछ कहती तो मा उसको रोक देती। थोडी देरमे नौकरानी आती और कहती 'आप तो बडी निर्दय हैं। ले-देकर एक ही तो लडकी है, वह इतनी रोती है, किंतु आपके मनमे जरा भी दया नही आती।' यह कहकर वह उसे अपनी गोदीमे उठा लेती, खानेको देती, समझाती और 'रानी बेटी', 'हीरा बेटी' कहकर उसे मनाती। हृष्ट-पुष्ट होनेपर भी लडकी दिनमे दो-तीन बार रोती और घटोतक रोती रहती। यदि यह कहे तो बेजा न होगा कि उस लडकीको हठ-रोग हो गया था।

लडकीकी माका ध्यान इस ओर गया। उसने एकदम एकतत्र राज शुरू कर दिया। एक-दो बार लडकी खूब रोई, किंतु माके दृढ रहनेपर वह आठ-दस दिनमे ही बिल्कुल बदल गई। आठ-दस दिन पहले जो लडकी दुःखी रहती और रोती थी वह अब प्रसन्नचित्त, हसोड़ और सुदृढ मनवाली बन गई।

ऊपरके उदाहरणमे जो स्थान नौकरानीका था वही स्थान घरमें आमतौरपर माता-पिताका होता है। नौकरानीको तो घरसे अलग किया जा सकता है, किंतु कुटुबको तोड देना असभव है। यही कारण है कि बालक हठके शिकार बन जाते हैं, किंतु लोगोकी तो यह धारणा है कि जो बालकको मारता है, डाटता है, वही उसको कैसे मना सकता है? इसलिए एक मारनेवाला, डाट-फटकार बतानेवाला और सख्ती करनेवाला हो और दूसरा ऐसा प्रसग आनेपर बालकको प्यारसे अपने पास बुलानेवाला हो। मा मारे तो बालक नानी या दादीके पास जाय और वह 'बस, अब रो मत' कहकर उसको अपने पास बिठाये। इस प्रकार नियत्रणकी दूषित कल्पना हमारे अदर घर कर गई है जिसके फलस्वरूप बालक व्यर्थ ही दुखी होते है।

दो विशेषताएं

हठकी दो विशेषताए है—एक तो अपनी बात करवाकर छोडना और दूसरी नियमोका पालन न करना। बालक हो चाहे बडा, यदि वह अपनी इच्छा-शक्तिका विवेकपूर्वक उपयोग करता है तो वह इच्छा-शक्ति है, इसके विपरीत यदि वह अपनी इच्छा-शक्तिका दुरुपयोग करता है, विचारपूर्वक उससे काम नही लेता तो यह हठ है। बालककी विकसित होनेवाली इच्छा-शक्तिको बलवान् बनाने तथा उसको हठका रूप धारण करनेसे बचानेके लिए नियत्रणकी आवश्यकता है। दुलारमे पला हुआ बालक नियमोको तोडना अपना विशेषाधिकार समझता है और नियम-पालन करानेवाले माता-पिताको अपने इच्छानुसार झुकानेमे उसे सत्ताके विकृत आनदका अनुभव होता है।

हठी बालकका विकास नही होता। उसमे शक्ति होनेपर भी वह अविकसित ही रहता है। फलत. बालक और हम दोनो ही दुखी होते है। हठ छुडानेका पुराना तरीका इच्छाशक्तिको तोड देना है, किंतु बालककी इच्छा-शक्तिको तोडकर उसको आज्ञाकारी बनानेका तरीका कुछ अच्छा

नही है। इससे तो बालक उल्टा विद्रोही और द्वेषी बनता है। इस प्रकार उसकी इच्छा-शक्तिका बल घटनेके बजाय अधिक तेजीसे विकृत होता है, अत. बालक डरपोक और भीरु बनता है। मतलब यह कि उसकी इच्छा-शक्ति सचमुच टूट जाती है, पराधीन बन जाती है और उसका विकास नही हो पाता। हठका एक ही इलाज है—दृढ निश्चय। किंतु इस बातका जरूर पता लगाते रहना चाहिए कि हमारा निश्चय ठीक है या नही। एक बार निर्णय कर लेनेके बाद हमे चौहानकी तरह सख्त और दृढ बन जाना चाहिए।

हतोत्साह बच्चोंका सुधार

उत्साहहीनताका शारीरिक और मानसिक दोनो प्रकारका प्रभाव होता है। जो विषय बच्चेके लिए कठिन पडता है वही अगर रोज क्लासमे चलता रहे तो वह अस्वस्थ हो जा सकता है, उसका दिल-दिमाग खराब हो जा सकता है और हकलानेका या और कोई विकार भी उसे हो जा सकता है। बच्चेमे आनेवाली उत्साहहीनता उसके चलने, खडे होने, बैठने आदिमे जल्द ही प्रकट होने लगती है। उसके शरीरकी आकृति परिवर्तित हो जाती है और कुछ अगोंमे स्थान-भ्रष्टता आनेके कारण उनकी सक्रियता भी मद पड जाती है। प्राकृतिक पद्धतिके अनुसार चाहे जितना भी उसका उपचार किया जाय उसकी उत्साहहीनता नही जायगी। इसे दूर करनेके लिए पहले माता-पिताको उसकी स्थितिसे भलीभाति परिचित होना पडेगा जिसमे उसके अदर आया हुआ तनाव निकालकर उसकी प्रगतिका मार्ग उन्मुक्त किया जा सके। अगर कठिन मालूम होनेवाले विषयका ज्ञान प्राप्त करनेमे व्यक्तिगत रूपमे उसकी कुछ सहायता कर दी जाय तो वह धीरे-धीरे सफलताके मार्गपर अग्रसर होने लगेगा और वह उसमे मनोयोगपूर्वक लग जायगा क्योकि अब वह यह समझने लगेगा कि ज्ञान प्राप्त करनेसे ही प्रगति होती है।

परिस्थितियोंका प्रभाव

माता-पिताका दबाव ही हमेशा बच्चोकी उत्साहहीनताका कारण नही हुआ करता। युद्ध, राजनीतिक उथल-पुथल—जैसी कि हालमे ही भारतमे आबादीके तबादलेके कारण हुई है—आदिके कारण सामाजिक व्यवस्था विशृंखल हो जानेसे जो कठिनाइया उत्पन्न होती हैं उनका सहन

करनेमे बच्चे समर्थ नही होते जिससे परीक्षामे असफल होकर हतोत्साह हो जाते हैं। अस्वस्थता या किसी और कारणसे कुछ दिनोतक विद्यालयसे अनुपस्थित रहनेवाले बच्चे बहुतसे पाठोको नही सीख पाते और वर्गकी पढाईके साथ चलनेमे असमर्थ होकर उत्साहहीन हो जाते हैं। जो बच्चा अपनी अवस्थाके अनुसार पढा-लिखा नही होता वह न तो प्रसन्नचित्त होगा, न उसमे आत्म-विश्वास होगा और न पूर्णरूपसे स्वस्थ रहेगा, आप भले ही उसे प्राकृतिक पद्धतिके अनुसार अच्छे-से-अच्छा पोषण क्यो न दे। पहले उसे यह ज्ञान होना चाहिए कि वह पढ़ाईमे क्यो पिछडा हुआ है और अगर अबतक आगे नही बढा है तो बढ सकता है। अब उसका पाठ नये सिरेसे वहासे आरभ होना चाहिए जहातक वह अच्छी तरह सीख चुका है और उसे इस तरह आगे बढ़ाना चाहिए जिसमे उसमे आत्मविश्वासके साथ-साथ निश्चय और उत्साह बढता जाय। इससे उसे जो सतोष और आनद प्राप्त होगा वह उसके सारे शारीरिक और मानसिक विकारोको दूर कर देगा।

जो बच्चा शैशवमे पढना और लिखना नही सीख लेता उसको सिखलाना कुछ कठिन होता है। उसका मन इतना कोमल और भावुक होता है कि थोडा-सा भी दबाव और कडाई होनेपर उसका दिल और दिमाग जवाब दे देता है। पहले यह समझ लेना चाहिए कि जितना करनेको कहा जाता है उतना वह कर ले सकता है तभी वह उसे करनेमे समर्थ हो सकता है। सफलता मिलने लगनेपर वह स्वय अधिक सीखनेकी इच्छा और उत्साह प्रकट करने लगेगा। कभी-कभी उत्साहहीनताकी लहर आ सकती है, पर उत्साह और शक्ति बढ जानेपर वह आप-ही-आप दूर हो जायगी।

दोषगोपनका प्रयत्न

जिस बच्चेको यह अनुभव होता है कि वह शब्दोको उनके शुद्ध रूपमे

नही लिख सकता, सही उच्चारण नही कर सकता, स्पष्ट और सुदर लिपि नही लिख सकता या उसकी शिक्षाकी पृष्ठभूमि ही उपयुक्त नही है वह भी इनके कारण उद्विग्न होकर हतोत्साह हो जा सकता है। परिणाम यह होता है कि जब इन कामोको करना आवश्यक होता है तो वह मुह मोड लेता है। आमतौरसे देखा भी जाता है कि जो शुद्ध नही लिख सकता या जिसकी लिपि खराब है वह टेलीफोन, टाइपराइटर आदिका सहारा लेनेकी ओर प्रवृत्त हुआ करता है और लिखनेसे भरसक बचनेका उपाय करता है; जिसका उच्चारण ठीक नही है वह समाजमे बोलनेका साहस नही करेगा और अगर कभी बोलेगा भी तो बहुत मद स्वरमे जिसमे उसका दोष प्रकट न होने पाये। बच्चे ही नही, बडे लोग भी अपने इन दोषोको छिपाये रखते हैं और उनकी पूर्ति तरह-तरहके उपायोंसे किया करते है और इस कलामे कुशल भी हो जाते हैं। बच्चे भी अपनी त्रुटियोको छिपानेके लिए ऐसे ही उपायोकी ओर बढनेकी कोशिश करते है इसलिए उनको कठिना-इयोका सामना करनेमे सहायता देते रहनेका ध्यान रखना चाहिए जिसमे दोषको अन्य उपायोसे छिपानेकी प्रवृत्ति उनमे जरा भी न रहने पाये।

स्वभावगत दोष

कुछ बच्चोकी प्रकृतिमे भी कुछ ऐसी बाते होती है जो उनके कृतकार्य होनेमे बाधक हुआ करती है इसलिए उनका स्वास्थ्य भी पूर्णत सतोषजनक नही होता। बहुतसे बच्चे मुहचोर होते हैं। इस दोपका बढना या दूर होना माता-पिता, भाई-बहनो और साथियोके रुखपर निर्भर है। न तो इसे हँसीका विषय बनाना चाहिए और न इसकी ओर बच्चोका ध्यान आकृप्ट करना चाहिए बल्कि इस ओर ध्यान न देकर उन्हे कार्यमे प्रवृत्त करना चाहिए।

हमारे एक मित्रका लडका मोहन, जिसकी अवस्था लगभग सात वर्षकी थी, इतना मुहचोर था कि बोलनेका तो जल्द नाम ही नही लेता था

और इजारवदका छोर मुहमे डाले रहता था, अगर वोलनेको लाचार होता तो इजारवद मुहमे दवाये-ही-दवाये वडी धीमी आवाजमे वोलता और अगर कभी इसकी ओर उसका ध्यान दिलाया जाय तो उसका चेहरा लाल हो जाता। यो तो अवस्थाके मुताविक उसमे अक्ल भी थी, पर दोष एक यही था। एक दिन उसके महल्लेमे रामलीला हुई जिसे वह भी देखने गया। दूसरे दिन महल्लेके छोटे वच्चोने भी लीला करनेकी ठानी और मोहनको भी उसमे पार्ट दिया। उसने अपना पार्ट इतना अच्छा किया कि लोग देखकर दग रह गये। न मालूम कहासे उसमे अभिनेताओकी-सी गभीरता आ गई और इजारवद, मुहकी वात कौन कहे, हाथमे भी नही आया, शब्द भी साफ-साफ और लहजेके साथ निकले। उस दिनसे वह ऊची आवाजमे वोलने लगा, इजारवदका मुहमे जाना धीरे-धीरे वद हो गया और सभी तरहके कामोमे उत्साह दिखलाने लगा। इस प्रकार एक ही कार्यमे उसकी सफलताने उसका कायापलट कर उसे सभी दिशाओमे आगे वढा दिया।

भाषाका प्रयोग

आत्मविश्वास या उत्साहहीनता उत्पन्न करनेमे भाषाके प्रयोगका सवसे महत्त्वपूर्ण स्थान है, क्योकि जीवनकी हर एक अवस्था और रोज-रोजके कामोमे किसी-न-किसी रूपमे इसकी आवश्यकता पडती रहती है। छोटे वच्चे भाषा जितना समझ सकते हैं उतना वोल नही सकते इसलिए जव वे वहुत छोटे हो तभीसे उनको कुछ-कुछ पढकर सुनाते रहना चाहिए और उनके लायक कोई वात मिले तो समझाते जाना चाहिए—भले ही वे उसे पूरी तरह ग्रहण न कर सके। यह व्याख्या उनमे अपनेको वुद्धिमान् समझने-की भावना उत्पन्न करेगी। उनकी क्रीडामे भी वरावर भाषाका प्रयोग होना चाहिए। इससे उनकी वाणीका आधार प्रस्तुत हो जाता है और वे वोलनेके प्रयत्नमे आनदका अनुभव करते हैं।

कुछ बच्चे बहुत दिनोतक नही बोल पाते। कारण यह होता है कि उनकी आवश्यकताकी सारी वस्तुए उनके पास प्रस्तुत रहती हैं और उन्हे कुछ बोलकर अपनी इच्छा प्रकट करनेकी जरूरत नही पडती। कुछ लोग तो बच्चेका जल्द न बोल सकना एक रोग समझकर डाक्टरकी सहायता लेना चाहते हैं, पर दरअसल यह कोई शारीरिक समस्या न होकर केवल मानसिक है। ऐसे बच्चोको ऐसी परिस्थितियोमे रखना चाहिए जिसमे उनकी जरूरतकी सारी चीजे प्रस्तुत न हो और यह आशा की जाय कि वे जरूरत पडनेपर उनकी माग करेंगे।

नई सतानके आगमन, बच्चोके प्रति माता-पिताके बर्तावमे भिन्नता, बडोंके द्वारा उपेक्षा या अधिक प्यार तथा इस तरहकी अन्य बातोका भी बच्चोपर मानसिक प्रभाव होता है। इसलिए माता-पिताको बच्चोमें उत्साहहीनता लानेवाले अवसरोका सावधानीके साथ निवारण करते जाना चाहिए।

माता-पिताके लिए दस हिदायतें

ऐसे लोगोकी सख्या बहुत बडी होगी जो किसी-न-किसी प्रकारके मानसिक विकार या उसके कारण उत्पन्न किसी रोगसे ग्रस्त होगे। चाहे जहा जाइए आपको माता-पिता बच्चोके आचरण या उद्दडतापूर्ण बर्तावकी शिकायत करते हुए मिलेंगे, ऐसे परिवार बहुत कम मिलेगे जिनमे कलहका प्रवेश न हुआ हो। आखिर इन सब खराबियोके लिए कौन जवाबदेह है? माता-पिता तो सतानको ही इसके लिए दोषी ठहराते है, पर दरअसल दोष उन्हीका होता है। क्यो? इसलिए कि प्राय सभी मानसिक विकार बाल्यावस्थामे उचित शिक्षा न मिलनेके ही परिणाम हुआ करते है।

एक मानसोपचारकने इस सबधमे माता-पिताके लिए मोटे तौरपर दस नियम बनाए हैं जिनपर ध्यान देकर बच्चोको मानसिक विकारोंसे बहुत कुछ बचाया जा सकता है।

१. माता-पिता बच्चेकी उपस्थितिमें कभी कहा-सुनी या झगड़ा न करें; अगर उनको झगड़ना ही हो तो अन्यत्र चले जायं।

अगर बच्चेका उचित रूपमे विकास होने देना अभीष्ट है तो उसके लिए सामजस्य और प्रेमका वातावरण उतना ही आवश्यक होगा जितना जीवनके लिए भोजन और ओषजन। अगर आपके प्रति बच्चेका विश्वास न रह जाय तो उसके मनमे उथल-पुथल बनी रहेगी, वह अपनेको अरक्षित समझेगा, उसके नैतिक विचारोमे कमजोरी आ जाएगी और उसका अत -करण सकीर्ण हो जायगा।

२. अगर आपके कई बच्चे हो तो बड़े बच्चोके प्रति विशेष प्रेम प्रदर्शित कीजिए।

माता-पिताका प्रेम या ध्यान एकाएक अपनी ओरसे हटकर नवजात शिशुकी ओर जाते देखकर बडे बच्चेको बहुत अधिक मानसिक कष्ट होता है। इसकी प्रतिक्रिया दो रूपोमे होती है—या तो उसमे उनके प्रेमसे वचित होनेकी भावना उत्पन्न हो जाती है या द्वेषकी। द्वेषकी भावनाका पहला लक्ष्य नवजात शिशु होता है और यह भावना यहातक बढ जाती है कि उसकी प्रवृत्तिया घातक रूप धारण कर लेती है। इसके अलावा यह द्वेष माता-पिताके प्रति भी हो जाता है। परिणाम यह होता है कि उसके हृदयमें द्वेषात्मक सघर्ष और दुष्कर्म तथा आशकाकी भावना प्रबल हो जाती है।

३. अपने बच्चेके प्रति अत्यधिक प्रेम मत दिखाइए।

अगर माता-पिता विशेषकर माता अपने बच्चेकी आवश्यकतासे अधिक फिक्र और देखभाल करने लगे तो बच्चेमें दायित्वका ज्ञान विकसित होनेका अवसर ही नही आने पाएगा, उसमे परावलबनकी घातक मनोवृत्ति बनी रहेगी और स्वयं कोई निर्णय करनेमे डरनेके कारण वह धीरे-धीरे भीरुता और नाड़ीदौर्बल्यका शिकार हो जायगा। अगर माता प्रेम-प्रदर्शन सबधी शारीरिक क्रियाओमे अधिक सलग्न रहे तो ये विकार बढकर भीषण

कुछ बच्चे बहुत दिनोतक नही बोल पाते। कारण यह होता है कि उनकी आवश्यकताकी सारी वस्तुए उनके पास प्रस्तुत रहती हैं और उन्हे कुछ बोलकर अपनी इच्छा प्रकट करनेकी जरूरत नही पडती। कुछ लोग तो बच्चेका जल्द न बोल सकना एक रोग समझकर डाक्टरकी सहायता लेना चाहते हैं, पर दरअसल यह कोई शारीरिक समस्या न होकर केवल मानसिक है। ऐसे बच्चोको ऐसी परिस्थितियोमे रखना चाहिए जिसमे उनकी जरूरतकी सारी चीजे प्रस्तुत न हो और यह आशा की जाय कि वे जरूरत पडनेपर उनकी माग करेगे।

नई सतानके आगमन, बच्चोके प्रति माता-पिताके बर्तावमे भिन्नता, बडोके द्वारा उपेक्षा या अधिक प्यार तथा इस तरहकी अन्य बातोका भी बच्चोपर मानसिक प्रभाव होता है। इसलिए माता-पिताको बच्चोमें उत्साहहीनता लानेवाले अवसरोका सावधानीके साथ निवारण करते जाना चाहिए।

माता-पिताके लिए दस हिदायतें

ऐसे लोगोकी सख्या बहुत बडी होगी जो किसी-न-किसी प्रकारके मानसिक विकार या उसके कारण उत्पन्न किसी रोगसे ग्रस्त होगे। चाहे जहा जाइए आपको माता-पिता बच्चोके आचरण या उद्दडतापूर्ण बर्तावकी शिकायत करते हुए मिलेंगे, ऐसे परिवार बहुत कम मिलेगे जिनमे कलहका प्रवेश न हुआ हो। आखिर इन सब खराबियोंके लिए कौन जवाबदेह है? माता-पिता तो सतानको ही इसके लिए दोषी ठहराते है, पर दरअसल दोष उन्हीका होता है। क्यो? इसलिए कि प्राय सभी मानसिक विकार बाल्यावस्थामे उचित शिक्षा न मिलनेके ही परिणाम हुआ करते है।

एक मानसोपचारकने इस सबधमे माता-पिताके लिए मोटे तौरपर दस नियम बनाए हैं जिनपर ध्यान देकर बच्चोको मानसिक विकारोसे बहुत कुछ बचाया जा सकता है।

१. माता-पिता बच्चेकी उपस्थितिमे कभी कहा-सुनी या झगड़ा न करें; अगर उनको झगड़ना ही हो तो अन्यत्र चले जायं।

अगर बच्चेका उचित रूपमे विकास होने देना अभीष्ट है तो उसके लिए सामजस्य और प्रेमका वातावरण उतना ही आवश्यक होगा जितना जीवनके लिए भोजन और ओषजन। अगर आपके प्रति बच्चेका विश्वास न रह जाय तो उसके मनमे उथल-पुथल बनी रहेगी, वह अपनेको अरक्षित समझेगा, उसके नैतिक विचारोमे कमजोरी आ जाएगी और उसका अत -करण सकीर्ण हो जायगा।

२. अगर आपके कई बच्चे हो तो बड़े बच्चोंके प्रति विशेष प्रेम प्रदर्शित कीजिए।

माता-पिताका प्रेम या ध्यान एकाएक अपनी ओरसे हटकर नवजात शिशुकी ओर जाते देखकर बडे बच्चेको बहुत अधिक मानसिक कष्ट होता है। इसकी प्रतिक्रिया दो रूपोमे होती है—या तो उसमे उनके प्रेमसे वचित होनेकी भावना उत्पन्न हो जाती है या द्वेषकी। द्वेषकी भावनाका पहला लक्ष्य नवजात शिशु होता है और यह भावना यहातक बढ जाती है कि उसकी प्रवृत्तिया घातक रूप धारण कर लेती हैं। इसके अलावा यह द्वेष माता-पिताके प्रति भी हो जाता है। परिणाम यह होता है कि उसके हृदयमें द्वेषात्मक सघर्ष और दुष्कर्म तथा आशकाकी भावना प्रबल हो जाती है।

३. अपने बच्चेके प्रति अत्यधिक प्रेम मत दिखाइए।

अगर माता-पिता विशेषकर माता अपने बच्चेकी आवश्यकतासे अधिक फिक्र और देखभाल करने लगे तो बच्चेमें दायित्वका ज्ञान विकसित होनेका अवसर ही नही आने पाएगा, उसमे परावलवनकी घातक मनोवृत्ति बनी रहेगी और स्वय कोई निर्णय करनेमे डरनेके कारण वह धीरे-धीरे भीरुता और नाडीदौर्बल्यका शिकार हो जायगा। अगर माता प्रेम-प्रदर्शन सबधी शारीरिक क्रियाओमे अधिक सलग्न रहे तो ये विकार बढकर भीषण

रूप धारण कर ले सकते है। बच्चेके प्रति अत्यधिक प्रेम-प्रदर्शन दापत्य-जीवनके प्रति माताके असतोषका सूचक होता है। इसका बच्चेके यौन-जीवनपर वहुत बुरा असर होता है—आगे चलकर उसके लिए समवयस्को, विशेषकर भिन्न (पुरुष हो तो स्त्री और स्त्री हो तो पुरुष) वर्गके साथ सामजस्य स्थापित कर सकना असभव नही तो कठिन अवश्य हो जाता है। इस स्थितिके सबधमे उसमे दोषकी जो भावना उत्पन्न होती है वह उसके लिए वहुत अनिष्टकर होती है और उसे मानसिक रोगका शिकार बना दे सकती है।

अगर माता अधिकार-प्रदर्शन और शासनके रूपमे प्रेम प्रदर्शन करे, बच्चेके हर काममे दखल देती या शरीक होती रहे और आलोचना करती रहे तो बच्चेकी कमजोरी और आशकाकी भावना बहुत बढ जायगी जो प्राय सहवर्गीय यौनप्रवृत्ति उत्पन्न कर देती है।

४ बच्चेके प्रति आपका प्रेम बहुत कम भी न हो।

प्रत्येक बच्चेको प्रेम और उचित ध्यानकी आवश्यकता होती है। अगर बच्चा यह समझने लगे कि घरमे उसकी कोई पूछ नही है तो उसमे दीन, हीन और असहाय होनेकी भावना घर कर लेगी। आगे चलकर जीवनमे और लोगोंसे मिलने और साबका पडनेपर वह पराजयकी ही उम्मीद रखेगा। इस प्रकारका बच्चा हमेशा अपनेको असफल मानेगा और जिन बातोको दूसरोको अगीकार न होनेकी सभावना देखेगा उनसे बचनेके प्रयत्नमे अपनेको कोसता रहेगा।

५ अगर बच्चा हस्तमैथुन आदि यौन दोष करता हुआ देखा जाय तो उसे दंड देनेकी धमकी मत दीजिए।

वहुतसे बच्चे इस प्रकारके दोषके शिकार हुआ करते है। इसका बहुत अधिक होना आगे चलकर हानिकर होता है, पर हानि विशेषत निषिद्ध कर्ममे प्रवृत्त होनेकी भावनासे होती है। जननेद्रियके बेकाम होने

या मानसिक रोग होनेका भय दिखलानेसे सचमुच इस तरहके रोग प्रस्तुत हो जा सकते है। यह स्थिति हस्तमैथुनके कारण नही वल्कि भावनात्मक द्वद्वके कारण उत्पन्न होती है और इस द्वद्वकी उत्पत्तिका कारण एक ओर तो अपराध और आशकाकी भावना होती है और दूसरी ओर दुर्दमनीय यौनप्रवृत्ति।

६ वच्चेकी जननेंद्रियपर ज्यादा ध्यान मन दीजिए और न उसे लज्जापूर्वक छिपानेका प्रयत्न कीजिए।

कुछ माताए अपने वच्चेकी जननेंद्रियके साथ तरह-तरहके खेल खेलकर मनोविनोद किया करती है, लडकेको लडकीकी और लडकीको लडकेकी पोशाक पहनाया करती हैं और प्राय ग्यारह-वारहकी अवस्थातक अपने ही साथ सुलाया करती है। इस तरहके काम वडे खतरनाक होते हैं, क्योकि वच्चेकी यौन-भावना असमय जाग्रत हो जाती है। अगर वच्चेमे यौनसववी दोपकी भावना तीव्र हो तो वह उन्मादरोगके रूपमे परिणत हो जा सकती है। वादमे इस यौनभावनाको औरोकी ओर प्रवृत्त करना कठिन हो जाता है और इसका परिणाम सहवर्गीय यौनभावनाके रूपमे सामने आता है।

जननेंद्रियको लज्जापूर्वक छिपाना भी उतना ही हानिकारक हो सकता है, क्योकि इससे दोष और आशकाकी भावना उत्पन्न होती है। इसलिए सवसे अच्छा तरीका यही है कि वच्चेमे यौनभावना कृत्रिम रूपमे उत्पन्न न कर आप-से-आप विकसित होने दी जाय।

७ माताएं अपने पतिपर हावी होनेका प्रयत्न न करें।

माता-पिताके वीच इस प्रकारकी स्थितिसे भी वच्चेमे सहवर्गीय यौनभावनाकी प्रवृत्ति वढनेका आधार प्रस्तुत हो जाता है। अगर माता दवग और उग्र स्वभावकी हो और पिताका स्वभाव कोमल और दव्वू हो तो वच्चेकी शारीरिक और मानसिक स्थिति स्पष्ट न रह सकेगी। लडका

तो इस मर्दानी माताके सामने कुढनकी भावना और स्त्रीसुलभ नम्रताके साथ झुकता रहेगा और लडकी अपनेको उस माताके रूपमे समझकर पुरुष प्रकृतिकी हो जायगी जिससे न तो वह विवाहके योग्य रह जायगी और न सामान्य यौन-जीवनके साथ सामजस्य स्थापित कर सकेगी।

८. न तो ज्यादा नरम बनिए और न बहुत कड़ा दंड दीजिए।

प्रत्येक बच्चेमे माता-पिता, विशेषकर माताको अपनी इच्छाओकी पूर्तिका साधन बनानेकी प्रवृत्ति होती है। आसानीसे उसकी बाते मानते जाना एक तरहसे दासत्व स्वीकार करना है। इसके अलावा दूसरी बात यह होगी कि बच्चा बडा होनेपर विफलता और नैराश्यकी स्थिति सहन करनेमे समर्थ नही हो सकेगा।

बच्चोका काफी बडे होनेतक रातमे सोते समय बिस्तरपर पेशाब करते जाना इस प्रकारकी अनुचित दयालुताका एक अच्छा उदाहरण है। बिस्तर गीला हो जानेपर बच्चा चिल्लाकर माताको इधर ध्यान देनेके लिए प्रेरित करता है; अगर माता उसकी तरफ फौरन ध्यान न देकर कुछ उपेक्षा कर दिया करे तो बच्चेकी यह बुरी आदत छूट जायगी।

दड देना नियम न होकर अपवाद ही होना चाहिए। मारना-पीटना तो विशेष रूपसे हानिकारक हो सकता है, क्योकि भूल करनेपर बच्चा प्रतिकारके रूपमे इसकी प्रतीक्षा करने लगता है। अगर इस तरहका व्यवहार बच्चेके प्राप्तवयस्क होनेतक चलता रहे तो वह एकके बाद दूसरा ऐसा काम करता रहेगा जिसमे उसे क्षति पहुचती रहे और तब वह दुनियाके बुरी होने और अपने प्रति अन्याय किये जानेकी शिकायत करने लगेगा।

९. बच्चेको अनावश्यक नश्तर मत लगवाइए।

यो तो अनिवार्य हो जानेपर नश्तर लगवाना ही पडेगा, पर ऐसे बहुतसे अवसर आते हैं जब नश्तर उतना आवश्यक नही होता। स्मरण रखनेकी बात यह है कि नश्तरसे बच्चेको भयकर मानसिक आघात पहुचता

है और बच्चेके मनमे यह आशका और धारणा बैठ जाती है कि ऐसा कोई काम किया जा रहा है जिससे शरीरकी पूर्णतामे हमेशाके लिए कमी आ जायगी।

अगर बच्चेके मनमे हस्तमैथुन आदिके सबधमे दोषकी कोई भावना हो तो चीरा लगाना खोजा बनाने-जैसा प्रतीत होगा जिसकी उसके मनमे पहलेसे ही आशका बनी रहती है। सुन्नतके सबधमे तो यह बात और भी सत्य प्रमाणित होती है।

१० बच्चेपर मलमूत्रके त्यागके लिए अनावश्यक दबाव मत डालिए।

यह देखना तो आवश्यक है ही कि बच्चेके मलादिका विसर्जन नियमित और उचित रूपमे हो रहा है, फिर भी बच्चा यह जल्द ही समझ जाता है कि उससे क्या आशा की जाती है और उसे माता-पिताकी इच्छाके विरुद्ध पाखाने आदिकी हाजत रोकनेके रूपमे अपने मनकी बात कर उन्हे कुढानेका अच्छा उपाय मिल जाता है। माता इसके लिए जितना ही जोर देती है उतना ही बच्चा इसके विरोधमे बैठा रहकर उसे कुढानेमे आनद मानता है। अगर कुढानेकी यह प्रवृत्ति स्थायी हो जाय तो भावी जीवनमे यह मानसिक असतुलनका कारण बन जाती है।

अगर आप अपने बच्चेको स्वस्थ और साधारण मानसिक अवस्थावाले तरुणके रूपमे देखना चाहते हैं तो इन नियमोका पालन करनेका प्रयत्न कीजिए, क्योकि प्रौढावस्थामे होनेवाले मानसिक विकारोका आरभ शैशवकालमे ही हुआ करता है।

बालरोगोंका कारण और उपचार

दवाओंके प्रयोगका उद्देश्य उन लक्षणोको दूर करना—और अगर ठीक-ठीक कहा जाय तो दबाना—होता है। जो दवाए पहले प्रयोगमे आती थी उनके प्रभावहीन सिद्ध होनेपर इधर कुछ दिनोसे उनके स्थानपर सुई और टीका प्रयोगमे लाये जाने लगे है, फिर भी रोगोकी व्यापकता ज्यो-की-त्यो बनी हुई है। इसके विपरीत प्राकृतिक चिकित्सक यथासभव पीडा और कष्टको कम करते हुए शरीरमे मौजूद मूल कारणको दूर करनेका प्रयत्न करता है जो लक्षणोके रूपमे व्यक्त होता है। लक्षणोको दवा देनेसे रोगसे छुटकारा नही मिलता।

खतरेकी घंटी

अगर बच्चेको सिरदर्द या बुखार हो तो डाक्टर दर्द दूर करनेके लिए एस्पिरिन और बुखार कम करनेके लिए कुनैन या इस तरहकी कोई दवा दे देगा, पर प्राकृतिक चिकित्मक तो सिरदर्द, बुखार आदिको खतरेकी घटी मानेगा जिनके द्वारा शरीर यह सूचित करता है कि अदरकी हालत ठीक नही है और सुधारकी आवश्यकता है या सुधार हो रहा है।

अगर सडककी मरम्मत होते समय सवारियोको चेतावनी देनेके लिए लाल झडी लगाई जाय तो चालक इस झडीको हटानेकी बात कभी न कहेगा, वह समझ जायगा कि सडककी हालत ठीक नही है और जबतक सडक ठीक न होगी झडी नही हटाई जायगी। उसी प्रकार सिरदर्दकी हालतमे उसके मूल कारण कब्ज आदिको न दूर कर एस्पिरिन खिलाना अपने रोगसबधी अज्ञानका परिचय देना है।

अगर बच्चेको दमा हुआ है तो डाक्टरका उद्देश्य होगा सासका कष्ट दूर करना, उसका ध्यान इस बातपर कभी नही जायगा कि सास का यह कष्ट

अदरकी असाधारण अवस्थाका व्यक्त लक्षणमात्र है। थोडे समयके लिए यह कष्ट दूर हो जा सकता है, पर इससे दमेसे छुटकारा नही मिलेगा। प्राकृतिक पद्धति इसके मूल कारणको ही दूर कर आगेका दौरा रोकनेकी कोशिश करेगी।

औषधविज्ञानका कहना है कि ये विभिन्न प्रकारके रोग कीटाणुओके कारण होते है जो शरीरमे प्रविष्ट होकर विशेष प्रकारसे कार्य करते हैं, पर प्राकृतिक पद्धतिके मतानुसार सभी रोग एक ही मूल कारणसे उत्पन्न होते है, और यह कारण सर्दी, खासी, दमा, फोडा, मसूरिका आदि तरह-तरहके रोगोके रूपमे व्यक्त हो सकता है।

रोग क्यों ?

बालरोगोका मूल कारण साधारणत पाच प्रकारसे प्रस्तुत हुआ करता है—

(१) अयुक्त आहार—सभ्य जातियोंके आहारमे रोग उत्पन्न करनेवाली दो बाते होती हैं—एक तो यह कि आहारकी मात्रा या उसमे कुछ खास चीजोकी मात्रा बहुत अधिक होती है और दूसरी यह कि उसमे तरकारिया, फल और पूर्णान्न न होनेके कारण वह बहुतसे तत्त्वोसे वचित होता है जिससे अगो और रक्तकी शक्ति कम पड जाती है। इन दोनो बातोका परिणाम यह होता है कि शरीर अपने मल-मार्गो—त्वचा, फेफडो, वृक्को और आतो—से सारा मल और विकार नही निकाल पाता, बचा हुआ मल शरीरमे ही रह जाता है और विशेष भागोमे एकत्र होकर रोगका आधार बनता है।

(२) धूप, हवा आदिकी कमी—धूप, शुद्ध हवा और निद्रा सभी मनुष्योंके लिए आवश्यक है और बच्चोंके लिए तो इनकी आवश्यकता और भी अधिक है। स्वस्थावस्थामे भी बहुतसे बच्चोको पर्याप्त मात्रामे इनकी प्राप्ति नही हो पाती और रुग्णावस्थामे तो, जब इनकी और अधिक

आवश्यकता रहती है, बहुतसे बच्चोको शुद्ध हवा और निद्रा और भी कम मिल पाती है।

(३) दुर्घटना, आघात आदि—चारपाई, पालने आदिसे गिरनेके कारण कभी-कभी मेरुदड आदिका स्थान-भ्रश हो जाता है जिसका उस समय पता नही चलता, पर इसके कारण शारीरिक क्रियामे बाधा पडने लगती है। प्रसवमे कठिनाई होनेपर यत्रो आदिके प्रयोगसे भी खोपडीकी जडके पासकी कोमल अस्थिया अपने स्थानसे हट जा सकती है। इस स्थान-भ्रशके कारण कुछ नाडियोपर दबाव पड सकता है जिससे वे अपने क्षेत्रका नियत्रण करनेमे असमर्थ हो जा सकती हैं। उदाहरणार्थ, श्वास-कष्ट खोपडी-के मूलके पासकी नाडीपर दबाव पडनेका परिणाम हो सकता है और यदि वह आहारोपचारसे ठीक न हो तो मालिश आदिसे ठीक किया जा सकता है।

(४) गर्भगत और आनुवशिक प्रभाव—यह सत्य है कि गर्भमे रहते समय प्रकृति अगर आवश्यक हो तो माताकी शक्तिका ह्रास करके भी शिशु-की यथासभव रक्षा करती है, पर पुश्त-दर-पुश्त बेमेल या बुरा आहार ग्रहण करते और बुरी अवस्थामे रहते आनेके कारण कुछ रोगोकी प्रवृत्ति आनुवशिक हो जाती है। मा-बापके कारण भी कुछ बच्चोंमे विकार आ जाते हैं जो एकसे दूसरी पीढीमे सक्रमण करते रहते है।

(५) रोग दबानेवाला उपचार—रोगके लक्षणोको दबानेवाले और गलत उपचारसे पीछे उसी मूल कारणसे किसी दूसरे रूपमे रोग प्रकट होता है।

ये ही पाच बाते अलग-अलग या एक दूसरीसे मिलकर रोगका कारण वनती हैं। इनकी वहुत कुछ रोक-थाम की जा सकती है और लक्षणोको दवाओ, वैक्सीन, लसीका आदिके जरिये दवानेकी अपेक्षा इन रोग उत्पन्न करनेवाली परिस्थितियोमे परिवर्तन करना अधिक वुद्धिमत्तापूर्ण वात है। कुशल यही है कि शरीरमे पूर्वस्थिति प्राप्त करनेकी प्राकृतिक प्रवृत्ति होती है और वह स्वास्थ्यलाभके लिए हमेशा प्रयत्नशील रहता है। सर्दी, फोडा

आदि शरीरके अपने विकारोको दूरकर सफाई कर लेनेके प्रयत्नके ही परिणाम हैं।

कीटाणुओंका स्थान गौण

एलोपैथी बच्चोंके सक्रामक रोगोको कीटाणुओके आक्रमणका परिणाम मानती है जिसपर माताका वस्तुत कोई नियत्रण नही होता। इसलिए यह पद्धति इन कीटाणुओका नाश करने और चाहे जिस प्रकारका आहार देकर रोगीकी ताकत बनाये रखनेका प्रयत्न करती है। प्राकृतिक पद्धति इसके विपरीत कीटाणुओको गौण स्थान देती है और यह मानती है कि वे तो बच्चेके शरीरमे तभी अड्डा जमाते हैं जब उनकी बाढके लिए उपयुक्त क्षेत्र प्रस्तुत रहता है और शरीरमे एकत्र मल और विकारको छिन्न-भिन्न करके साफ करनेकी जरूरत होती है।

कीटाणु शत्रु नहीं !

प्रकृतिका सतुलन कायम रखनेका तरीका बहुत जटिल और विचित्रता-पूर्ण है। जिन कीटाणुओके विरुद्ध डाक्टर युद्ध छेडते हैं वे प्राय मानव-जातिके मित्र होते हैं। शरीरकी हालत ठीक न होनेपर, वे इसकी सूचना देते है और एकत्र मलपर, जो उनका आहार है, रहकर शरीरके लिए भगीका काम करते हैं। कुछ कीटाणु बच्चेके शरीरमे विशेष प्रकारके लक्षण भी उत्पन्न करते हैं। विशेष प्रकारका चर्मस्फोट, खासी, ग्रथिशोथ आदि इसी प्रकारके लक्षण है जिन्होने डाक्टरोको कीटाणुओको मूल कारण माननेको बाध्य किया है। शरीरकी प्राकृतिक रक्षणशक्ति इन भगियोसे बादमे निपट लेती है और अतमे उन्हे ठीक उसी तरह नष्ट कर देती है जिस तरह वे कीटाणु एकत्र मलका खातमा करते हैं। अगर शरीरको पुन. साधारण [illegible] योग्य स्वस्थ बनाना है तो एकत्र मल, नष्ट हुए कीटाणुओ, निर्जीव श्वेतकणो तथा इस प्रक्रियाके कारण उत्पन्न अन्य सारे विकारोको

शरीरसे किसी-न-किसी प्रकार बाहर निकालना ही होगा। विचारकी दृष्टिसे आक्रमण करनेवाले कीटाणुओका विषय गौण है। अधिकाश सक्रामक रोगोका क्षेत्र बहुत कुछ सीमित होता है, पर रोगका दौरा समाप्त हो जानेपर बच्चेकी अवस्थामे बहुत अधिक अतर आ जाता है—वह रोगका तीव्र रूप रहते समय जैसा उपचार हुआ होगा उसीके अनुरूप होगी। इसलिए उपचारमे इन चार बातोपर विशेष रूपसे ध्यान देना आवश्यक है।

१ बच्चेके शरीरमे जो मल एकत्र है उसमे किसी तरह वृद्धि न होने पाये। मतलब यह कि जबतक बच्चेको बुखार रहे तबतक उसका भोजन—चाहे वह कोई ठोस पदार्थ हो या दूध आदि तरल पदार्थ—बिलकुल बद रखा जाय, जब मलके पूर्णत निकल जानेका लक्षण प्रकट हो तभी खानेको दिया जाय। औषध, पुष्टिकारक पदार्थ, सूई आदिका प्रयोग भूलकर भी न किया जाय, क्योकि इन्हे भी निकालना पडता है और ये शारीरिक क्रियामे बाधा डालने और असतुलन उत्पन्न करनेके अलावा मलकी वृद्धि करते हैं।

२. शरीरको मलसे, जो भगियो (कीटाणुओ) के आक्रमणका कारण हुआ है, छुटकारा पानेमे मदद दी जाय। इसका अर्थ यह है कि मल निकालनेवाले चारो प्राकृतिक मार्गोको अपना काम करनेमे सभी सभव उपायोसे सहायता दी जाय।

३. बच्चेकी जीव-शक्ति और नाडियोकी शक्तिकी रक्षा की जाय जिसमे शरीरकी सारी शक्ति मल-निष्कासनके कार्यमे सलग्न हो सके। अभिप्राय यह कि बच्चेको बिस्तरपर गरम रखा जाय और उसकी शक्ति भोजन या दवा पचाने या अभिशोषित करनेके कार्यमे जरा भी न लगे।

४ मल निकल जानेपर शरीरके नव-निर्माणके लिए बच्चेको अच्छे खाद्य पदार्थ दिये जाय।

औषधविज्ञानकी भूल

प्रचलित औषध-पद्धतिमे इन चारो बातोपर ध्यान देनेकी जरूरत नही समझी जाती। यह सत्य है कि रुग्ण बच्चेके शरीरसे उस खाद्य पदार्थ-को निकालनेके लिए जो उसे नही देना चाहिए था, दवामे कुछ रेचक भी रखा जाता है, पर कोषाणुओमे स्थित मूल विकार, मृत और जीवित कीटाणुओ और लक्षणोको दबानेके लिए प्रयोगमे लाई गई तरह-तरहकी रासायनिक दवाओको शरीरसे बाहर निकालनेके प्रश्नपर जरा भी ध्यान नही दिया जाता। ये सभी बच्चेके शरीरके लिए विजातीय होते है, इसलिए उसके स्वाभाविक रूपमे कार्य करनेके लिए इनका निकाला जाना जरूरी है और अगर शरीरको इनके निकालनेके प्रयत्नमे सहायता न दी जाय तो इनका बहुत-सा अश शरीरमे पडा रह जायगा।

इस प्रकार औषधोपचारका परिणाम यह होता है कि रोग अपनी स्वाभाविक अवस्थामे पहुच जाता है और शरीर विकारो, विषो तथा प्रयोगमे लाये गये खनिज द्रव्योसे भरा ही रह जाता है और शरीरका अपनी सफाई करनेका प्रयत्न विफल हो जाता है। रोगकी तीव्रावस्था समाप्त हो जानेपर भी बच्चेकी तबीयत खराब ही रहती है और उसका शरीर बडी मथर गतिसे स्वास्थ्यकी ओर बढता है। कहनेके लिए तो बच्चा नीरोग हो जाता है, क्योकि रोगका कोई लक्षण मौजूद नही होता, पर दरअसल उसका रोग पूर्व अवस्थामे बना रहता है और उसका शरीर सफाईके दूसरे अवसरपर कीटाणुओके आक्रमणके लिए उपयुक्त क्षेत्र बना रहता है।

प्राकृतिक उपचार चार मुख्य सिद्धातोपर आधारित है—

१. उपवास—भोजन, दवा और सूईसे परहेज,

२ स्वच्छता—चारो मल-मार्गोसे मलका समुचित विसर्जन जिसमें भीतर-बाहर पूरी सफाई रहे;

३. विश्राम—जीवशक्तिका सचय; और

४ पुनर्निर्माण—उपवासके बाद सयत मात्रामे उपयुक्त आहा

उपवास

अस्वस्थ शिशु आप-ही-आप भोजनका त्याग कर देता है। शरी ठीक तरहसे काम न करते समय उसका भार न बढने देनेका यह प्रकृति उपाय है। माताको प्रकृतिके इस आदेशके पालनपर हमेशा ध्यान दे चाहिए और उसे प्रसन्न होना चाहिए कि बच्चेका स्वास्थ्य इतना अच है कि अस्वस्थ होनेपर भोजन नही ग्रहण कर रहा है और उससे परहेजव विश्राम करना चाहता है। प्राय बच्चे खानेके लिए तैयार हो जाते जब कि खानेसे एक-दो दिन और परहेज करना अच्छा हुआ होता। जुका टौसिलका बढना, खासी, कृमि आदि जैसे रोगोमे यह स्थिति हो सकती है इस हालतमे माताको इस बातका प्रयत्न करना चाहिए कि बच्चा खाने परहेज करे।

खाद्य पदार्थ बच्चेकी दृष्टिसे अलग रहे और उसे उसकी गध भी मिलने पाये। सबसे अच्छा यह हो कि बच्चा बिस्तरपर ही रखा जाय भोजनजन्य आनदके अभावकी पूर्ति उसे खिलौने आदि देकर की जा सकत है। माताको चाहिए कि पहलेकी अपेक्षा उसके निकट अधिक समयत रहे और उसे कुछ सुनाती या उसके साथ खेलती रहे।

स्वच्छता

उपचारका यह सर्वाधिक सक्रिय अग है। सफाईके चार मार्ग इसलिए इसके चार विभाग हो जाते हैं—

क—आतोके द्वारा—उपवास करते समय मल-विसर्जनकी साधारण क्रियाको उत्तेजित करनेके लिए बच्चेके अन्नमार्गमे कोई नया पदार्थ नहीं पहुचता, इसके अलावा अभिशोषणकी क्रिया न होनेके कारण शरीरके कोषाणुओसे मल निकलकर आतमे पहुचता है। इस मलको आतमे नहीं

रुकना चाहिए, नही तो शरीर पुन उसका शोषण कर लेगा। इसलिए उपवास करते समय बच्चेको सुबह-शाम एनिमा देना आवश्यक है। यह बिलकुल सरल काम है, इसमे माता या बच्चेको कोई परेशानी नही होनी चाहिए।

ख—त्वचाके द्वारा—त्वचा मल निकालनेका अच्छा अग है और उसके साथ इसी रूपमे व्यवहार भी होना चाहिए। वह छोटे-छोटे छिद्रों या स्वेद-ग्रथियोसे भरी रहती है जिनके जरिए बराबर क्लेद निकलता रहता है। इस क्लेदके भाप बननेपर स्वस्थावस्थामे भी मलके सूक्ष्मकण त्वचापर जम जाते है, रुग्णावस्थामे तो इस प्रकार निकलनेवाले मलकी मात्रा और बढ जाती है, इसलिए त्वचाको यह कार्य करनेके लिए उद्दीप्त करनेका जो भी उपाय हो करना चाहिए। पहला उपाय तो यह है कि अगर बच्चा बहुत बीमार नही है, तेज बुखार नही है या बहुत लस्त नही हो गया है तो उसे रोज गरम पानीसे दो बार नहलाया जाय, बुखार आदिकी हालतमे गरम पानीमे तौलिया निचोडकर बदन पोछ दिया जाय। इनसे त्वचापर जमा हुआ मैल निकल जायगा और नीचेकी ग्रथिया उद्दीप्त होकर और सक्रिय हो जायगी।

दूसरा उपाय कटि-स्नान है। इससे भी त्वचा और आतोको अधिक मल निकालनेके लिए उद्दीप्त किया जा सकता है। बुखार होने और पसीना कम निकलनेकी हालतमे यह बहुत प्रभावकर होता है और नीद भी लाता है। ठढ न लगने देनेके सबबमे पूरी सावधानी बरती जाय।

तीसरा उपाय सारे बदनकी गीली पट्टीका प्रयोग है। इससे शरीरको कभी-कभी बहुत लाभ पहुचता है और उसकी मल-निष्कासनकी शक्ति बढ जाती है। अगर माताको इस उपचारमे हिचक या घबराहट मालूम हो तो इसे करना जरूरी नही है। अगर पहली बार इस उपचारसे परिचित किसी व्यक्तिसे मदद ली जाय तो बुद्धिमानीकी बात होगी।

ग—फेफडोके द्वारा—फेफडा मल निकालनेवाला तीसरा अग है।

सांस छोडनेपर क्लेद और वाष्पीय मल शरीरसे निकल जाता है और अगर साससे लगातार शुद्ध हवा न मिलती रहे तो निकला हुआ मल फिर फेफडोके अदर पहुच जायगा।

रुग्ण बच्चा गरम रखा जाय, पर कमरेकी हवा ताजा हो। इसका मतलब यह है कि खिडकिया खुली रखी जाय। अगर ठड अधिक हो तो बैठे रहते समय गरम पानीकी बोतले रखी जाय और बच्चा स्वेटर या कोई आरामदेह कपडा पहने रहे। अगर बहुत आवश्यक हो तो कमरेमे आग भी रखी जा सकती है, पर चाहे जैसे हो, हवा शुद्ध रहे। अगर बच्चा बहुत बीमार या अशक्त न हो तो सुबह-शाम खिडकीके पास जाकर गहरी सास लेनेका कुछ व्यायाम करे और अगर कमरेमे धूप आती है तो चारपाई इस तरह रखी जाय कि उसको कुछ धूप मिल सके।

घ—वृक्कोके द्वारा—रुग्ण बच्चेको खाना तो नही चाहिए, पर वह पानी इच्छाभर पी सकता है। सादा पानी सबसे अच्छा होता है और कुछ बच्चे और पेयोसे इसे अधिक पसंद भी करते हैं। अगर वह सादा पानी पीना न चाहे तो मतरे, सेब, दाख-जैसे किसी फलका रस या तरकारीका कुनकुना या ठडा रसा भी दिया जा सकता है। पानीमे घोला हुआ कच्ची गाजरका रस बहुत अच्छा पेय है। अगर बर्फ मिलती हो तो बहुतसे बच्चे उसका एक टुकडा ग्लासमे रखना पसद करते हैं। पेयकी मात्रा बच्चेकी इच्छापर निर्भर है। कभी-कभी रुग्ण बच्चे काफी पानी पीते है और कभी बहुत कम। रातमे उसके बिस्तरके पास एक ग्लास पानी अवश्य रहे और कमरेमे मद प्रकाश भी रहे जिसमे बच्चेको प्यास लगनेपर पानी आसानीसे मिल जाय।

विश्राम

वस्तुत शरीरकी जीवशक्ति ही आरोग्य प्रदान करती है। यहा जिस उपचारका उल्लेख किया गया है उससे शरीरके अदर निहित आरोग्य-

दायक शक्तिको सहारा भर मिलता है जिसमे वह और अधिक कार्य कर सके। शरीरकी सारी शक्ति आरोग्य-लाभकी इसी प्रक्रियामे लगनी चाहिए। यह भी एक कारण है जिससे वच्चेको विस्तरपर गरम रखनेकी राय दी जाती है जिसमे उपवास करते समय शरीरमे गरमी लाने या चलने-फिरनेमे उसकी शक्ति खर्च न हो। फिर भी अगर वहुत वीमार न हो तो छोटे वच्चेको उपवास करते समय भी हमेशा विस्तरपर रखना अच्छा नही होता। अगर वच्चा वस्तुत रुग्ण न होकर साधारण रूपमे अस्वस्थ हो और जीवन तथा उत्साह लहर मार रहा हो तो उपवास करते समय भी उसे विस्तरपर रखना भूल है। इस हालतमे उसकी प्रवृत्तिके विरुद्ध उसे विस्तरपर रखनेमे कमरेमे खेलनेकी अपेक्षा नाडी-शक्तिका अधिक व्यय होगा।

उपवास करते समय वच्चेको कमरेके अदर ही रखना चाहिए जिसमे उसे ठड लगनेका भय न रहे और वह खाद्य पदार्थको देख या उसकी गध न पा सके। अगर वह विस्तरपर पडा न हो तो उसे मध्याह्नमे पूरा विश्राम करना चाहिए और शामको जल्द सो जाना चाहिए। वीमारीकी हालतमे प्राकृतिक उपचार करानेवाले वच्चोको उन वच्चोसे अधिक नीद आती है जिन्हे अपने रोगके साथ-साथ आहार और दवासे भी निपटना पडता है। वे स्वस्थावस्थाकी तरह आरामकी नीद नही सो पाते, पर उनमे अधिक सोनेकी प्रवृत्ति रहती है। यह आरोग्य-लाभकी प्रक्रियाका एक महत्त्वपूर्ण अग है। अगर वच्चा सो रहा हो और उसे कटि-स्नान कराकर या वदन पोछ-कर सोनेके लिए तैयार करनेका समय हो तो भी उसे नही जगाना चाहिए।

साधारणत वच्चे शामको कटि-स्नान, एनिमा आदिके लिए तैयार हो जाते है, और यह कुछ दिन रहते, कर लेना अच्छा होता है, क्योकि देर होनेपर थके हुए वच्चे सो जाया करते हैं। ज्वरग्रस्त वच्चेको गाढी नीद नही आती और वह स्वप्नमे प्रलाप भी कर सकता है, इसलिए कमरेमे लालटेन रखकर किसी चीजसे ओट कर दी जाय और कोई प्रौढ व्यक्ति उसके निकट रहे जिसमे प्रलाप करने लगनेपर उसे शात कर सके।

पुनर्निर्माण

ज्वर उतर जानेपर—जिसमे प्राय. तीन दिन और कभी-कभी पाच दिन लग जाते है—पाचन-क्रिया पुन प्रकृत रूपमे चालू हो जाती है। अधिकाश अवस्थाओमे पहले फलका रस—जल मिलाया हुआ नही—देना अच्छा होता है और बादमे सतरा, टमाटर, सेब आदि फल दिये जा सकते है। फलाहार कितने दिन चले इसका निश्चय बच्चेके रोगकी अवस्थापर निर्भर होगा। कुछ हालतोमे दूध या पानी मिला हुआ दूध फलके साथ दिया जा सकता है। इसके बाद आहारमे सूखे फल, हरी तरकारिया, चोकरदार आटेकी रोटी, मक्खन, शहद, आलू आदि रखे जा सकते हैं।

जो बच्चे पहले तरकारी नापसद करते थे उन्हे अगर उपवासके बाद थोडी तरकारी दी जाय तो वे खुशीसे स्वीकार कर लेगे। इस कालमे इस बातका खयाल रखना चाहिए कि बच्चेके आहारकी मात्रा आवश्यकतासे अधिक न हो—मात्रा सयत होनेपर भूख तेज रहेगी। कई दिनोके उपवास-के बाद उसे उठकर तत्काल दौड-धूप भी नही करनी चाहिए, क्योकि भोजन आरभ करनेपर बडी शक्ति मालूम होती है। उसे धीरे-धीरे ही बढने देना चाहिए।

लक्षण दबाए न जायं

रोगका मूल कारण दूर न कर ज्वर या रोगके लक्षणोको दवाओके जरिए दबानेका भयकर परिणाम यह होता है कि मसूरिका आदि रोगोके बाद तरह-तरहके उपद्रव उठ खडे होते है। आरभिक रोगके परिणामस्वरूप दृष्टि, हृदय आदिको किसी तरहकी क्षति नही पहुचनी चाहिए। प्राकृतिक पद्धतिके जो सिद्धात यहा दिये गए हैं उनके अनुसार उपचार होनेपर इस तरहकी कोई बात नही होती; क्योकि रोग अप्रिय या कष्टकर होते हुए भी शरीरकी प्राकृतिक प्रक्रिया है—स्वास्थ्यका सुधार करनेका प्रकृतिका एक उपाय है। मनुष्य प्रकृतिके इस रहस्यको न समझकर रोगके लक्षणोको

दवानेका प्रयत्न करता है जिससे रोग पीछे दूसरे और प्राय अधिक भयकर रूपमे प्रकट होता है।

प्राकृतिक पद्धतिसे वच्चेका उपचार होनेपर उसका स्वास्थ्य मसूरिका आदिके प्रकट होनेके पहलेकी अपेक्षा अधिक अच्छा होगा। उसका शरीर अव ऐसे मकानके समान होगा जो पूरी सफाईके कारण कुछ अव्यवस्थित तो हुआ था, पर उसमेकी सारी धूल, जाले और मकडे निकल गए है। अव सारी चीजे यथास्थान हो गई है और मकान धो-पोछकर चमका दिया गया है। अगर उपचार उचित ढगसे हुआ है तो स्वास्थ्य-लाभका समय लवा नही होगा और रोगका प्रत्यावर्तन और उपद्रव आदि होनेकी भी कोई सभावना नही रहेगी।

रोगकी पूर्वावस्था और उसका निवारण

अगर हम शतप्रतिशत स्वस्थ हो तो ऐसा कोई कारण नही जिससे हम शरत् ऋतुमे भी ग्रीष्मकी ही तरह स्वस्थ न रह सके; पर दुर्भाग्यकी बात तो यह है कि हमारा स्वास्थ्य ऐसा नही है और हम मौसिम या जीवन-यापनके ढगमे परिवर्तन होते ही रोगके चगुलमे फस जाया करते हैं। यही कारण है जिससे आश्विन और चैत्रमे हमेशा रोग व्यापक हो जाया करता है। अगर स्वास्थ्य गिरी हुई अवस्थामे न हो, रोगकी प्रवृत्ति या उसकी पूर्वावस्था पहलेसे प्रस्तुत न हो तो सक्रिय रहनेवाले बच्चोंके पास रोग फटकनेका नाम भी न ले। स्वास्थ्यकी दृष्टिसे इस अवस्थापर ध्यान देना बहुत आवश्यक है और प्राकृतिक पद्धति तो इसीको रोगका अग्रदूत मानती है।

रोगकी पूर्वावस्थाके लक्षण

रोगकी पूर्वावस्था शरीरकी वह अवस्था है जिसमे उसका कोई भाग इससे अछूता नही रहता। इस अवस्थाकी अतिम परिणति किसी एक अगमे व्यक्त रोग या किसी सक्रामक रोगके रूपमे हो सकती है, पर आर-भिक रूप उपर्युक्त अवस्था ही है जो सारे शरीरमे व्याप्त रहती है।

रोगके किसी अगमे प्रकट हो जानेपर दवाओ, सूइयो या प्रचलित चिकित्सा-प्रणालीके अन्य साधनोंके जरिए केवल उस अगका या उस अगमे व्यक्त लक्षणोका उपचार करनेमे लग जानेकी गलती करना लोगोंके लिए साधारण-सी बात है, पर जो माता-पिता स्वास्थ्यके रहस्योंसे परिचित हैं वे रोगके प्रकट होनेकी प्रतीक्षामे नही बैठे रहेगे, वे बराबर सावधानीके साथ यह देखते रहेग कि बच्चेमे रोगकी पूर्वावस्था प्रस्तुत न होने पाये और उसका स्वास्थ्य इतना अच्छा बना रहे कि वह खूब खेलता-कूदता रहे, प्रसन्न

रहे, अच्छी तरह सोए और उसे अच्छी भूख लगे, पर साधारणत लोग कोई रोग प्रत्यक्ष न होनेपर बच्चेको स्वस्थ मान लेते है और उन्हे रोगकी इस पूर्वावस्थाकी पहचान नही हो पाती। ऐसे बच्चेमे साधारणत ये बाते देखी जा सकती हैं—

१ दातोका क्षय,
२ चिडचिडापन,
३ कब्ज,
४ अनिद्रा या प्रगाढ निद्राका अभाव,
५ सर्दीकी प्रवृत्ति,
६ आतमे कृमि,
७ जल्द थकान आना, और
८ सादे, प्राकृतिक आहारसे चिढ।

क्षयोन्मुख दात, चिडचिडापन, भोजनसबधी परेशानिया आदि रोगकी पूर्वावस्था वर्तमान होनेके ही चिह्न है, पर ये अवस्थाए ऐसी नही हैं कि इनका स्वतत्र रूपमे उपचार किया जा सके, क्योकि ये गहराईतक पहुची हुई खराबीके लक्षणमात्र हैं और औषध, इजेक्शन आदि उपचारो द्वारा इनपर नियत्रण नही किया जा सकता। इस पूर्वावस्थाके निवारणका एकमात्र निरापद उपाय है स्वास्थ्यका सुधार जिसके लिए निम्नाकित सात उपायोका सहारा लेना आवश्यक है।

सुधारके उपाय

१. बच्चेकी समुचित बाढ और जीवन-धारणसबधी दैनिक क्रियाओंके विचारसे उनके आहारमे सभी आवश्यक तत्त्वोवाले खाद्य पदार्थ सादे और अविकृत रूपमे पर्याप्त मात्रामे रहे। कुछ पदार्थोका अपक्वावस्थामे रहना भी आवश्यक है। यह व्यवस्था बिना किसी झमेलेके, इत्मीनानके साथ होनी चाहिए।

२. बच्चेके आहारमे कोई नि सत्त्व पदार्थ न रहे; पाकक्रियाद्वारा स्वादिष्ट बनाया हुआ पदार्थ भरसक न रहे और अगर रहे भी तो नाममात्रका।

३ आहार पूर्णत सतुलित हो, उसमे किसी पदार्थकी मात्रा आवश्यकतासे अधिक न रहे, क्योकि अच्छा होते हुए भी उसके अधिक होनेपर शरीरमे विकार एकत्र हो जायगा।

४ बच्चेको दिन और रातमे भी पर्याप्त स्वच्छ वायु मिलनेकी उचित व्यवस्था रहे।

५ बच्चेके व्यायाममे कमी न हो और जहातक सभव हो मैदानमे धरती-माताके सपर्कमे हो।

६ बच्चा गाढी नीदमे काफी सो सके।

७ बच्चा यह अनुभव करे कि वह सुखी और सुरक्षित है और उसे प्यार प्राप्त है, पर इसका दिखावा न हो और उसके प्रति जो कुछ बर्ताव हो वह उतावलीके साथ न होकर अनुशासित रूपमे हो।

नियमोंका उल्लंघन

ये सभी नियम केवल व्यवहारबुद्धिपर आधारित हैं और शायद अधिकाश माताए इनसे सहमत होगी। वे यह भी खयाल कर सकती हैं कि वे इन नियमोका पालन भी कर रही हैं, फिर भी वे यही देखती हैं कि उनका बच्चा रोगके चगुलमे फस जाता है। हमारा खयाल है कि बहुत कम माताए इन नियमोका पालन करती है और अधिकाश तो प्रथम तीन नियमोका अवश्य ही उल्लघन करती हैं। प्राकृतिक सिद्धातोंके आधार-पर निकलनेवाली पत्रिकाओके पाठक भी जो प्राकृतिक आहार चलानेका प्रयत्न करते हैं, उक्त नियमोंके पालनमे पूरे नही उतर पाएगे। अगर इन नियमोका पालन न हो तो धीरे-धीरे अलक्षित रूपमे निर्बलता आती जायगी और रोगकी पूर्वावस्थाके कुछ लक्षण प्रकट होने लगेगे। अगर इन नियमोका ईमानदारीके साथ पालन भी किया जाय तो आनुवशिक दोषो

और नि सत्त्व घरतीमे उपजाए जानेके कारण खाद्य पदार्थोकी खराबीका सवाल रह ही जाता है। फिर भी ये त्रुटिया ऐसी नही है जिनके कारण उपर्युक्त नियमोंके पालनकी आवश्यकतामे किसी तरहकी कमी आए।

आनुवंशिक दोष

अगर आनुवशिक दोषके कारण वच्चेको पुष्ट शरीर नही प्राप्त हुआ है तो माता उपर्युक्त नियमोंके पालनपर उचित ध्यान देकर वच्चेका वहुत कुछ कल्याण कर सकती है, पर वह यह आशा नही कर सकती कि उसका वच्चा आनुवशिक विशेपताके कारण अच्छा शरीर पानेवाले और स्वास्थ्यकर ढगमे रहनेवाले वच्चेकी तरह हृष्ट-पुष्ट और स्फूर्तिमय होगा। कभी-कभी माताके सामने यह वैपरीत्य एक वडी कठिनाईके रूपमे उपस्थित हो जाता है कि वह तो अपने वच्चेका स्वास्थ्य ठीक रखनेके लिए कोई प्रयत्न उठा नही रखती, पर उसे वरावर निराश ही होना पडता है और पडोसिनका वच्चा, जिसके लिए वह कोई प्रयत्न नही करती और वच्चा जो जीमे आता खाता-पीता रहकर उसके वच्चेसे अच्छा नही तो कम तदुरस्त नही रहता। यह वात हतोत्साह करनेवाली प्रतीत होती है, पर इससे उक्त नियमोकी विशेपतामे कोई अतर नही आता। अगर कोई व्यक्ति निराश माताके कार्योको गौरसे देखे तो उनमे दोप अवश्य देख पडेगे, साथ ही यह भी हो सकता है कि पडोसिनके वच्चेका स्वास्थ्य दर-असल उतना अच्छा न हो जितना होनेका वह अनुमान करती है।

पहले नियममे वच्चेके आहारकी व्यवस्थाके सववमे इतमीनानकी आवश्यकता वताई गई है। इसका अभिप्राय यह है कि मातामे वच्चेके आहारके सवधमे किसी तरहका उतावलापन नही होना चाहिए और न इसके सवधमे माता और पितामे या माता-पिता और घरके वडे-वूढो या अन्य सवन्धीोमे किसी तरहका मतभेद होना चाहिए। प्राय. लोग वच्चेकी वात लेकर आपसमे झगड़ा किया करते हैं। हालाकि अच्छे-से-अच्छा खाद्य

पदार्थ भी किसी बच्चेके लिए अयुक्त या अस्वास्थ्यकर सिद्ध हो सकता है।

सिद्धांत और व्यवहार

कभी-कभी माताए इन नियमोको सिद्धातरूपमे तो मानती हैं, पर उनके व्यवहारमे यही देखा जाता है कि बच्चेमे किसी कारणसे रोगकी पूर्वावस्था प्रस्तुत होनेपर इस अवस्थाके निवारणके लिए वे इन नियमोका और कडाई और विवेकसे पालन करनेके बजाय औपधोपचारकी ओर दौडती हैं। मलमे दो-एक केंचुओका पाया जाना इसका अच्छा उदाहरण है। वे इन पराश्रयी जीवोको देखकर बहुत डर जाती हैं और उन्हे नष्ट करनेके लिए झटपट दवा इस्तेमाल करने लगती हैं। इससे होता यह है कि इन पराश्रयी जीवोको, जो कब्ज या जुकाम-जैसे रोगकी पूर्वावस्थाके कारण आतोमे पड जाते हैं, नष्ट करनेके लिए जो विषैली दवा दी जाती है वह अनिवार्यत इतनी तेज होती है कि बच्चेके शरीरको भी विषाक्त कर देती है। केंचुओकी उपस्थितिसे प्रत्यक्ष होनेवाली रोगकी पूर्वावस्था दूर करनेके लिए किया जानेवाला यह उपाय बच्चेकी हालत और खराब कर आसानीसे रोग प्रस्तुत कर देता है। अगर इस पूर्वावस्थाका समझदारीके साथ उपचार किया जाय तो औषधोपचारसे प्रस्तुत होनेवाली पाचनकी अस्तव्यस्तता आदि खराबियोका आसानीसे निवारण हो जाय।

जिस तरह घबडाकर द्रव्यौषधोका सहारा लेना बुरा होता है उसी तरह घबडाहटमे उपवासका सहारा लेना भी हानिकारक हो सकता है। माताका प्रयत्न स्थिरता और धीरताके साथ बच्चेका स्वास्थ्य ऐसा बनानेका होना चाहिए जो रोगकी पूर्वावस्थासे उसे मुक्त कर दे।

दवा और टीका

कुछ दिनोकी वात है कि एक एलोपैथिक डाक्टर मित्र हमसे मिलने आए तो अपने चिकित्सा-सबंधी अनुभव सुनाने लगे। हम उनके अपने कुटुवमे हुए अनुभवोको सुननेके लिए ज्यादा उत्सुक थे। उन्होने वताया कि उनके छोटे वच्चेकी वीमारी उनके या उनके मित्रोकी समझमे नही आ रही थी फिर भी डाक्टरोने स्टेप्टोमाइसिनका उपयोग किया। वच्चेकी तवीयत कुछ सभली, लेकिन फिर यकायक एक रात खराव होने लगी और उसकी कोई सहायता न की जा सकी। हमारे मित्रका विश्वास था कि वच्चेको पहले जो स्टेप्टोमाइसिनका तीस लाख यूनिट दिया गया था उसीने वच्चेको उस वक्ततक चलाया था। हमारे मित्रके इस विश्वासपर कि स्टेप्टोमाइसिन उनके वच्चेको लाभकारी हुआ हमारी कोई आस्था नही हो सकी।

हम किसी भी रोगकी किसी भी अवस्थामे किसी भी दवाके इस्तेमालके विरोधी है। दवाद्वारा लाए जानेवाले नाशसे हम परिचित है फिर भी कही किसी औषधकी वातपर विचार किया जा सकता है, पर वच्चोकी चिकित्सामे तो दवाका प्रयोग प्राय घातक ही होता है। दवा रोगके लक्षणोको दवानेके प्रयत्नमे जीव-शक्ति कम कर देती है और वच्चेके नीरोग होनेकी सभावना कम हो जाती है। यदि शरीरकी अपनेको स्वस्थ करनेकी शक्ति रोग और दवा दोनोंसे निपट पाती है तभी रोगी स्वस्थ हो पाता है। जो लोग इस चीजको समझते हैं, इसलिए छोटे वच्चोकी चिकित्सा एलोपैथसे न कराकर थोडी दवा देनेवाले होमियोपैथ या काष्ठ औषधोका प्रयोग करनेवाले वैद्यसे कराते हैं।

वच्चेके रोगी होनेका कारण क्या है ?

पहला कारण वच्चेको आवश्यकतासे अधिक खिलाना है। दूसरा

कारण पीनेके लिए बच्चेको पानी न देना। तीसरा कारण है ठोस चीज खानेको देना, जब कि उसका मेदा उसे पचानेके काबिल नही होता। उसके बीमार पडनेका कारण उसे बेजरूरत कपडोसे लादे रखना और तग तथा बद कोठरियो या घरोमे रखना भी है। बच्चेको साफ हवा मिलनी ही चाहिए। साफ हवा बडोकी बनिस्बत बच्चोके लिए ज्यादा जरूरी है। फिर कसरतकी भी, आदमी बूढा हो या बच्चा, हर उम्रमे जरूरत है।

इतना ध्यान रखा जाय तो बच्चा बीमार न पडे, पर यदि बच्चा बीमार हो ही जाय तो दवाके बदले बच्चेकी चिकित्सा क्या हो?

बच्चेको बहुत कपडोसे ढकें नही, उसे काफी पानी पिलाए। पानीमे स्वादके लिए नीबूका रस, थोडा शहद या किसी फलका रस मिलाया जा सकता है। बच्चेको पेटके बल सुलाकर यदि उसकी रीढपर हलके गरम पानीमे भिगोया मोटा कपडा रख दिया जाय तो उसके शरीरकी सारी नाडियोको अपना कार्य करनेके लिए उत्तेजन मिलेगा। बच्चेको रोगके समय उपवास कराते जरा भी न डरे।

बीमारीमे बच्चेकी भूख बद हो जाती है। उस समय उसे केवल पानी पिलाना आवश्यक है। दो-तीन दिनतक बच्चेको पानीपर रखनेमे किसी तरहकी चिता करनेकी जरूरत नही है।

रोग जानेके बाद ही बच्चेको दूध देना चाहिए। बच्चा माका दूध पीता हो तो बच्चेको माका ही दूध पिलाना चाहिए अथवा गायका। बकरी-का मिल सके तो ज्यादा अच्छा है। बकरीके दूधको लोग कोई महत्त्व नही देते। हाला कि वह माके दूधका स्थान लेनेके लिए अधिक उपयुक्त है। गायके दूधकी अपेक्षा बकरीका दूध अधिक सप्राण होता है, इसकी चिकनाई-के कण गायके दूधकी चिकनाईके कणोकी अपेक्षा छोटे होते है, वे गायके दूधकी तरह दूधके ऊपर इकट्ठे होनेके बजाय सारे दूधमे मिले रहते है। कही-कही गावोमे बकरीका थन बच्चेके मुहमे लगा दिया जाता है और बच्चा

दूध पी लेता है। यह पद्धति आदर्श है। कुछ शहरोमे ग्वाले घर-घर गाय ले जाकर दूध दुह देते हैं, यह दूध भी बच्चोंके लिए उपयोगी है।

यहा बच्चेकी हर हालतकी चिकित्सा बताना सभव नही है, पर जितना बताया गया है उसपर बच्चेकी चिकित्साके लिए डाक्टर बुलानेके पहले विचार करने लायक है।

याद रखें जबतक बच्चेके पूरे दात नही आ जाते वह ठोस चीज खाने लायक नही होता, दात आनेपर ही ठोस चीजोको चबा सकता है। अत. पूरे दात आनेतक बच्चेको दूध ही देना चाहिए और कोई दूसरी चीज नही, पर यदि दूध बच्चेको उबालकर देना पडे तो बच्चेको थोडा-सा सतरेका या किसी फलका रस भी दिया जा सकता है।

टीका घातक क्यों ?

टीका लगाना भयकर भूल है और यह प्राय घातक भी होता है। इसके द्वारा नन्हेसे शरीरमे पहुचाया जानेवाला पदार्थ रोगग्रस्त गाय, चूहे या घोडेके शरीरसे लिया जाता है। प्रकृतिका उद्देश्य प्रत्येक जीवको स्वास्थ्यका पात्र बनाकर रखना है और स्वास्थ्यका अर्थ है स्वच्छता, इसलिए रोगी जानवरके शरीरसे लिया गया विषाक्त पदार्थ शरीरमे प्रविष्ट करना कभी युक्तियुक्त नही कहा जा सकता। इसके लाभदायक होनेके प्रमाणमे इसके हिमायती आकडे भी पेश कर सकते है, पर वे सही न होकर भ्रामक ही होते है। जादू-टोनेमे जनता और सरकारी कर्मचारियोका जिस समय विश्वास था उस समय डायनोका अस्तित्व भी सिद्ध करना कठिन नही था। जनता जिस बातको सत्य मान लेती है उसे आकडोका सहारा भी आसानीसे दिया जा सकता है।

जीवविज्ञानकी प्रयोगशालाओमे तैयार किये गये वैक्सीन, लसीका आदिका प्रयोग करनेके लिए लोगोको धुन सवार हो गई है और यह मान लिया गया है कि इनमे स्वास्थ्य प्रदान करने या रोगनिवारण करनेकी

बडी शक्ति है। बच्चोमे बहुकालव्यापी या स्पष्ट प्रभाव प्रकट किये बिना ही इन विषोको निकाल बाहर करनेकी पर्याप्त शक्ति होती है। टीका लगानेपर बच्चोमे इतना अधिक विष प्रविष्ट हो जाता है कि उन्हे स्वास्थ्य-लाभ करनेमे महीनो लग जाते है और प्राय मृत्यु भी हो जाती है। कभी-कभी तो सुई देनेके कुछ ही समय बाद मृत्यु हो जाती है, पर इसपर किसी तरहका दोषारोप नही किया जाता। बच्चेके शरीरको विषाक्त करना एक अपराध है, उसे स्वस्थ जीवन व्यतीत करनेका अवसर मिलना चाहिए। जिस बच्चेकी देखभाल समझदारीके साथ होगी वह एक दिन भी अस्वस्थ नही होगा और जो बच्चा एक मास, एक सप्ताह या एक दिन भी स्वस्थ रहने योग्य है वह हमेशा स्वस्थ रह सकता है।

पेटका दर्द

छोटे बच्चोके पेटमे जब-तब दर्द पैदा हो जाता है। नादान बच्चा बताये क्या, माता नही जानती और न डाक्टर कुछ समझ पाते हैं। बडी परेशानी होती है। यह दर्द कोई नई बीमारी नही है, सभीको होता आया है और इस दर्दके कई घरेलू उपचार भी प्रचलित हैं, पर इस सबधमे जो नयी खोजे विदेशकी शिशु-हितैषिणी सस्थाओने की है वे हमारी बहनोके लिए लाभदायक हो सकती हैं, इसी खयालसे यहा उनका जिक्र किया जा रहा है।

वायुका प्रवेश

पेटका दर्द लगभग तीन महीनेके बच्चेको ही अधिकतर होता है। बडा हो जानेपर उसे यह कम ही सताता है। दर्दके समय बच्चेके पेटमे मरोड भी होती है, वह रोने-चिल्लाने लगता है और ज्यो-ज्यो दर्द जाता है बच्चा रोना कम करके सिसकने लगता है और धीरे-धीरे रोना बद कर देता है। ऐसा दर्द यकायक ही आता है और जानेके बाद फिर करीब-करीब निश्चित समयपर आता है।

यदि बच्चा माका दूध पीते वक्त हवा अधिक पी जाता है अथवा पेटमे वायु अधिक होती है तो पेटमे दर्द हो जाता है। इस समय मा बच्चेको कधे-से लगाकर उसकी पीठपर धीरे-धीरे थपथपाए तो बच्चेको डकार आ जाती है और क्रमश दर्द चला जाता है। इस विधिसे यह साधारण दर्द प्राय. मिनटभरमे गायब हो जाता है।

जो दर्द अधिक देरतक रुकता है और लौट-लौटकर आता है उसका कारण बच्चेकी पाक-प्रणालीमे, खास तौरसे आतोमे वायुका पैदा होना है। यह दर्द भी डकार आनेसे कम हो जाता है, पर इससे दर्दका मूल कारण वायुका बनना—नही रुकता। ऐसी दशामे बच्चेको किसी गरम कपडेपर

या गरम पानीसे भरी और तौलियेमे लपेटी हुई रबरकी थैलीपर पेटके बल लिटाना चाहिए। इससे वायु शीघ्रतासे निकल जायगी। यदि इस समय एक चम्मच गरम पानीमे दो बूंद नीबूका रस निचोडकर बच्चेको पिलाया जाय तो भी शाति मिलेगी। इस दर्दमे आध पाव गरम पानीका एनिमा देना भी लाभकर सिद्ध होता है। बच्चेके पेटमे दर्द उसको अधिक पिलाने या पिलानेमे जल्दबाजीसे काम लेनेसे हो जाया करता है, पर नई बात जो मालूम हुई है वह यह है कि बच्चेकी खुशीमे बाधा पडनेसे भी यह दर्द पैदा हो जाता है अर्थात् मानसिक व्याघातके कारण बच्चेको यह शारीरिक कष्ट होता है। छोटे बच्चो और बडे बच्चोकी मानसिक बनावटमे बडा अतर रहता है। दुर्भाग्यकी बात यह है कि बडे बच्चोके सबधमे जितनी कुछ जानकारी हो चुकी है उससे बहुत ही कम छोटे बच्चोके सबधमे हुई है। इसमे जरा भी सदेह नही है कि छोटे बच्चोके मस्तिष्कपर मनोवेगोका एव मनोवेगोपर शारीरिक सुख-दुखका बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है।

परिस्थितियोंका प्रभाव

नवजात शिशु अपनेको नई परिस्थितिके अनुकूल बनानेमे बडी कठिनाइयोका सामना करता है। उसका मानस, उसकी पाचन-प्रणाली और उसका शरीर तीनो ही बडी कोमल दशामे रहते हैं जिनका सतुलन बडे बच्चोकी अपेक्षा बहुत आसानीसे और बहुत शीघ्र बिगड जाता है। उदाहरणके लिए, बराबर यह देखा जाता है कि तीन महीने या तीन महीनेसे कमके बच्चेको यदि डरा दिया जाय या उसके निकट अधिक शोर किया जाय तो इसका उसपर एक विशेष प्रभाव पडता है। यदि बच्चेका खाट किसी चीजसे टकरा जाय या बच्चेके सिरके निकट कोई चीज जोरसे खटखटाई जाय तो वह अपने हाथोको फैलाकर उनसे अपनेको ढकनेकी कोशिश करता है। बडे लडकोमे यह प्रवृत्ति नही देखी जाती।

पाचन-प्रणालीके रोगोंके सबधमे जितने अन्वेषण हुए हैं वे सभी बताते

हैं कि जब पाचन-प्रणाली ठीक रहती है तब आदमी खुश रहता है और मानसिक स्थिति अपेक्षाकृत अधिक शात रहती है। यह स्थिति बच्चो और बडोंमे समान होती है, पर विशेष जाननेकी बात यह है कि बच्चे जितने ही छोटे होते हैं इस स्थितिके प्रति उतनेही अधिक सवेदनशील होते है। यह सब देखते हुए यह जान पडता है कि बच्चेके पेटके दर्दका सभाव्य कारण परिस्थितिद्वारा उसके मनपर पडनेवाले प्रभावकी प्रतिक्रिया एव पाचनकी गडबटी है।

बच्चोंके पेटका दर्द प्राय दोपहरके बाद शामको या रातको होता है, क्योकि इस वक्त बच्चा और उसकी मा दोनो ही थके रहते हैं जिससे साधारण कारण भी उन्हे शीघ्रतासे उत्तेजित एव क्रुद्ध कर देते हैं। यह भी देखा गया है कि जो बच्चे शोरगुरवाली जगहमे रहते हैं उन्हे पेटका दर्द अधिक होता है। शहरेके बीच रहनेवालोंके बच्चे शहरसे दूर शात वातावरणमे रहनेवालोके बच्चोकी बनिस्वत पेटके दर्दसे अधिक पीडित रहते है। यदि बच्चोको इस पेटके दर्दसे बचाना चाहते है तो उन्हें उचित भोजन देना चाहिए, उनके आरामका खयाल रखना चाहिए और देखना चाहिए कि उन्हे शौच समयपर होता है और इन सबके ऊपर उन्हे शात वातावरणमे रखना चाहिए। शात वातावरण बच्चोको अनेक रोगोसे बचाता है।

घरमे होनेवाली पडपड-तडतड—जैसे टेलीफोनकी घटीका बार-बार बजना, घरका दरवाजा खुलवानेके लिए दरवाजेपरकी थप-थप, रेडियोके बेमुरे गीत या लेक्चर, लोगोका हँसी-ठट्ठा या सिलाईकी मशीनका कर-कर—बडोको बुरी नही लगती; क्योकि वे लोग इन आवाजोका अर्थ समझते है और इस तरहके घरमे होनेवाले अनेक तरहके शब्दोके विरुद्ध उनके कानोंमे प्रतिरोधक शक्ति पैदा हो गई होती है, पर बच्चोकी श्रवण-शक्तिमे ऐसा कोई प्रतिरोध तो पैदा हुआ नही होता अत वे शीघ्रतासे चौक उठते है। यह प्रतिक्रिया चाहे आपको दिखाई न दे, पर ऐसी प्रतिक्रियाए निरन्तर बच्चेमे पेटका दर्द पैदा करनेमे कारण होती हैं।

दूधका असर

बच्चा जबतक तीन महीनेका नही हो जाता तबतक उसकी मासे उसका बहुत अधिक सबध रहता है और उसकी माकी खुशी और नाराजगी, स्वास्थ्य और अस्वास्थ्यका उसपर बहुत अधिक प्रभाव पडता है। यदि मा क्रुद्ध अथवा चिंतित हो जाय अथवा उसमे नाडी-दौर्बल्य पैदा हो जाय तो इससे उसके दूधकी किस्म और मात्रापर ही असर नही पडता वरन् उसके द्वारा माके मनकी स्थिति भी बच्चेको मिलती है और वह बच्चेमे पेटका दर्द भी पैदा कर सकता है।

माको दूध पिलाते वक्त खूब खुश रहना चाहिए और बच्चेको ऐसा सहज भावसे होशियारीसे उठाना और हटाना चाहिए कि वह किसी तरह चौंक न जाय और उसके आस-पास पूर्ण शात वातावरण रखना चाहिए, क्योकि शाति बच्चोको पेट और हर तरहके दर्दसे बचाता है।

कोष्ठबद्धता

बच्चोके लिए यह रोग बहुत बुरा होता है, क्योकि इसे ठीक तरहसे समाल ले जाना कुछ मुश्किल होता है। इससे तरह-तरहके शारीरिक विकार तो उत्पन्न होते ही है, मानसिक विकार भी पैदा हो जाते है जो रोज-रोजकी परेशानीके कारण होते है। बहुतसे विकारोमे तो लोगोको यह अनुमान नही हो पाता कि उनका मूल कारण यही होगा।

रोगका आरंभ

साधारणत यह रोग शैशवके आरभमे ही पैदा हो जाता है और अगर सावधानीके साथ इसकी प्रवृत्तिका निवारण न कर दिया जाय तो यह पूरे शैशवकालमे ही नही, युवावस्थामे भी बना रह जाता है और तरह-तरहके रोग उत्पन्न किया करता है। कहा जाता है कि रातमे या सफर आदिमे बच्चेको तौलियेपर रखना और उसके गदा हो जानेपर उसे बदलनेमे विलब करना ही इस रोगकी प्रवृत्ति होनेका कारण होता है, क्योकि इसमे मलमार्गके ततुओमे उपदाह पैदा हो जाता है जिससे बच्चेकी आत साफ नही हुआ करती।

बच्चेमे कोष्ठबद्धता होनेका असल कारण होता है स्तनपान करानेवाली माताका बुरा खान-पान तथा बच्चेको खिलाने-पिलानेका गलत तरीका। ये तथा छोटी-मोटी अन्य भूले आतमे शिथिलता आने तथा बनी वगैरा कारण हुआ करती है। कभी-कभी मा-बाप भूलसे मृदु विरेचकके जरिये पेटका साफ होना कब्जका दूर हो जाना मान लेते है। अगर शैशवकालमे इसकी प्रवृत्ति दूर करनेकी ओर उचित ध्यान न दिया जाय तो मा-बापकी आखोके सामने कम रहनेकी अवस्था होनेके समयतक रोग

जीर्ण रूपमे परिणत हो जा सकता है जिससे बच्चेका जीवन ही सकटमय हो जायगा।

लक्षण

कोष्टवद्धताके सारे लक्षणोका उल्लेख करना बहुत कठिन है। सच तो यह है कि बच्चेका स्वास्थ्य बुरा होनेका सूचक एक भी लक्षण ऐसा नही हो सकता जिसकी जडमे आतका यह विकार न हो। सबसे प्रकट लक्षण तो मलका अवरोध है, पर इसकी बुराई कहातक पहुचती है इसका अनुमान केवल इस अवरोधसे नही किया जा सकता। मुख्य बात तो रक्त आदिके द्वारा बडी आतोंसे विषका अभिशोषित होना है। इसके साथ अन्य मार्गोंसे मलके विसर्जनमे जो कमी आती है उसे भी शामिल कर लीजिए तब कहीं आप यह अनुमान कर सकते है कि रोगोके निर्माणमे यह विकार कितना सहायक होता है।

जिस बच्चेको कब्ज रहता है—उसमे किसी भी रोगकी—मामूली जुकामसे लेकर यक्ष्मातककी—प्रवृत्ति हो जायगी। इस विकारसे आत्म-विषमयता प्रस्तुत हो जाती है जो रोगका निर्माण करती है। सास बहुत गदी हो जाती है, जीभपर मैल बैठ जाता है, नीदमे बच्चा दात भी पीस सकता है, रातमे डरकर चौक सकता है और कभी-कभी उसे मूर्च्छा भी हो सकती है। वह छोटी-छोटी बातोपर चिढ जाया करेगा। जीर्ण-प्रतिश्याय-क्षीणता, दतक्षय-जैसे भयकर शारीरिक लक्षण भी इसके कारण प्रकट हो सकते हैं।

दूर करनेका उपाय

अगर इस विकारकी ओर ध्यान देनेमे कुछ दिनोतक लापरवाही होती रहे तो इसपर काबू पाने और बच्चेके रहन-सहनका तरीका ठीक करनेमें छ समय लगेगा। खिलाने-पिलानेकी आदतोका विश्लेपण कर यह पता

लगानेका प्रयत्न किया जाय कि इस विकारका आरभ कैसे हुआ। अगर सारे शरीरमे प्रतिश्याय हो तो शरीरकी भीतरी सफाईकी तरफ फौरन ध्यान दिया जाय। इसका फल भी शीघ्र ही देख पडने लगेगा। ऐसी हालतमे अच्छा यह होगा कि आतकी सफाई और शारीरिक क्रियाओके उद्दीपनके लिए एनिमाका प्रयोग किया जाय और वच्चेको दो-एक दिन पानी या सतरे-के रसपर रखनेके वाद तीन-चार दिन सिर्फ फल और सलादपर रखा जाय। यह उपचार किसी तरहकी दवा देनेसे कही अच्छा होगा। जवतक वच्चेके मलसे वदवू विलकुल दूर न हो जाय और मल साफ न निकलने लगे तवतक वह फलो और तरकारियोपर ही रखा जाय। अन्य अवस्थाओमे केवल आहार ठीक कर देना काफी होगा। आहारके सवधमे सादगीका ध्यान वरावर रखा जाय। तरह-तरहकी पाकक्रियाओद्वारा खाद्य पदार्थोको जायकेदार वनाकर खानेकी चाट वढानेकी जरूरत नही है।

आहार

जिन वच्चोकी आतोमे शैथिल्यकी प्रवृत्ति हो उनको नाश्तेमे ताजा और सूखा फल, दोपहरके भोजनमे चोकरदार आटेकी थोडी-सी रोटी, थोडा मक्खन, कुछ हरी तरकारी और सलाद और शामके भोजनमे फल और थोडा दूध देना लाभदायक होगा। विशेष रूपसे स्मरण रखनेकी वात यह है कि आहार और दिनचर्या ठीक करनेके अलावा वच्चोका कब्ज दूर करनेका और कोई उपाय नही है। रोगोके निर्माण, सर्दी, टौसिल आदिके पीछे होनेवाली परेशानी और समयकी वर्वादीमे कब्जका कितना हाथ रहता है इसे मा-वाप कभी-कभी नही समझ पाते। अगर आतें ठीक तरहसे काम करती रहें तो किसी तरहकी कोई शिकायत पैदा होनेका कोई कारण ही नही रहेगा।

अग्निमांद्य

अग्निमाद्य अर्थात् आहारका परिपाक कर पोषण ग्रहण करनेकी अक्षमता रोगकी दिशामे पहला कदम है। बच्चेके आरंभिक जीवनमे यह बात विशेष रूपसे घटित हुआ करती है। अगर इस कालमे आहारसबधी नियमोका उचित रूपमे पालन न किया जाय तो पाचन-सस्थान इस कदर खराब हो जा सकता है कि मृत्यु भले ही प्रस्तुत न हो, पर हालत आजीवन खराब ही बनी रहेगी।

कारण

अगर बच्चेको प्राकृतिक आहार अर्थात् माताका दूध न मिले और वह तरह-तरहके कृत्रिम खाद्य पदार्थोपर रखा जाय तो उसकी जीवन-यात्रा कभी खतरोंसे खाली न होगी। बहुधा इसी अवस्थामे अग्निमाद्यका आरभ होता है और कुछ दिनमे उसके जीर्ण रूपमे परिणत हो जानेपर पाचन-सस्थान उसीका आदी हो जाता है। बहुतसे बच्चे तो जन्म लेनेके दिन ही इसके चगुलमे फँस जाते हैं; क्योकि उन्हे पहले ही दिन स्तनपान शुरू करा दिया जाता है। दूसरी भूल है बार-बार दूध पिलाना। अगर बच्चेमे दूध पिलानेके नियत समयोंके बीच कुछ बेचैनी देख पडती है तो माता इसे पाचनकी खराबीकी सूचक न मानकर भूखकी सूचक मान लेती है। इस प्रकार आहारकी मात्रा और भी बढ जाती है जिसका भार बच्चेके पाचन-सस्थानके लिए असह्य हो जाता है।

लक्षण

यो तो इस विकारमे और भी लक्षण होते है, पर बच्चेकी शारीरिक परीक्षा करनेपर तीन लक्षण आमतौरपर देखे जाते है (१)पाचनक्रिया-

का शिथिल होना और कुछ खाद्याशका अपक्व अवस्थामे शेष रह जाना (२) जुकामकी प्रवृत्ति मलमे श्लेष्माकी अधिकता और अन्ननालीकी श्लैष्मिक कलाकी सकुलता और (३) अगर रोगीकी हालत बुरी हो और उसकी उपेक्षा होती रहे तो अन्त्रावरणमे प्रदाह या व्रणकी उत्पत्ति। इन लक्षणोके साथ बच्चेमे बेचैनी भी रहा करती है। तीव्रावस्थामे वमन, उदरामय और ज्वर भी हुआ करता है, मलत्यागमे नियमितता नही रहती और कभी-कभी श्लेष्मा अधिक मात्रामे निकलता है। कुछ अवस्थाओमे अफरा और दर्द भी होता है।

रोगके जीर्णावस्थामे परिणत हो जानेपर लक्षणोमे और अधिक विभिन्नता देख पडती है। बच्चेकी बाढ रुक जाती है, स्वभाव चिडचिडा हो जाता है और वजन जितना होना चाहिए उतना नही होता, मलत्याग नियमित रूपमे नही होता और मलमे बहुत अधिक श्लेष्मा रहता है, जीभ-पर मैल बैठ जाती है, सास गदी हो जाती है और नीद भी ठीक तरहसे नही आती, बच्चेको जोरोकी सर्दी हो जाती है और श्लेष्माके कारण वायु-मार्गमे घडघडाहट रहती है, वह बहुत जल्द चिढ जाता है और छोटी-सी बातपर आगबबूला हो जाता है और अगर उसमे नाडी-दुर्बलता हो तो पासके लोगोके साथ मेलमे रहना उसके लिए कठिन हो जाता है। इस विकृत पाचनके कारण बहुतसे बच्चोका स्वभाव खराब हो जाता है, पर लोगोको असल कारणका पता नही रहता।

उपचार

अगर रोगी बहुत कमजोर हो गया हो या उसमे चिडचिडापन आदि लक्षण देख पडते हो तो उसे बिस्तरेपर रखिए और रोज शरीरके तापमान-वाले पानीका एनिमा देकर उसकी आत साफ कर दीजिए। अगर यह काम ठीक तरहसे हो जाय तो आहारका वह अश जो पचा नही है, बाहर निकल आएगा और बच्चेको बहुत आराम मालूम होगा।

इस अवस्थामे अन्ननालीमे सडनेकी क्रिया चलती रहती है। औषधोपचारक इससे उत्पन्न होनेवाले जीवाणुओको नष्ट करनेके लिए जीवाणु-नाशक घोलका प्रयोग करते है, पर यह हानिकारक होता है। फलके रसका आहार इसका सबसे निरापद उपाय है। अगर प्रोटीन (दूध, दही, दाल, मास, अडा), कर्बोज (रोटी, चावल, आलू), चिकनाई और साधारण चीनी देना बदकर नारगी, अनन्नास, सेब आदि फलोका रस दिया जाय तो सडनेकी क्रियापर काबू होनेके साथ ही पोषणकी प्राप्ति भी होती रहेगी। अडीका तेल आदि दवाए देना बुरा होता है। रसाहार चलानेके बाद तीन-चार दिनोतक केवल ताजा फल दिया जाय और साधारण आहार देनेकी अवस्था आनेपर तीन बातोका खयाल रखा जाय—(१) भोजन साधारण और सादा होनेके साथ ही भरसक सूखा हो। (२) तरह-तरहकी चीजें एक साथ न मिलाई जाय और (३) अधिक खानेकी गलती करनेसे कम खानेकी गलती करना अच्छा है।

इस रोगके शिकार हुए बच्चोका स्वभाव चिडचिडा हो जानेकी सभावना रहती है और वे सब बातोमे अपनी ही ओर ध्यान देते हैं। इसलिए अगर सभव हो तो उन्हे ऐसे वातावरणमे रखना चाहिए जहा वे अपनी योग्यताका विकास और रचनात्मक कार्योमे अपनी नाडीशक्तिका उपयोग कर सकें, उन्हे अपने पैरोके बल खडा होनेका प्रयत्न करने दिया जाय और अधिक मार्ग-प्रदर्शन न किया जाय।

उदरामय या कै की प्रवृत्ति

उदरामयसे मा-वापको अन्य रोगोकी अपेक्षा अधिक परेशानी होती है। यह रोग शैशवकालके विलकुल शुरूमे भी पैदा हो जा सकता है और वेचारी अनुभवहीन माता घवडाकर गलत उपचार करने लगती है। वच्चेके स्तनपान करते समय और अन्य वातोंके विलकुल ठीक होनेपर भी पालन-पोषणके साधारण ढगमे थोडा भी परिवर्तन हो जानेपर यह रोग हो जाया करता है।

अतिपानका परिणाम

अधिक स्तन-पान कराना ही उदरामयका मुख्य कारण होता है। वच्चोंके अधिकाश विकार अतिपानसे ही होते हैं, अल्पपानसे नही जैसा कि साधारणत लोग विश्वास किया करते है। अतिपानका पहला लक्षण है दूधका वमन, पर अफसोसकी वात तो यह है कि माताए इसका रहस्य ठीक-ठीक नही समझ पाती और वच्चेको मोटा-ताजा देखनेकी धुनमे इस तरह पागल वनी रहती है कि अधिक पिलानेसे वाज आनेका नाम ही नही लेती। प्रकृति इस अतिपानके खतरेसे वच्चेको वचानेके लिए ही उदरामय पैदा कर अनावश्यक अन्न शरीरसे वाहर निकाल दिया करती है।

इसे दवा देकर दवानेका प्रयत्न नही करना चाहिये, आहारकी मात्रा वहुत घटा दी जाय। आतोको आराम पहुचानेका सवसे अच्छा उपाय यह है कि वच्चेको सिर्फ सन्तरेके रसपर चौवीस घटे रखा जाय। अगर मलमे सड़ान और वदवू ज्यादा हो तो गुनगुने पानीसे एनिमाद्वारा आतकी धुलाई कर दी जाय और कुछ कालतक वच्चेको उतना ही पिलाया जाय जितना वह पचा सके, जरा भी मुहसे वाहर निकलनेपर मात्रा घटा दी जाय। अगर मा-वाप अच्छी तरह समझ जाये कि साधारण उदरामय अतिपानके ही कारण होता है तो उनके उपचारमे कोई कठिनाई नही होगी।

बडे बच्चोको भी अधिक खाने तथा चीनी, श्वेतसार आदि खमीर पैदा करनेवाले पदार्थोंके साथ कच्चा फल या मास-मछली आदि जल्द सडनेवाली चीजे गरमीमे खानेसे उदरामय हो जाया करता है। इसमेसे कोई एक कारण यह विकार पैदा करनेके लिए काफी होता है। अगर रोगका रूप साधारण हो तो बच्चेका पेट जल्द ही साफ हो जाता है, पर गभीर होनेपर सुस्ती, ज्वर आदि लक्षण प्रकट हो जाते है।

उपचार

रोगका रूप चाहे जैसा हो, उपचार एक ही प्रकारसे होता है। पहला उपाय है खिलाना बद कर देना। साधारण उदरामयमे तो यही काफी होता है, पर गभीर अवस्थामे बच्चेकी ताकतका खयाल रखना पडेगा कि कही जवाब न दे दे। उपवास करते समय एनिमा दे-देकर उसकी आतकी पूरी सफाई कर दी जाय और जहातक हो सके मानसिक और शारीरिक विश्राम देनेका खयाल रखा जाय। ऐसा न होनेपर उसपर बहुत जोर पडेगा जिसका असर रोग जानेके बहुत दिनो बादतक बना रहेगा।

सामान्य लक्षणके रूपमें

बच्चोके बहुतसे रोगोमे उदरामय सामान्य लक्षणके रूपमे प्रस्तुत हुआ करता है। दतप्रस्फुटनके समय होनेवाला तथाकथित उदरामय पाचनकी खराबीका ही परिणाम होता है। रोहिणी, आरक्त ज्वर, शीतला आदि कुछ कठिन रोगोमे उदरामय कुछ दिनोतक बना रह सकता है। उस हालतमे इस मल-विसर्जनको अच्छा समझना चाहिए। दवाके जरिए इसे रोकनेका प्रयत्न बहुत बुरा होता है। औषधोपचारक माता-पिताके आग्रहसे प्राय यह गलती कर बैठते हैं।

भोजनमें सतर्कता

अगर उचित उपचार हो तो इसका रूप शायद ही कभी गभीर होगा,

पर आरोग्योन्मुख अवस्था सभाल ले चलना रोग सभालनेसे अधिक कठिन होता है। आम तौरसे भूल यह होती है कि लोग बच्चेको जल्द ही प्रोटीन और श्वेतसारवाले खाद्य पदार्थ खिलाने लग जाते है। आहारपर कडाईसे ध्यान दिया जाय और रोगका जरा भी चिह्न देख पडे तो खिलाना फौरन बद कर दिया जाय। गर्मीके दिनोमे मास-मछलीसे परहेज किया जाय, श्वेतसारवाला पदार्थ सिर्फ एक वक्त दिया जाय और केला, आलू तथा इस वर्गके अन्य पदार्थ भरसक न दिये जाय और अगर दिये जाय तो बहुत कम। इनके स्थानपर मौसिमी फल, हरी तरकारिया, सलाद आदि और दूध भी दे सकते है। मट्ठा देना, विशेषकर गर्मीके दिनोमे, बहुत अच्छा होता है।

सर्दी और खांसी

बच्चेका पालन चाहे जितनी सावधानीसे क्यो न किया जाय, पर वह शैशवकाल बिना सर्दी हुए पार कर जायगा, इसकी समावना कम ही रहेगी। इस रोगकी उत्पत्तिमे ऋतु-परिवर्तन उतना सहायक नही होता, पर मौसिम-मे अचानक होनेवाला अल्पकालिक परिवर्तन सब रोगोको उत्तेजन दिया करता है।

सर्दी और खासीमें लक्षणोको दबानेका प्रयत्न सबसे ज्यादा खतरनाक होता है। अगर इन छोटे विकारोके उपचारमें समझदारीसे काम न लिया जाय तो जीर्ण रोगोके लिए, जिनका शरीरमे अज्ञात रूपमे निर्माण होता रहता है, दवाकी तलाश करनेको बाध्य होना पडेगा।

दवासे लाभ नहीं

सर्दीकी नपी-तुली परिभाषा बतलाना बहुत कठिन है। कीटाणु-वादियोका कहना है कि सर्दी कीटाणुके कारण होती है और वे कभी भी आक्रमण कर दे सकते हैं इसलिए सर्दीका निवारण करने या उससे छुटकारा पानेके लिए वायुमार्गके क्षेत्रमे कीटाणुनाशक द्रव्योका प्रयोग करना आव-श्यक है, पर दरअसल ये द्रव्य कुछ सफाई करनेके अलावा और कोई खास लाभ नहीं पहुचाते और भविष्यमें रोगका निवारण करनेकी दिशामें तो वे जरा भी प्रभावकर नही होते।

प्राकृतिक पद्धतिका सिद्धांत

सर्दी और खासीके सबधमें प्राकृतिक पद्धतिका सिद्धात बिलकुल भिन्न है जिसकी सत्यताकी परीक्षा दूसरी बार सर्दी होनेके समय आसानीसे की जा सकती है। रोग शरीरमे एकत्र विषाक्त मलका ही परिणाम होता

है। क्षय और निर्माणकी क्रियामे विषाक्त मलका बनना जारी रहता है और साधारण रूपमे कार्य करते समय शरीर इस मलको वृक्क, त्वचा आदि मलमार्गोके जरिये बराबर बाहर निकालता रहता है। अगर किसी कारण-से मल-विसर्जनकी यह क्रिया मद हो जाय तो यह विकार ततुओमें एकत्र होने लगता है। अगर यह अवस्था अधिक दिनोतक बनी रहे और मल-विसर्जनकी क्रिया उद्दीप्त करनेका कोई उपाय न किया जाय तो रोगकी नीव अवश्य पड जायगी।

ऐसे विषाक्त मलसे भरे हुए शरीरमें सर्दीका प्रस्तुत होना कोई कठिन बात नही है। ठड लगने या इस तरहकी और कोई बात होनेपर शरीरकी प्रतिक्रिया सर्दीके रूपमें हो सकती है। अगर सर्दी बहुत मामूली हो तो वायुमार्गके ऊपरी हिस्सेमे सिर्फ उपदाह-जैसा संवेदन जान पड़ेगा, बार-बार खासी आएगी और कुछ श्लेष्मा भी निकल सकता है, पर अगर इसका रूप गभीर हो तो गलेमे श्लेष्माके कारण घडघडाहट मालूम होगी और खासनेपर काफी श्लेष्मा निकलेगा। अगर नासा-रध्रमें उपदाह हो तो बहुत छीक आएगी और नाक भी बहेगी और नीचेकी ओर, बढे तो श्वसनी इससे ग्रस्त हो जायगी और उसमे प्रदाह प्रस्तुत हो जायगा। फेफड़ोमें फैल जाय तो फुप्फुसप्रदाह (न्यूमोनिया) हो जायेगा। कुछ द्रव्योपयोके सहारे शरीरके सफाईके इस प्रयत्नको दबा देना सभव है, पर इसका परिणाम बहुत भयकर हुआ करता है।

अगर बच्चोकी सर्दी और खासी इस दृष्टिसे देखी जाय तो उपचारके लिए अच्छा आधार मिल जाता है। यह फौरन स्पष्ट हो जायगा कि कीटाणुओका पीछाकर उनको ढूंढ निकालनेका प्रयत्न करनेकी आवश्यकता नहीं है, पर सारी प्रक्रिया हानिकारक विषाक्त पदार्थको निकाल बाहर करनेकी है।

बच्चोको सर्दी कई तरहसे हुआ करती है। थोडी-सी ठड लग जानेपर भी ऐसा मालूम होता है कि सर्दी हो गई है और यह अवस्था कुछ कालतक

बनी भी रह सकती है, पर इससे माता-पिताको घबडाकर तथाकथित आरोग्यदायक औषधोके प्रयोगकी बात नही सोचनी चाहिए, क्योकि वे लक्षणोपर पर्दा डालकर उनको इस धोखेमे डाल दे सकते हैं कि खतरा बिलकुल दूर हो गया।

जाड़ेमे होनेवाली सर्दी

जाडेमे आम तौरसे होनेवाली सर्दी-खासीसे प्राय सभी लोग परिचित हैं। खान-पान आदिमे कोई गडबडी होनेपर इसका आरभ हुआ करता है और इससे छुटकारा पानेका प्रयत्न करनेपर भी प्राय वसतागमतक बनी रहती है। यह एक बधे हुए रास्तेपर चलती है, कभी-कभी पेटमे कुछ गडबडी हो जाती है और कुछ खासी हो सकती है जो बढकर कुकुरखासीका रूप ग्रहण करती हुई जान पड सकती है। माता-पिता औषधोपचारकी सहायता लेते है, पर उसका कोई खास प्रभाव नही होता और लगभग इसी समय वसत आकर इसका अत कर देता है। अगर माता-पिता सर्दी और खासीको हौवा बनने देना नही चाहते तो उन्हे इसे समझनेके लिए प्राकृतिक पद्धति-का दृष्टिकोण अपनाना चाहिए। इस हालतमे वे इस समस्याका आसानीसे हल करनेमे तो समर्थ होगे ही, इसे दवाके जरिए दबाकर जीर्णरूपमे परि-णत करनेकी गलतीसे भी बच जायगे।

इस दृष्टिसे देखनेपर सर्दी और खासीकी भयकरता भी गायब हो जाती है। इसके लिए मा-बापको बच्चेके रोजकी आदतोका विश्लेषण कर सर्दीके कारणका ही नही, उसे दूर करनेके उपायका भी पता लगाना पडेगा। यह उपाय शरीरकी क्रियाओको उत्तेजित कर उसका प्रयत्न आगे बढानेकी दिशामे उतना न होकर उसने जो कार्य आरभ किया है उसमे पडनेवाली बाधाओको दूर करनेका होना चाहिए।

उपचार

शरीरको स्वय अपना प्रयत्न करनेके लिए छोड देना चाहिए। इसके

लिए पहला काम तो यह होना चाहिए कि भोजन बिलकुल बद रहे, क्योकि इस समय शरीर खाद्य पदार्थोको पचाने और उनसे पोषण ग्रहण करनेकी अवस्थामे नही होता। इस समय भोजनसे अरुचि भी हो जाती है जो भोजन बद रखनेपर प्रकृतिका सकेत है।

सर्दी और खासीसे ग्रस्त बच्चेको सफाईकी जरूरत होती है जो सिर्फ उपवासमे पूरी हो सकती है। चौबीस या छत्तीस घटेका उपवास सर्दीका जोर खत्म करनेमे जितना सहायक होगा उतना और कोई उपाय नही हो सकता। इस तरहके उपवाससे किसी तरहके खतरेकी आशका करना भूल है, उलटे इससे बच्चेको शारीरिक और मानसिक दृष्टिसे बडा लाभ होता है। इससे शरीर अपनी सफाई करनेकी क्रिया ठीक तरहसे चलानेकी स्थितिमे हो जाता है और इसके साथ ही बच्चेमे आत्मानुशासनका भाव भी आ जाता है जो और किसी उपायसे उतना नही आता। अगर परि-स्थितिया अनुकूल हो तो बच्चेके लिए उपवास करना कठिन नही होगा। प्राय घरमे जो भय और परेशानीकी स्थिति होती है वही बच्चेका सतुलन अस्तव्यस्त कर देती है।

उपवासके बाद बच्चेको कुछ दिन सिर्फ फल और सलादपर रखा जाय। इन पदार्थोसे उसे शरीरके लिए आवश्यक वानस्पतिक लवण तथा अन्य तत्त्व मिल जायगे। इसके बाद हालतमे ज्यो-ज्यो सुधार होता जाय पूर्णान्न और तरकारिया बढाते जाइए और फिर दूध तथा दूधसे बने पदार्थ शामिलकर उसे प्राकृतिक पद्धतिद्वारा अनुमोदित आहारका रूप दे दीजिए जिससे बच्चेके शरीरमे रोगोका निरोध करनेकी शक्ति काफी बढ जाय।

कुकुरखांसी

कुकुरखासी बहुत कष्ट देनेवाला रोग है और अगर इसके उपसर्गोपर ध्यान दिया जाय तो यह बहुत खतरनाक भी है। इसके कारणोंके सबधमे बहुत मतभेद देख पडता है। औषधोपचारकोंके अनुसार यह रोग सक्रामक होता है और जाडेके दिनोमे तो यह बहुव्यापक भी हो जाता है। पहली और दूसरी बार दात निकलनेके बीचकी अवस्थावाले बच्चे इसके अधिक शिकार होते हैं। दुधमुहे बच्चे भी इसके अपवाद नही हैं। यह भी कहा जाता है कि यह रोग लडकोसे अधिक लडकियोको होता है। कभी-कभी जवानो और बूढोको भी हो जाता है और बूढोमे तो इसका रूप बहुत भयकर होता है। ऐसा जान पडता है कि जुकामकी हालतमे ही यह सक्रामक होता है। एक बार हो जानेपर यह दूसरी बार शायद ही होता है।

लक्षण

इस रोगके लक्षणोकी पहचान बडी आसानीसे हो जाती है। यह लबे अरसेतक बना रहता है इसलिए इस प्रकारके अन्य रोगोंसे इसका अन्तर करना कठिन नही होता। लगातार जोरदार छोटी-छोटी खासिया आती है और उनमे सासका उतना योग नही होता। चेहरा तमतमा जाता है, काफी श्लेष्मा निकलता है और कभी-कभी वमन भी हो जाता है। इसमे बच्चेको बडा कष्ट होता है और वह डरकर सहायताके लिए माता-पिताको पकड लेता है।

औषधोपचारकोको इसके उपचारमे किसी प्रकारकी जरा भी सफलता नही मिलती। प्रत्येक औषधका कुछ-न-कुछ असर होता ही है। अगर वह अच्छा नही होता तो उसका बुरा होना निश्चित है। इसलिए रुग्ण शरीरमे अज्ञात प्रभाव उत्पन्न करनेवाले द्रव्योको प्रविष्ट करना नासमझी-का परिचायक है।

रोगका कारण

औषधोका प्रयोग न करनेवाली मर्दनोपचार आदि पद्धतिया भी इस रोगके कारण और उपचारके सवधमे एकमत नही है। वे कीटाणु-सिद्धात नही मानती और शरीरके सुधारपर ही ध्यान देती हैं और अगरचना आदिके दोषोको दूरकर रोग अच्छा करनेका प्रयत्न करती हैं, पर आहार आदि स्वास्थ्यसवधी वातोकी ओर उनका ध्यान नही जाता जिससे रोग वहुत कुछ वना ही रह जाता है। रोगके मूल कारणका पता लगानेके लिए हमे उन नियमोकी ओर ध्यान देना होगा जिनके द्वारा मानव-जीवनका सचालन होता है। कोई भी रोग इन नियमोका अपवाद नही हो सकता। इसलिए मानना पडता है कि रोगका आरभ होनेके पहले प्राकृतिक नियमोका उल्लघन अवश्य होता रहा है।

रोगोकी एकतावाले सिद्धातका अभीतक किसीने खडन नही किया है। इस रोगके कारणपर विचार करते समय इसे ध्यानमे रखना आवश्यक है अस्वस्थता शरीरके अदर आयी हुई खरावीका व्यक्त रूप है जो गलत रहन-सहन आदिका परिणाम है। इसलिए कुकुरखासी किसी विशेष कीटाणुकी सृष्टि नही है जो कही वाहरसे आकर निरीह वच्चेमे जम गया है। अगर सावधानीके साथ शारीरिक अवस्थाका परीक्षण किया जाय तो इस वातकी सत्यता प्रमाणित हो जायगी। ऐसे वच्चेमे नाडी-सस्थानकी अस्तव्यस्तताके साथ-साथ पाचन-सस्थानकी खरावी अवश्य देख पडेगी, शायद सारी अन्न-प्रणालीमे जुकाम मौजूद होगा। जाच-पड़तालसे यह भी पता चल जायगा कि उसमे अनुपयुक्त आहारके साथ अति-भोजनका भी दोष है। उसकी सास भी गदी होगी और कब्जकी भी प्रवृत्ति हो सकती है। इन वातोके साथ ही नाडी-मडलपर भी ज्यादा जोर पडना सभव है।

उपचार

रोगका चिह्न प्रकट होते ही इसपर ध्यान देना आवश्यक [illegible] है।

आरामके साथ विस्तरपर रखा जाय और उसका शरीर, विशेषकर पैर, गर्म रखनेका प्रयत्न किया जाय और नाडी-सस्थान शात करनेके लिए उसका वदन ढीला कराया जाय। शरीर और मनके विश्रामपर सबसे अधिक ध्यान दिया जाय। सच्चे आरामके लिए शरीरको विश्राम मिलना आवश्यक है जिसका अर्थ केवल पेशियोका विश्राम नही वल्कि पाचन-सस्थानका भी विश्राम है। जवतक रोगीको आराम न मालूम हो उससे उपवास कराया जाय और सच तो यह है कि भीतर-वाहर पूरी सफाई हुए विना आराम मालूम भी नही हो सकता। रोग कडा होनेपर सुबह-शाम दोनो वक्त एनि मा दिया जाय और गरम पानीसे नहलाया जाय जिससे शिथिलीकरण-मे अच्छी सहायता मिलेगी।

दिनमे एक वार पीठ, विशेषकर मेरुदडकी मालिश भी की जाय जिसमे गरदन और पीठकी नाडियो और पेशियोमे ढीलापन आ जाय, ठुड्डी और कठिकास्थि ऊपर उठा-उठाकर ढीली की जाय और पेट सावधानीके साथ मलकर आते उत्तेजित की जाय।

अगर बच्चेका इस प्रकार उपचार किया जाय तो उपसर्गोके पैदा होनेका खतरा वहुत कम हो जायगा, उसका स्वास्थ्य पहलेसे अच्छा हो जायगा और निरोध-शक्ति काफी वढ जायगी। रोगका दौरा समाप्त होनेपर आहारपर विशेष ध्यान दिया जाय। पूरी-मिठाई या इस तरहकी अन्य चीजे उसे न दी जाय और जो चीजे मुश्किलसे पचनेवाली हो उनसे पूरा-पूरा परहेज किया जाय।

श्वसनी-प्रदाह

कमजोर वक्षःस्थलवाले बच्चोके शरीरके इस भागमे रोग होनेकी विशेष संभावना रहती है और उसपर मौसिमके परिवर्तनका भी बहुत जल्द असर होता है। ऐसे बच्चोका लाड-प्यार साधारण बच्चोकी अपेक्षा अधिक किया जाता है और इस शारीरिक दोषके कारण लोग उन्हे तरह-तरहकी पेटेंट चीजे खिलाते रहते है। अगर उनके रहन-सहनके ढगमे थोडा भी परिवर्तन हो जाय तो वे इस रोगकी चपेटमे आ जाते है।

प्रतिश्यायकी अवस्था

श्वास-संस्थानमे फुफ्फुस, फुफ्फुसावरण, नासिका, श्वासनलिकाका ऊर्ध्व भाग, कंठनली, श्वसनी आदि अंग सम्मिलित हैं जिनके जरिए वायु अंदर प्रवेश करती है। ये सभी वायुमार्ग एक ही तरहके बने है और इन सबमे श्लैष्मिक कलाका अस्तर रहता है। इस कलासे हमेशा श्लेष्मा निकलता रहता है जो हवाके साथ आनेवाले धूलिकणोको ग्रहण कर लेता है। कभी-कभी रोगकी हालतमे इस श्लेष्माका रूप बदल जाता है और इसकी मात्रा भी बहुत बढ जाती है जिससे वह नलिकाओमे ठसाठस भर जाता है। हम इसे ही प्रतिश्याय कहते है। अगर श्लेष्माके विसर्जनका क्रम अचानक रुकना होता है तो हम इसे सर्दी कहते है। कभी-कभी तो श्लेष्माके निकल जानेपर यह भाग जल्द ही साधारण अवस्थामे पहुच जाता है, पर कभी-कभी यह अवस्था जीर्णरूपमे परिणत होकर प्रदाह [illegible] कर देती है।

रोगका आरंभ

[illegible] विसर्जनकी क्रिया शीघ्रतासे फैल जाती है और इसपर [illegible] बड़ी प्रबल प्रतिक्रिया होती है। यही कारण है जिससे सर्दी होनेपर

श्वसनी-प्रदाह बहुत जल्द हो जाया करता है और अगर उपचारमे शीघ्रता और सावधानी न की जाय तो अग कमजोर पडकर इस रोगका क्षेत्र बन जाता है। इस प्रकारके बच्चेमे ठढ, वर्षा आदिका प्रतिरोध करनेकी शक्ति नही होती और ठढ लग जानेपर फौरन इस रोगका आक्रमण हो जाता है। इस रहस्यको न समझ सकनेके कारण लोग इसे ही रोगका कारण मान लिया करते है। अब देखना यह है कि शरीर, परिस्थितियो या पोषणमे वह कौन-सा दोष है जिसके कारण शरीर मौसिमके साथ मेल बैठानेमे समर्थ नही हो पाता। केवल स्टेथोस्कोप लगाने और जीभ देखनेसे काम नही चलेगा, शरीरके ढाचेकी सावधानीके साथ जाच करनेपर कुछ पता चल सकता है. ऐसे बच्चेके मेरुदड, कठास्थि और ऊपरकी पसलियोमे कुछ असाधारणता देख पडती है जो रोगोत्पत्तिका कारण होनेके साथ ही आरोग्य-लाभमे बाधक भी होती है।

परिस्थितियोपर भी विचार करना आवश्यक है. ऐसे बच्चोमे चिड-चिडापन होनेसे उसकी नाडीशक्ति सहयोग नही करती और नीद गाढी नही होती जिससे उसकी शारीरिक स्थिति अच्छी नही होती, उसके दिमाग-पर अध्ययनका बहुत जोर पडता है और वह विद्यालयमे और बच्चोके साथ नही चल पाता।

इसके साथ ही पोषणका भी विश्लेषण किया जाय। प्राय. यही देखा जाता है कि असतुलित आहार बच्चेको अस्वस्थताके गड्ढेसे निकलने नही देता। ऐसे बच्चेको चिकनाई, चीनी और श्वेतसार अधिक परिमाणमे देना आवश्यक माना जाता है, वानस्पतिक लवणो और विटामिनोकी प्राप्तिपर ध्यान नही दिया जाता जो रोगके आक्रमणका एक प्रमुख कारण हुआ करता है।

लक्षण

सीनेमे सर्दी लगनेपर तापमान बढता जाकर १०१ अशके आसपास

पहुच जाता है। खासी पहले सूखी रहती है, पर दो-एक दिन बाद तर हो जाती है। श्लेष्माका रग पीला हो जाता है जो रोगके रूपका परिचायक होता है। रोगकी गभीरता उसके क्षेत्रपर निर्भर है। साधारण अवस्थामे वह कठनलीके निचले भाग और बडी श्वसनियोमे रहता है, पर नीचे बढनेपर उसकी गभीरता बढ जाती है और आरोग्यलाभ कठिन हो जाता है।

तीव्र और जीर्ण रूप

अगर बच्चा काफी मजबूत हो और सावधानीके साथ उपचार किया जाय तो तीव्र श्वसनी-प्रदाह लगभग एक सप्ताहमे चला जाता है और रोगका कोई चिह्न शेष नही रहता, पर अगर कुछ कसर रह जाय तो बार-बार दौरा होते रहनेकी सभावना बनी रहेगी और तब रोग जीर्ण रूप ग्रहण कर लेगा जिसमे ततुओका रूप बदल जायगा और श्लेष्मा बहुत गाढा और कुछ-कुछ लाल हो जायगा, पेशियोके ततुओमे भी परिवर्तन हो जायेगा जिससे स्वरनलिकाका लचीलापन जाता रहेगा और उसकी क्रिया भी ठीक तरहसे नही होगी; श्वास-सस्थानका शरीरके अन्य भागोसे सबध नही बना रहेगा, शरीरको पूरा ओषजन नही मिलेगा, सास लबी हो जायगी, सीनेकी शकल बदल जायगी और बच्चेकी हालत बहुत खराब हो जायगी।

उपचार

एलोपैथिक चिकित्सामे वास्तविक स्थितिपर ध्यान न देकर केवल लक्षणोको दूर करनेका प्रयत्न किया जाता है। आक्रमणका जोर समाप्त हो जानेपर शरीरको दृढ करनेका प्रयत्न नही किया जाता जिसमे फिर रोगका आक्रमण होनेकी सभावना न रहे। द्रव्यौषधें धडल्लेके साथ दी जाती है जो लाभसे अधिक हानि ही किया करती है। प्राकृतिक चिकित्सामे ऐसी कोई चीज नही दी जाती जो शरीरके लिए विजातीय हो। रोगका रूप तीव्र हो तो बच्चा साफ और हवादार कमरेमे बिस्तरपर रखा जाय और ज्वर रहते समय रोज एनिमा देकर उसकी आत साफ कर दी जाय।

अगर बुखार तेज——लगभग १०३ अश हो तो सीनेपर केवल ठढी और अगर कम हो तो बारी-बारीसे गर्म और ठडी पट्टी पद्रह-बीस मिनटतक दिनमे दो-तीन बार लगायी जाय। नाडी-केंद्रोको उद्दीप्त करनेके लिए रीढ-के ऊपरी हिस्सेपर भी ये पट्टिया लगाई जा सकती है। बुखारकी हालतमे पानी और फलके रसके अलावा और कुछ भी न दिया जाय। अगर बुखार उतर जानेपर भी खासी बनी रहे तो बच्चा केवल फलपर रखा जाय। रोग जल्द दूर करनेका प्रयत्न न कर धीरे-धीरे ही सुधार होने दिया जाय।

बच्चेके पूर्णत नीरोग हो जानेपर खान-पानका पहला तरीका बदल दिया जाय और फेफडोकी शक्ति बढानेके लिए कुछ श्वाससबधी व्यायाम रोज कराये जाय। बच्चेको एकाएक बाहर ले जाना ठीक नहीं, मौसिम अच्छा होनेपर ही वह बाहर ले जाया जाय और हवामे रहनेका धीरे-धीरे अभ्यास किया जाय। शरीरकी निरोध-शक्ति बढानेके लिए उसे धूप-स्नान भी कराया जाय।

अगर रोग जीर्णावस्थामे पहुच चुका है तो उपचारमे अधिक समय लगेगा। कोई कष्ट या ज्वर न देख पडे तो भी वह यो ही न छोड दिया जाय। अगर श्लेष्माके साथ खासी हो तो बच्चेको बिस्तरपर ही रखकर उपर्युक्त उपचार चलाया जाय। आरभमे कुछ दिनोतक सिर्फ फलका रस दिया जाय और उसके बाद आठ-दस दिनोतक बच्चा केवल फलोपर रखा जाय और फिर उसे एक वक्त तो चोकरदार आटेकी रोटी या दलिया और उबली हुई हरी तरकारी दी जाय और एक वक्त फल या हरी तरकारी और सलाद। भविष्यमे श्वेतसार और चीनी बहुत कम देनेका नियम रखा जाय।

अगर इन उपायोको ठीक तरहसे चलाया जाय तो बच्चेका स्वास्थ्य बहुत जल्द ठीक हो जायगा, पर अगर रोग बना रहा, दवाए दी जाती रही तो ततुओमे परिवर्तन होना जारी रहेगा जिससे आरोग्य लाभ होना असभव हो जायगा। आरभमे उपचार करनेमे जितना समय नष्ट होगा उसी हिसाबसे कठिनाई बढ जायगी।

सामान्य चर्मरोग

चर्मरोग इतने प्रकारके होते है कि अगर सबपर विचार किया जाय तो एक स्वतंत्र पुस्तक बन जायगी, इसलिए यहा केवल ऐसे रोगोपर विचार किया जायगा जो आम तौरसे बच्चोको हो जाया करते हैं।

दुग्ध-पीड़िका आदि

अगर बच्चेमे त्वचाके मार्गसे विकार निकलनेकी प्रवृत्ति हो तो केवल स्तनपान करनेपर भी कुछ चर्मविकार प्रकट हो जा सकते है और अगर देखभालमे लापरवाही की जाय तो वे अधिक दिनोतक बने रहकर परेशानी-के कारण हो जा सकते है। सिरके चर्मकी शुष्कता, दुग्धपीडिका आदि इसी प्रकारके रोग हैं। इन विकारोंके प्रकट होनेपर पाचनकी अस्तव्यस्तता-पर ध्यान देना आवश्यक है अन्यथा ये तरह-तरहके उपसर्ग प्रस्तुत कर दे सकते हैं। इन्हे दबानेवाले लेपोका, जो जस्ते, सीसे आदिके योगसे तैयार किये जाते है, प्रयोग कभी न किया जाय। प्राय इन विकारोके साथ जुकाम-की प्रवृत्ति भी रहती है इसलिए उपचारमे इसका खयाल रखना आवश्यक है। दूधकी मात्रा घटाकर सिर्फ इतनी रखी जाय जिससे बच्चेका काम किसी तरह चलता रहे और एकबार दूध न पिलाकर दूधके बदले आधी या पौन छटाक [illegible] रस दिया जाय। आंत साफ रखनेके लिए एनिमाका प्रयोग किया जाय और साथ ही रोगवाले क्षेत्रकी सफाईका भी खयाल रखा जाय। अगर सिरमे [illegible] पड गई हो तो रातमे जैतून या तिलका तेल लगाकर छोड दिया जाय और सुबह बारीक कंघीसे उसे साफ कर दिया जाय। विकार [illegible] होनेपर [illegible] कर शरीरके साधारण स्वास्थ्यके सुधारका उपाय करना [illegible] होगा।

विसर्प

बढते हुए बच्चोमे पाचनकी खराबीसे होनेवाले विकार आमतौरसे देखे जाते है, हाला कि बहुतसे लोग यह बात माननेके लिए तैयार नही होते। विसर्प इसी प्रकारका एक रोग है जिसमे चमड़ेकी ऊपरी परतमे प्रदाह होता है और कुछ विकार भी निकल सकता है। विकार निकलनेकी क्रिया चद दिनोमे भी समाप्त हो सकती है और छ-सात सप्ताह भी चल सकती है। इसमे प्राय. खुजली पैदा हो जाती है जो बहुत कष्ट देती है। इसके बढ जानेपर वृक्कोमे खराबी आ जाती और ज्वर भी हो जाता है। साराश यह कि आत्मविषमयताके सभी लक्षण प्रकट हो जाते है।

शीत-पित्त

शैशवमे शीत-पित्त नामका एक विकार होता है जिसकी प्रवृत्ति वात-प्रधान और अधिक सवेदनशील त्वचावाले बच्चोमे विशेषरूपसे होती है। इसमे लाल-लाल ददोरे हो जाते हैं, उनमे बडी खुजली होती है और खुजलानेपर ददोरे बढते जाते है। तीव्रावस्थामे यह जिस शीघ्रतासे आता है उसी शीघ्रतासे चला भी जाता है। इसका जीर्ण रूप भी होता है जो वर्षो टिकता है। इस रोगका कारण भी पाचनकी खराबी ही है। बच्चेको गर्म पानीसे नहलाकर बिस्तरपर लिटा दीजिए। अगर इससे खुजली शात न हो तो अधिक खुजलीवाले क्षेत्रपर और आवश्यक हो तो सारे बदनपर गीली पट्टीका प्रयोग कीजिए। इससे जल्द आराम मालूम होगा। अगर रोगका रूप उग्र हो तो पाचनसबधी खराबीपर ध्यान दीजिए। बच्चा कुछ दिन सिर्फ फलपर रखा जाय और उसके बाद फल और दूध दिया जाय।

पामा आदि

पामा (उकवथ), विचर्चिका तथा इस प्रकारके अन्य कठिन रोगोमे उपचारका वही आधारभूत सिद्धात काममे लाया जाता है। तथाकथित

निर्दोष लेप आदिके प्रयोगसे कोई लाभ नही होगा और अगर रोग दबानेवाली दवाओका प्रयोग किया गया तो यह शरीरके लिए बहुत हानिकारक सिद्ध होगा। विकारग्रस्त शरीरके पोषण और विसर्जनसबधी दोषोको दूर करनेके लिए बच्चेकी शारीरिक और मानसिक अवस्थाका पूर्णरूपसे परीक्षण और विश्लेषण करना भी आवश्यक होगा।

अगर उपचार प्राकृतिक पद्धतिके अनुसार किया जाय तो विकार जल्द ही चला जायगा और इसके साथ ही चर्मविकार पुन' होनेकी सभावना भी बहुत कम रहेगी।

चेचक

इस देशमे हर साल, विशेषकर वसतागमके समय वहुतसे लोग चेचकसे आक्रात होते और कई, समझदारीके साथ उपचार न होनेके कारण, मौतके शिकार हो जाया करते है। इससे वचनेके लिए लोग प्राय टीका लिया करते है, पर यह चाल अच्छी नही है। वहुतसे लोगोकी यह धारणा है कि टीका लेनसे चेचकके आक्रमणका भय जाता रहता है, लेकिन वे जानते नही कि वास्तवमे टीका क्या है और इससे शरीरमे कितनी खराविया उत्पन्न होती है। गायके शरीरपर चेचक होती है, उसका मवाद लिया जाता है और वही मवाद टीकेके जरिए मनुष्यके खूनमे डाल दिया जाता है। यह विकार मनुष्यके रक्तमे पहुचकर जहर फैलाता है, पर यह घृणित क्रिया इसलिए की जाती है कि इससे चेचकका वचाव होगा। यह कौन-सी बुद्धिमानी है कि दुश्मनके डरसे मकान ही वरवाद कर दिया जाय ?

टीका लेनेपर भी लोग मरते है

आजकल प्राय देखा जाता है कि जिन लोगोने टीका लिया है वे भी चेचकसे वीमार होते और मरते है। इस वातकी पुष्टि करते हुए, अमेरिकाके डा० लिडल्हार एम० डी० ने, जो पीछे प्राकृतिक चिकित्सक हो गये थे, अपनी पुस्तकमे लिखा है कि सन् १९२७ ई० मे जर्मनीमे चेचक इतने जोरसे फैली थी कि एक लाख वीस हजार आदमी वीमार हुए जिनमे एक लाख मरे। इनमेसे लगभग ९६ हजार टीका ले चुके थे, केवल चार हजार विना टीकेके थे। अट्ठारह वर्षकी लगातार खोजके वाद जर्मनीके प्रधान मत्री प्रिस विस्मार्कने अपने अधीन समस्त राज्योको लिख भेजा कि त्वचाके रोगोका देशमे फैलानेका कारण टीका है, पर चेचकका कारण और चिकित्सा अभीतक नही मालूम हुई है। टीकेसे जो सफलताकी आशा की जाती थी, धोखा सावित हुई। इसी पत्रके आधारपर जर्मन राज्यमे टीका या तो

वद कर दिया गया या कानून ढीला कर दिया गया। कहनेका तात्पर्य यह है कि टीका लगवानेके वाद भी आदमी खतरेसे खाली नही रहता वल्कि चेचकके अलावा और भी रोगोका शिकार उसे वनना पडता है। दुर्भाग्य है कि हिंदुस्तानियोंके वास्ते टीका न लगवाना ही जुर्म है।

क्या चेचक छूतकी बीमारी है ?

लोगोंका कहना है कि चेचक छूतकी वीमारी है, इसीसे जहा फैलती है वहा वहुत ज्यादा लोगोको इसका शिकार होना पडता है। यह छूतकी बीमारी जरूर है, पर लगती उसीको है जिसके शरीरमे पहलेसे सामान तैयार रहता है। शुद्ध खूनवाले शरीरमे यह छूत नही लगती। इसको सिद्ध करनेके लिए कि चेचकसे यो ही छूत नही लगती डा० लिंडल्हारने अपनी पुस्तकमे एक आश्चर्यजनक घटना लिखी है। अमेरिकाके विस्कशन प्रांतमे डा० रोडरमड एक डाक्टर थे। उन्होने अपने कुछ डाक्टर भाइयोके सामने अपने सारे शरीरमे विस्फोटकका मवाद मल लिया। कानूनके मुताबिक वे पकडकर जेलमे वद किये गये, लेकिन उन्हे चेचकका रोग न हुआ। इस तरहके और भी कई उदाहरण है।

बचनेका उपाय प्राकृतिक जीवन

चेचक

इस देशमे हर साल, विशेषकर वसतागमके समय बहुतसे लोग चेचकसे आक्रात होते और कई, समझदारीके साथ उपचार न होनेके कारण, मौतके शिकार हो जाया करते है। इससे बचनेके लिए लोग प्राय टीका लिया करते है, पर यह चाल अच्छी नही है। बहुतसे लोगोकी यह धारणा है कि टीका लेनसे चेचकके आक्रमणका भय जाता रहता है, लेकिन वे जानते नही कि वास्तवमे टीका क्या है और इससे शरीरमे कितनी खराबिया उत्पन्न होती है। गायके शरीरपर चेचक होती है, उसका मवाद लिया जाता है और वही मवाद टीकेके जरिए मनुष्यके खूनमे डाल दिया जाता है। यह विकार मनुष्यके रक्तमे पहुचकर जहर फैलाता है, पर यह घृणित क्रिया इसलिए की जाती है कि इससे चेचकका बचाव होगा। यह कौन-सी बुद्धिमानी है कि दुश्मनके डरसे मकान ही बरबाद कर दिया जाय ?

टीका लेनेपर भी लोग मरते है

आजकल प्राय देखा जाता है कि जिन लोगोने टीका लिया है वे भी चेचकसे बीमार होते और मरते है। इस बातकी पुष्टि करते हुए, अमेरिकाके डा० लिंडल्हार एम० डी० ने, जो पीछे प्राकृतिक चिकित्सक हो गये थे, अपनी पुस्तकमे लिखा है कि सन् १९२७ ई० मे जर्मनीमे चेचक इतने जोरसे फैली थी कि एक लाख बीस हजार आदमी बीमार हुए जिनमे एक लाख मरे। इनमेसे लगभग ९६ हजार टीका ले चुके थे, केवल चार हजार बिना टीकेके थे। अट्ठारह वर्षकी लगातार खोजके बाद जर्मनीके प्रधान मत्री प्रिंस बिस्मार्कने अपने अधीन समस्त राज्योको लिख भेजा कि त्वचाके रोगोका देशमे फैलानेका कारण टीका है, पर चेचकका कारण और चिकित्सा अभीतक नही मालूम हुई है। टीकेसे जो सफलताकी आशा की जाती थी, धोखा साबित हुई। इसी पत्रके आधारपर जर्मन राज्यमे टीका या तो

वद कर दिया गया या कानून ढीला कर दिया गया। कहनेका तात्पर्य यह है कि टीका लगवानेके वाद भी आदमी खतरेसे खाली नही रहता वलिक चेचकके अलावा और भी रोगोका शिकार उसे वनना पडता है। दुर्भाग्य है कि हिंदुस्तानियोके वास्ते टीका न लगवाना ही जुर्म है।

क्या चेचक छूतकी बीमारी है ?

लोगोका कहना है कि चेचक छूतकी वीमारी है, इसीसे जहा फैलती है वहा वहुत ज्यादा लोगोको इसका शिकार होना पडता है। यह छूतकी वीमारी जरूर है, पर लगती उसीको है जिसके शरीरमे पहलेसे सामान तैयार रहता है। शुद्ध खूनवाले शरीरमे यह छूत नही लगती। इसको सिद्ध करनेके लिए कि चेचकसे यो ही छूत नही लगती डा० लिडल्हारने अपनी पुस्तकमे एक आश्चर्यजनक घटना लिखी है। अमेरिकाके विस्कशन प्रांतमे डा० रोडरमड एक डाक्टर थे। उन्होने अपने कुछ डाक्टर भाइयोके सामने अपने सारे शरीरमे विस्फोटकका मवाद मल लिया। कानूनके मुताबिक वे पकडकर जेलमे वद किये गये, लेकिन उन्हे चेचकका रोग न हुआ। इस तरहके और भी कई उदाहरण है।

वचनेका उपाय प्राकृतिक जीवन

सभी रोगोका एकमात्र कारण शरीरमे विजातीय द्रव्यका इकट्ठा होना और उसका वाहर न निकलना है। जवतक मनुष्यके शरीरमे विजातीय द्रव्य मौजूद है तवतक वह नीरोग नही कहा जा सकता। स्वाभाविक जीवन व्यतीत करनेवालोको चेचकका भय विल्कुल नही रहता। जो पहलेसे रोगी है वे भी अगर दो-तीन दिनोका उपवास करके (या विना उपवासके ही) ग्यारह दिन फलाहार करे और इन दिनो वरावर एनिमा ले तो शरीर शुद्ध हो जाता है और रोगका भय जाता रहता है।

किसी भी रोगका लक्षण देखते ही मनुष्यको समझना चाहिए कि उसके शरीरमे विजातीय द्रव्य इकट्ठा हो गया है और रोगके रूपमे शरीर

चेचक

इस देशमे हर साल, विशेषकर वसतागमके समय वहुतसे लोग चेचकसे आक्रात होते और कई, समझदारीके साथ उपचार न होनेके कारण, मौतके शिकार हो जाया करते है। इससे बचनेके लिए लोग प्राय टीका लिया करते हैं, पर यह चाल अच्छी नही है। बहुतसे लोगोकी यह धारणा है कि टीका लेनसे चेचकके आक्रमणका भय जाता रहता है, लेकिन वे जानते नही कि वास्तवमे टीका क्या है और इससे शरीरमे कितनी खराबिया उत्पन्न होती हैं। गायके शरीरपर चेचक होती है, उसका मवाद लिया जाता है और वही मवाद टीकेके जरिए मनुष्यके खूनमे डाल दिया जाता है। यह विकार मनुष्यके रक्तमे पहुचकर जहर फैलाता है, पर यह घृणित क्रिया इसलिए की जाती है कि इससे चेचकका वचाव होगा। यह कौन-सी बुद्धिमानी है कि दुश्मनके डरसे मकान ही वरवाद कर दिया जाय ?

टीका लेनेपर भी लोग मरते हैं

आजकल प्राय देखा जाता है कि जिन लोगोने टीका लिया है वे भी चेचकसे वीमार होते और मरते हैं। इस बातकी पुष्टि करते हुए, अमेरिकाके डा० लिडल्हार एम० डी० ने, जो पीछे प्राकृतिक चिकित्सक हो गये थे, अपनी पुस्तकमे लिखा है कि सन् १९२७ ई० मे जर्मनीमे चेचक इतने जोरसे फैली थी कि एक लाख बीस हजार आदमी वीमार हुए जिनमे एक लाख मरे। इनमेसे लगभग ९६ हजार टीका ले चुके थे, केवल चार हजार विना टीकेके थे। अट्ठारह वर्षकी लगातार खोजके वाद जर्मनीके प्रधान मत्री प्रिस बिस्मार्कने अपने अधीन समस्त राज्योको लिख भेजा कि त्वचाके रोगोका देशमे फैलानेका कारण टीका है, पर चेचकका कारण और चिकित्सा अभीतक नही मालूम हुई है। टीकेसे जो सफलताकी आशा की जाती थी, धोखा सावित हुई। इसी पत्रके आधारपर जर्मन राज्यमे टीका या तो

वद कर दिया गया या कानून ढीला कर दिया गया। कहनेका तात्पर्य यह है कि टीका लगवानेके वाद भी आदमी खतरेसे खाली नही रहता वल्कि चेचकके अलावा और भी रोगोका शिकार उसे वनना पडता है। दुर्भाग्य है कि हिंदुस्तानियोके वास्ते टीका न लगवाना ही जुर्म है।

क्या चेचक छूतकी बीमारी है ?

लोगोका कहना है कि चेचक छूतकी बीमारी है, इसीसे जहा फैलती है वहा वहुत ज्यादा लोगोको इसका शिकार होना पडता है। यह छूतकी बीमारी जरूर है, पर लगती उसीको है जिसके शरीरमे पहलेसे सामान तैयार रहता है। शुद्ध खूनवाले शरीरमे यह छूत नही लगती। इसको सिद्ध करनेके लिए कि चेचकसे यो ही छूत नही लगती डा० लिडल्हारने अपनी पुस्तकमे एक आश्चर्यजनक घटना लिखी है। अमेरिकाके विस्कशन प्रातमे डा० रोडरमड एक डाक्टर थे। उन्होने अपने कुछ डाक्टर भाइयोके सामने अपने सारे शरीरमे विस्फोटकका मवाद मल लिया। कानूनके मुताविक वे पकडकर जेलमे वद किये गये, लेकिन उन्हे चेचकका रोग न हुआ। इस तरहके और भी कई उदाहरण है।

वचनेका उपाय प्राकृतिक जीवन

सभी रोगोका एकमात्र कारण शरीरमे विजातीय द्रव्यका इकट्ठा होना और उसका वाहर न निकलना है। जवतक मनुष्यके शरीरमे विजातीय द्रव्य मौजूद है तवतक वह नीरोग नही कहा जा सकता। स्वाभाविक जीवन व्यतीत करनेवालोको चेचकका भय विलकुल नही रहता। जो पहलेसे अनियमित है वे भी अगर दो-तीन दिनोका उपवास करके (या विना उपवासके ही) दस-वारह दिन फलाहार करे और इन दिनो वरावर एनिमा ले तो शरीर शुद्ध हो जाता है और रोगका भय जाता रहता है।

किसी भी रोगका लक्षण देखते ही मनुष्यको समझना चाहिए कि हमारे शरीरमे विजातीय द्रव्य इकट्ठा हो गया है और रोगके रूपमे शरीर

उसको वाहर करना चाहता है। इसमे पथ्य और दवासे वावा नही डालनी चाहिए। शरीरको सहायता पहुचानेके लिए उपवास, पेटकी सफाई और आराम करना चाहिए।

चेचककी चिकित्सा

चेचकके दाने निकलनेके पहले मनुष्यको वुखार आता है, इसलिए तुरत वुखारका इलाज शुरू कर देना चाहिए। इसके लिए उपवासके साथ सुवह-शाम एनिमा लेनेसे दो-तीन दिनोमे वुखार जाता रहता है। इस तरह आरभमे ही उपचार शुरू कर देनेसे वहुत अशमे चेचकका भय जाता रहता है, लेकिन अगर चेचकके दानोका निकलना शुरू हो जाय तो घवराना नही चाहिए। उपवासके वाद रोगीको दूवमे पानी मिलाकर और उसे गर्म कर, विना चीनी-मिश्रीके, दिनमे दो-तीन वार पिलाइए और दिनमे एक वार एनिमाका प्रयोग जारी रखिए। गर्म दूध और पानी पिलानेसे दाने पूरी तरह निकल आवेंगे, साथ ही एनिमासे पेट साफ रहेगा और तव किसी प्रकारका खतरा नही होगा। दाने निकल जानेके वाद दूध बद करके केवल फलोका रस या तरकारीका रस थोडा-थोडा पानीमे मिलाकर पिलाना चाहिए। पानी रोगीको काफी मिले इसका ध्यान रखा जाय। शरीरको गीले कपडे या रुईके फाहेसे पोछकर रोज साफ किया जाय रोज एनिमा देना जारी रखा जाय। जब दाने बिल्कुल सूख जाए त

चुन्ना या कृमि रोग

बच्चोकी आतोमे अक्सर कीडे पड जाते है जो मुश्किलसे जाते है। इस रोगके पीडित बच्चेका स्वास्थ्य साधारणत खराब रहता है। उसे अच्छी नीद नही आती, स्वभाव चिडचिडा हो जाता है, वह पीला पड जाता है और उसकी आखोके नीचेकी जगह काली हो जाती है। ऐसे बच्चे-की भूख राक्षसी हो जाती है, वह दिनभर खाते ही रहना चाहता है, पर वना रहता है दुवला और खाकर कभी सतुष्ट नही होता। इस रोगसे पीडित वच्चेको किसी हदतक कब्ज और जुकाम रहता है। लोग प्राय नही मानते, पर ये ही दोनो कृमि रोगके मूल कारण है, उसके लक्षण नही है।

कृमि और केंचुए

प्राय वहुतसे बच्चोके मलके साथ छोटे-छोटे कीडे निकलते है। इन्हे चुन्ना कहते है। इनकी लवाई चौथाईसे लेकर आध इच तक होती है। जव ये चुन्ने गुदाद्वारपर पहुचते है तो वहा बड़ी खाज उठती और गुदा चुन-चुनाती है। शायद इसी कारण इन कीडोका नाम चुन्ना पड गया है और उन्हीके नामपर रोगका नामकरण हुआ है। अगर वच्चेके शौच जानेके वाद ही पाखाना ध्यानसे देखा जाय तो उसमे ये चलते-फिरते दिखाई देते है। दूसरी तरहके कीडे, जो बच्चोके पेटसे निकलते है, केंचुएकी शकलके होते है। अतर इतना ही होता है कि गीली मिट्टीमे रहनेवाले केचुएकी अपेक्षा ये अधिक पीले हाते है, पर ये मिट्टीमे मिलनेवाले केचुए नही होते। ये कुछ अलग ही चीज है। और भी कई तरहके कीडे, वच्चोके पेटसे निकलते है, लेकिन हमारे देशमे अन्य कीडोंसे कम ही बच्चे पीडित रहते है।

बच्चोंके पेटसे ये चुन्ने कभी-कभी दो-चार ही निकलते हे, पर धीरे-धीरे ये वडी सख्यामे और नित्य निकलने लगते हैं। ये चुन्ने बच्चोको बहुत परे-

उसको बाहर करना चाहता है। इसमे पथ्य और दवासे बाधा नही डालनी चाहिए। शरीरको सहायता पहुचानेके लिए उपवास, पेटकी सफाई और आराम करना चाहिए।

चेचककी चिकित्सा

चेचकके दाने निकलनेके पहले मनुष्यको बुखार आता है, इसलिए तुरत बुखारका इलाज शुरू कर देना चाहिए। इसके लिए उपवासके साथ सुबह-शाम एनिमा लेनेसे दो-तीन दिनोमे बुखार जाता रहता है। इस तरह आरभमे ही उपचार शुरू कर देनेसे बहुत अशमे चेचकका भय जाता रहता है, लेकिन अगर चेचकके दानोका निकलना शुरू हो जाय तो घबराना नही चाहिए। उपवासके बाद रोगीको दूधमे पानी मिलाकर और उसे गर्म कर, बिना चीनी-मिश्रीके, दिनमे दो-तीन बार पिलाइए और दिनमे एक बार एनिमाका प्रयोग जारी रखिए। गर्म दूध और पानी पिलानेसे दाने पूरी तरह निकल आवेंगे, साथ ही एनिमासे पेट साफ रहेगा और तब किसी प्रकारका खतरा नही होगा। दाने निकल जानेके बाद दूध बद करके केवल फलोका रस या तरकारीका रस थोडा-थोडा पानीमे मिलाकर पिलाना चाहिए। पानी रोगीको काफी मिले इसका ध्यान रखा जाय, शरीरको गीले कपडे या रुईके फाहेसे पोछकर रोज साफ किया जाय और रोज एनिमा देना जारी रखा जाय। जब दाने बिल्कुल सूख जाए तभी उसे साधारण भोजनपर लाया जाय। भोजन देते समय इस बातका ध्यान रहे कि रोगी जो भोजन करता है वह आसानीसे पचा सकता है या नही। इस तरहसे वह धीरे-धीरे कुछ ही दिनोमे एकदम स्वस्थ हो जायगा। इस चिकित्साकी सबसे बडी खूबी यह है कि चेचकके दानेके दाग नही रहते।

रोगीको साफ और सूखे तथा हवादार स्थानमे रखिए। भोजनका सयम जरूर रहे—पहले दूध और पानी, दानोंके उमड़जानेपर सिर्फ फल और तरकारीका रस और दानोंके अच्छी तरह सूख जानेपर फल और अन्न दीजिए। नमक तभी दीजिए जब दाने बिल्कुल ठीक हो जाय।

चुन्ना या कृमि रोग

वच्चोकी आतोमे अक्सर कीडे पड जाते है जो मुश्किलसे जाते हैं। इस रोगके पीडित वच्चेका स्वास्थ्य सावारणत खराव रहता है। उसे अच्छी नीद नही आती, स्वभाव चिडचिडा हो जाता है, वह पीला पड जाता है और उसकी आखोके नीचेकी जगह काली हो जाती है। ऐसे वच्चे-की भूख राक्षसी हो जाती है, वह दिनभर खाते ही रहना चाहता है, पर वना रहता है दुवला और खाकर कभी सतुष्ट नही होता। इस रोगसे पीडित वच्चेको किसी हदतक कब्ज और जुकाम रहता है। लोग प्राय नही मानते, पर ये ही दोनो कृमि रोगके मूल कारण है, उसके लक्षण नही है ।

कृमि और केचुए

प्राय वहुतसे वच्चोके मलके साथ छोटे-छोटे कीडे निकलते है। इन्हे चुन्ना कहते है। इनकी लवाई चौथाईसे लेकर आघ इच तक होती है। जव ये चुन्ने गुदाद्वारपर पहुचते है तो वहा वडी खाज उठती और गुदा चुन-चुनाती है। शायद इसी कारण इन कीडोका नाम चुन्ना पड गया है और उन्हीके नामपर रोगका नामकरण हुआ है। अगर वच्चेके शौच जानेके वाद ही पाखाना ध्यानसे देखा जाय तो उसमे ये चलते-फिरते दिखाई देते है। दूसरी तरहके कीडे, जो वच्चोके पेटसे निकलते है, केचुएकी शकलके होते है। अतर इतना ही होता है कि गीली मिट्टीमे रहनेवाले केचुएकी अपेक्षा ये अधिक पीले हाते है, पर ये मिट्टीमे मिलनेवाले केचुए नही होते। ये कुछ अलग ही चीज है। और भी कई तरहके कीडे, वच्चोंके पेटसे निकलते है, लेकिन हमारे देशमे अन्य कीडोसे कम ही वच्चे पीडित रहते है ।

वच्चोंके पेटसे ये चुन्ने कभी-कभी दो-चार ही निकलते है, पर धीरे-धीरे ये वडी सख्यामे और नित्य निकलने लगते हैं। ये चुन्ने वच्चोको वहुत परे-

शान करते है अत माको कभी बच्चेके मलके साथ एक भी चुन्ना दिखाई दे तो उसे तुरत सजग हो जाना चाहिए, पर यदि बच्चेका स्वास्थ्य किसी तरहसे न्यून न दिखाई दे और उसे कब्ज या जलन न हो तो ऐसी अवस्थामे कभी एकाध चुन्ना बच्चेके मलमे दिखाई दे जाय तो समझना चाहिए कि कोई अडा किसी तरह पेटमे पहुच गया है जहा उसके फूटनेकी वजहसे वह बाहर निकल आया है। ऐसी अवस्थामे कोई चिंता नही करनी चाहिए।

रोगका कारण

(१) गदे हाथोको भोजनमे लगाना या अगुलियोको मुहमे डालना।

(२) नाकमे अगुली डालनेके बाद मुहमे डालना।

(३) किसी खानेकी चीजको जमीनपर गिरनेके बाद उसे बच्चेको खिलाना।

(४) चुन्नेके अडोका गुदाद्वारपर निकल आना और उन्हे बच्चेका अपने हाथोसे मुहमे पहुचाना।

(५) चुन्ने रोगसे पीडित बच्चेके तौलिए या जाघिएका इस्तेमाल करना।

(६) कब्जके कारण आतोमे मलका अधिक समयतक रुकना।

(७) आवकी बीमारी जो चुन्नेके पनपनेमे सहायक होती है।

(८) पूरी तरह पेटके साफ न होनेपर मलका गुदाद्वारके निकट आकर रुका रहना जो चुन्नोके पनपनेमे सहायक होता है।

चिकित्सा

कुछ डाक्टरोका कहना है कि चुन्ने बच्चेके पेटमे अडे नही देते, जो चुन्ने पेटसे निकलते हैं उनके अडे मुहके जरिए पेटमे गए हुए होते है, पर कभी-कभी जितने अधिक चुन्ने बच्चेके पेटसे निकलते है और हफ्तो निकलते जाते है उन्हे देखते हुए इस मतकी सत्यता समझमे नही आती।

इस रोगको दूर करनेके लिए डाक्टर पहले ऐसी कोई कडी दवा देते है जिससे पेटमेके चुन्ने और उनके अडे मर जाय और फिर उन्हे बाहर निकालनेके लिए कोई तेज दस्तावर दवा देते है। ऐसी चिकित्सासे विशेप लाभ नही होता, उल्टे कभी-कभी इससे बच्चेकी पाचन-प्रणाली विगड जाती है।

प्राकृतिक चिकित्सामे इस रोगको दूर करनेके लिए बच्चेकी आतोको चुन्नो और उनके अडोसे मुक्त और सशक्त करनेकी कोशिश की जाती है ताकि बच्चेका कब्ज और जुकाम चला जाय जो इस रोगका मुख्य कारण है। आतें सशक्त और उनका कार्य स्वाभाविक बनाया जाता है जिससे वे अडोको देरतक रुकने नही देती और उनसे चुन्ने पैदा होनेके पहले ही उन्हे बाहर निकाल देती है। साथ ही सफाईका पूरा ध्यान रखा जाता है जिसमे और अडे पेटमे न पहुच जाय।

जब माको बच्चेके मलमे चुन्ने होनेकी शका हो जाय तब उसे उसकी उपस्थितिका निश्चय करनेके लिए मलको कई दिनोतक अच्छी तरह देखना चाहिए। यदि कई चुन्ने एक साथ दिखाई दें तो इस रोगकी चिकित्सा अनिवार्य हो जाती है। कई अवस्थाओमे अच्छी तरह देखा जाय तो सोते हुए बच्चेके गुदाद्वारपर चुन्ने दिखाई दे जाते है।

इस रोगसे पूर्णत मुक्ति दिलानेके लिए बच्चेकी जमकर चिकित्सा करनी होती है, पर बच्चेको जलन और खाजसे मुक्त करनेके लिए तथा उसे ठीक तरह नीद आए इसके लिए कभी-कभी ऐसी चिकित्साकी जरूरत होती है जो बच्चेके इस कष्टको शीघ्र शात कर सके।

कामचलाऊ चिकित्सा

कामचलाऊ चिकित्सा मैं उसे कहता हू जो बच्चेको उसके गुदाद्वार-पर उठती हुई खाजसे मुक्त कर दे। इसके लिए बच्चेकी उम्रके अनुसार पाव-आध सेर गुनगुने गरम पानीमे रुपये-आठ आनेभर नमक मिलानेके

बाद उसका एनिमा देकर बच्चेका पेट साफ कर देना चाहिए और फिर पिचकारीसे दो-तीन तोला नारियलका तेल गुदाद्वारके जरिये आतोमे पहुचा देना चाहिए। तेल बच्चेकी आतकी झिल्लीकी जलनको शात करेगा और चुन्नोके जो अडे-बच्चे आतमे चिपके रहकर एनिमाके पानीके साथ न निकले होगे उन्हे छुडा देगा। अगर किसी कारणसे एनिमा देना कठिन हो तो बच्चेके घुटने पेटके पास रखकर उसे पेटके बल सुला देना चाहिए और उसे शीघ्र शौच होनेके समयकी तरह जोर लगानेको कहना चाहिए। इस रीतिसे भी कीडिया मलद्वारसे निकलती है। इन कीडियोको कागजकी बत्ती बनाकर उसकी नोकसे हटाते जाना चाहिए और वे जब काफी सख्यामे निकल चुके तो पिचकारीसे तेल गुदाद्वारकी मार्फत आतोमे पहुचा देना चाहिए।

रोगमुक्तिके लिए पूर्ण चिकित्सा

चुन्ने रोगसे बच्चेको पूर्णत. मुक्ति दिलानेके लिए यह आवश्यक है कि मा उसके रोगकी उपेक्षा न करे और इस रोगकी चिकित्सा जमकर करे।

चिकित्साके श्रीगणेशके तौरपर बच्चेको आराम करने देना चाहिए और एक या दो दिनतक उसे पानीके सिवा कुछ भी खाने-पीनेको नही देना चाहिए। अगर बच्चा न माने या माका जी न माने तो बच्चेको पानीमे फल या तरकारियोका रस मिलाकर दिया जा सकता है। पानी या रस मिला हुआ पानी बच्चा जितनी बार मागे और जितना मागे देना चाहिए। अक्सर बच्चे इस समय घटे-घटेपर यह पानी पीते है, पर बच्चा इतना जल्दी पानी पीना चाहे तो उसके साथ जबरदस्ती नही करनी चाहिए। इस उपवासमे पहले बताए हुए पानीका एनिमा भी सवेरे-शाम देना चाहिए। एनिमा इस चिकित्साका एक विशेष अग है, क्योकि एनिमाके पानीके साथ चुन्ने तथा श्लेष्मा और मल बाहर निकल आते है जिसमे चुन्नेके अडे-बच्चे निवास करते है। एनिमाके बाद बच्चेको यदि जाडा मालूम हो तो गुनगुने

गरम पानीसे और गरमी हो तो ताजे पानीसे अच्छी तरह नहलाना चाहिए और नहलानेके बाद उसका बदन पोछकर उसका सारा बदन हाथोसे धीरे-धीरे रगडना चाहिए। बच्चेका बिछावन रोज धूपमे डालना चाहिए। जिस कमरेमे बच्चा सोए उसकी खिडकिया खुली रखनी चाहिए जिसमे उसे शुद्ध हवा बराबर मिलती रहे।

अन्य तीव्र रोगोमे किसी भी बच्चेको उपवासमे कोई कठिनाई नही होती, उसे भूख ही नही लगती कि वह कुछ खाना चाहे। पर इस रोगमे अवस्था कुछ विपरीत ही रहती है। अत बच्चेको उपवासकी आवश्यकता अच्छी तरह समझा देनी चाहिए और उसे प्रोत्साहन देकर उपवास कराना चाहिए और जरूरत पडे तो उसे उसके मलमे चलते चुन्ने दिखाकर उसे उपवासकी आवश्यकताकी प्रतीति करानी चाहिए। बच्चा आराम और उपवास आसानीसे कर सके इसके लिए उससे भोजनकी गध और भोजन दूर रखना चाहिए तथा उसका दिल बहलानेको उसे कुछ नए खिलौने देने चाहिए और उसे कुछ किस्से-कहानिया सुनानी चाहिए।

उपवास

अगर बच्चा इतना बडा है कि वह चलना सीख गया है तो उससे एक दिनके बजाय दो दिनका उपवास कराना अच्छा है। चाहे बच्चा एक दिनका उपवास करे या दो दिनका, उसे आगे चार-पाच दिनोतक केवल फल-तरकारिया ही खिलानी चाहिए। तरकारिया कच्ची (टमाटर, गाजर, खीरा, ककडी, प्याज आदि) और पकी दोनो प्रकारकी दी जा सकती है। इस वक्त भी बच्चेको सादा पानी या फल-तरकारियोका रस मिला पानी यथेष्ट मात्रामें पिलानेका ध्यान रखना चाहिए। इस समय उसे दूध, रोटी, भात-दाल, मिठाई या और कोई चीज किसी हालतमे भी न देनी चाहिए। इस फलाहारमे भी बच्चेको रोज शामको एनिमा दे देना चाहिए। फल-तरकारी लेनेपर बच्चेको अक्सर सवेरे अपने आप ही शौच

होता है। इसके लिए उसे प्रेरित करना चाहिए, पर यदि न हो तो कोई हर्ज नही है।

फलाहारके दूसरे दिन बच्चेको दोपहरके भोजनमे तरकारियोंके साथ कुछ भुने हुए आलू देने चाहिए और नाश्तेमे पानीमे भिगोई हुई कुछ किशमिश। इस समय बच्चेको कच्ची तरकारिया देना बहुत लाभदायक है। जो तरकारिया कच्ची खिलाई जाय उन्हे अच्छी तरह साफ करना चाहिए और अतमे नमक मिले पानीसे धोकर साफ पानीमे धो लेना चाहिए।

एक दिन बच्चेको यह भोजन देनेके बाद दूसरे दिन उसे दोपहर और शामके भोजनमे फल-तरकारी और फुलका या दलिया देना चाहिए। रोटी देने लगनेपर एनिमाकी जरूरत नही होती और बच्चेके लिए दिनभर खाटपर लेटे रहना भी जरूरी नही होता। अब वह घूम-फिर सकता है। फलाहारके समय भी यह आवश्यक नही है कि बच्चा दिनभर खाटपर ही लेटा रहे पर इसमे सदेह नही कि इस समय जितना आराम किया जाय उतना ही अच्छा है।

आगेके पंद्रह दिन

रोटी शुरू करनेके बाद पद्रह दिनोतक दाल या दूध बच्चेको नही देना चाहिए। उसका भोजन साधारणतया इस प्रकार हो सकता है

सबेरे उठनेपर—किसी तरकारीको पकाकर निकाले गए रसमे थोडा नीबूका रस मिलाकर।

नाश्ता—कोई फल और साथमे थोडी किशमिश या अजीर।

दोपहरका भोजन—कुछ कच्ची और पकी तरकारिया, चोकरसमेत आटेका फुलका या दलिया और इच्छा हो तो दो-चार आलू।

तीन बजे—कोई फल या फलका रस।

शामको—दोपहरवाला भोजन। बच्चा चाहे तो रातको सोने समय तरकारीका रस पी सकता है।

चिकित्साके आरभसे ही वच्चेके पेडपर, यदि वच्चा मान सके तो, ठडे पानीमे भिगोकर हल्का-सा निचोडा तौलिया या ठडे पानीसे सानकर लप्सी-सी वनाई हुई मिट्टी करीव आध इच मोटी आध घटे या वीस मिनटके लिए रखनी चाहिए।

ऊपरके कार्यक्रमसे वच्चेकी आते सवल और कीडियोसे मुक्त हो जायगी, पर कभी-कभी जव रोग गहरी जड पकडे होता है यह कार्यक्रम महीने डेढ महीने वाद फिर दुहराना पडता है। सारा कार्यक्रम ही ऐसा है कि वच्चेका स्वास्थ्य इससे वहुत उन्नत हो जाता है और आगे वह रोगोसे वचता है।

चिकित्सा आरभ करनेके दूसरे दिनसे ही, पर चिकित्सा समझकर नही, वच्चेको थोडा-सा लहसुनका रस भी देने लग जाना चाहिए। लहसुन वहुत वडा कृमिनाशक है। यह आतोको कृमियो और चुन्नोसे मुक्त करता एव उन्हे सशक्त वनाता है।

ग्रंथि-वृद्धि

प्राय. सभी बच्चोको कभी-न-कभी ग्रथि-वृद्धिका विकार हुआ करता है। बच्चोंके इस विकारका अभिप्राय उन लसीका-ग्रथियोकी वृद्धिसे है जो गलेमे दोनो ओर रहती है और बढनेपर उगलियोके सहारे मालूम की जा सकती है। कभी-कभी तो उनका आकार इतना बढ जाता है कि वे आसानीसे देखी जा सकती है और गर्दनके ततुओकी आकृति विकृत कर दे सकती है।

लसीका-ग्रंथि

स्वास्थ्यकी साधारण अवस्थामे ये ग्रथिया बहुत छोटी होती है और उनका बढना इस बातका सूचक होता है कि शरीरकी हालत ठीक नही है। शरीरमे दो प्रकारके तरल पदार्थों---रक्त और लसीका---का प्रवाह जारी रहता है। लसीका-सस्थानमे इन ग्रथियोका महत्त्वपूर्ण स्थान है। शरीरके कोषाणुओके साथ रक्तका सम्पर्क नही होता, लसीका ही उनमे पोषण पहुचाती और उनका मल अपने साथ बहा ले जाती है, इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि कोषाणुओकी क्रियासे जो विषाक्त मल पैदा होता है यह सीधे रक्तमे न पहुचकर लसीका-सस्थानमे पहुचता है। शरीरके सारे ततुओमे छोटी-छोटी ग्रथिया रहती है जो लसीका-सस्थानका महत्त्वपूर्ण अग है। लसीकामे पहुचनेपर मल पहले इन्ही ग्रथियोमे पहुचता है जहा निर्विषी-करणकी क्रिया चलती रहती है जिसके परिणामस्वरूप लसीकाके पुन रक्तमे पहुचनेके समयतक मलकी विषमयता बहुत कुछ दूर हो चुकी रहती है।

वृद्धि क्यों ?

साधारण अवस्थामे कार्य करते समय इन ग्रथियोपर जोर नही पडता, पर विषाक्त मलके बहुत अधिक मात्रामे पहुचनेपर उनपर बहुत अधिक

भार पड जाता है जिससे वे बढ जाया करती हैं, ग्रथियोके बढनेके समय सर्दी हो सकती है और अगर इस समय गलेकी इन ग्रथियोको उगलीसे दवाकर देखा जाय तो उनका आकार वढा हुआ मालूम होगा।

रोगके सक्रमणसे भी ग्रथियोकी वृद्धि हुआ करती है। अगर कोई घाव भर न रहा हो या किसी कीडेका दश दूषित हो जाय तो इनके कारण भी ग्रथिया वढ जा सकती हैं, क्योकि इन्हे विकृत तन्तुओको साफ करना पडेगा जिससे उनका कार्यभार वहुत वढ जायगा। आम तौरसे वृद्धिका क्षेत्र गला ही होता है। वार-वार होनेवाली सर्दी और प्रतिश्यायसे ग्रस्त नाक, मुह और गलेकी श्लैष्मिक कला और विकृत उपजिह्विकाए लसीकामे अधिक विषावत मल पहुचाया करती हैं जो स्वभावत. इस क्षेत्रकी ग्रथियोकी वृद्धिका कारण होता है।

रोगका बढ़ा हुआ रूप

अगर इन ग्रथियोपर वरावर जोर पडता रहे और वृद्धि कम करनेका कोई उपाय न किया जाय तो और तरहकी खराबिया भी पैदा हो जायगी। पहले ततुओकी सूजन होगी और पीछे, अगर जोर पडना जारी रहे तो, पूय वनने लगेगा और इस प्रकार व्रणशोथ प्रस्तुत हो जायगा। इसका अतिम परिणाम यह होगा कि ग्रथि वाहरकी ओरसे फट जायगी या यहा वने हुए पूयका भार कम करनेके लिए सर्जनसे चीरा लगवाना पडेगा। इससे पाठकोको यह वात स्पष्ट रूपमे मालूम हो जायगी कि इन ग्रथियोके आप-ही आप वढनेकी वात विलकुल गलत है। इनकी यह अवस्था शरीरके विभिन्न भागोमे विकार एकत्र होनेका ही सूचन करती है और अगर शरीर गिरी हुई अवस्थामे या विषावत न हो तो ग्रथियोकी यह अवस्था कभी प्रस्तुत नहीं होगी।

उपचार

इस अवस्थामे वच्चेकी आदतो और स्वास्थ्यपर तत्काल ध्यान देना

आवश्यक है। अगर ग्रथिया बहुत बढ गई हो और पूय बननेकी सभावना हो तो अवस्थामे सुधार न होनेतक बच्चेको बिस्तरेपर रखकर विश्राम करने दिया जाय और उसे यथासभव गर्म रखा जाय। अगर आवश्यकता प्रतीत हो तो गर्म पानीकी बोतले बिस्तरेपर रखकर उसे गर्म रखा जाय और ग्रथिया बहुत बढ़ गई हो तो गर्म पानीमे निचोडे हुए कपडेसे दस-दस मिनटके लिए सुबह, दोपहर, शामको उन्हे सेका जाय। कपडा उतना ही गर्म रहे जितना बच्चा देरतक रखने देकर गर्मी ततुओतक पहुचने दे। अगर उपचार समयसे आरभ कर दिया जाय तो व्रणशोथ होनेकी सभावना नही रहेगी। जबतक स्थान पूयसे बिलकुल रिक्त न हो जाय तबतक सेक जारी रहे।

बिस्तरेपर रहकर विश्राम करते समय बच्चेको केवल फलका रस दिया जाय। अगर कोई मुलायम फल मिले तो वह लुगदी-जैसा बनाकर दिया जा सकता है। इसके बाद वह कुछ उबली हुई तरकारिया और फिर केला छोडकर और फल खा सकता है। कुछ दिनोके बाद फलके साथ दूध। फिर सलाद और उबली हुई तरकारिया और तब चोकरदार आटेकी रोटी और आलू भी दिये जाय। ग्रथियोकी हालतमे सुधार हो जानेपर आहार बढाया जाय और रहन-सहनका ढग प्राकृतिक रखा जाय, पर अधिक खिलानेकी उतावली न की जाय।

इस रोगसे ग्रस्त बच्चेकी आत शिथिल होती है। विश्रामकालमे आतकी पूरी सफाई कर देनेका प्रयत्न होना चाहिए। इसके लिए एक सप्ताह रोज एनिमा देना आवश्यक होगा। इससे आत तो साफ हो ही जायगी, रक्त और लसीकाकी विषमयता भी बहुत कुछ जाती रहेगी।

बच्चेके नाड़ीसस्थानपर पडनेवाला जोर कम कर दिया जाय। अगर घर करनेके लिए दिया जानेवाला काम भारी हो, विद्यालयमे अच्छा न रहनेका भय हो, दिमागपर जोर पडता हो या चिडचिडापन हो तो बच्चेके घर और विद्यालयके जीवनका विश्लेषण कर नाडीशक्तिका अपव्यय रोकनेका प्रयत्न किया जाय।

उपजिह्विकाओंका शोथ

जवतक उपजिह्विकाए (टॉसिल) बढती या सूजती रहेंगी तबतक सर्जनोको उन्हे काटकर निकाल देनेका वहाना मिलता ही रहेगा, पर अगर माता-पिताको इन ग्रथियोके कार्य और उपयोगिताका ज्ञान हो जाय तो वे सर्जनकी सहायता लेनेका खयाल भी नहीं करेंगे। शरीरके विभिन्न अगो और उनकी क्रियाओका ज्ञान न होनेका ही यह परिणाम होता है कि वे ऐसे विचारोको भी अगीकार कर लेते है जो वस्तुत भ्रात होते है और जो विज्ञान स्वतुत. उपचारका आधार है उसका परीक्षण भी नही करते।

ग्रंथियां निरर्थक नहीं

आम तौरसे लोग इन ग्रथियोको निरर्थक, रोगोकी जननी और वात आदि जीर्ण रोगोको सहायता देनेवाली मानते हैं। अगर रक्त आदिके सचरणके सबधमे लोगोको कुछ अधिक ज्ञान होता तो शायद इन ग्रथियोका इतना वलिदान न होता। लोग प्राय जानते हैं कि धमनिया शरीरके विभिन्न भागोमे रक्तका वहन करती है और वे यह भी जानते हैं कि शिराए उसे लौटाकर हृदयके पास ले जाती है, पर लसीकाधारोके सबधमे वे बहुत कम जानते है जो कोषाणुओसे निकला हुआ मल एकत्र कर रक्तमे पहुचानेका महत्त्वपूर्ण कार्य करते है। अगर यह मल एकत्रकर वाहर न निकाला जाता तो विषाक्त होनेके कारण शरीरको बहुत अधिक क्षति पहुचाता। लसीका-धारोके जरिए मल लसीकाग्रथियोमे पहुचता है जो लसीकासस्थानमे जहा-तहा बनी हुई है। शरीरके सघटनमे इन ग्रथियोका महत्त्वपूर्ण स्थान है। इनके अदर कुछ आश्चर्यजनक क्रियाए चलती रहती है जिनके परिणाम-स्वरूप एकत्र किया हुआ विष शरीरको कोई क्षति पहुचानेकी स्थितिमे नहीं रह जाता।

साधारण अवस्थाके शरीरमे विषकी मात्रा इतनी अधिक नही होती कि इन ग्रथियोको अधिक श्रम करना पडे, पर शरीरमे विषाक्त मल अधिक एकत्र हो जानेपर विषको शिथिल करनेवाले इन कारखानोको निरतर अत्यधिक श्रम करना पडता है और अवस्था अधिक खराव हो तो वे रुग्ण हो जा सकती हे।

वृद्धि विकारकी सूचक

उप जिह्विकाए, जो जिह्वामूलके पार्श्वमे स्थित हे, ऐसी ही ग्रथिया हे। ये शरीरको अदरसे दिषावत होनेसे बचाती और विषको रक्तमे पहुचानेके पहले शिथिल कर देती हे। बढी हुई और रुग्ण उपजिह्विकाए शरीरके अधिक विषावत होनेकी ही सूचक हे इसलिए सर्जनसे उन्हे निकलवा देना ऐसा कार्य है जिसका स्वास्थ्यके सुधारमे कोई महत्त्व नही हो सकता। इन अगोको वात, उन्माद, हृद्रोग तथा अन्य विकारोका कारण मानना तो रोगोकी उत्पत्ति और स्वरूपके सबधमे अपने अज्ञानका ही परिचय देना है।

औषधशास्त्रियोका कहना है कि कीटाणुओके सक्रमणसे ये ग्रथिया विकारग्रस्त हुआ करती हे, पर प्राकृतिक पद्धतिके अनुसार यह विकार रक्तमे अधिक मल, विशेषकर प्रोटीनजन्य मलके एकत्र होनेका बुरा प्रभाव है। तीव्र रूपमे यह बच्चोका आम रोग है और स्कूल जानेकी उम्रवाले बच्चे इसके खास तौरसे शिकार हुआ करते हे। इसके व्यापक रूप धारण करनेपर विद्यालयो और समाजके बहुसख्यक लोग, यहातक कि बूढे भी इसकी चपेटमे आ जाते हे।

रोगके लक्षण

गलेकी परीक्षा करनेपर यह स्पष्ट रूपमे देख पडेगा कि उपजिह्विकाए बढ गई हे, श्लैष्मिककला प्रदाहयुक्त है, श्लैष्मिक कोशोसे मलाई-जैसी कोई चीज निकल रही है, जीभपर मैलकी गाढी तह जमी हुई है, सास बहुत गदी है और बच्चा प्राय नाकके बजाय मुहसे सास लेता है। स्मरण

रखनेकी खास बात तो यह है कि उपजिह्विकाओमे आसपासके और भागोसे अधिक रोगका कोई लक्षण नही देख पडता। पता नही, उपजिह्विकाओको ही निकालनेकी बात क्यो सूझा करती है।

विकारका आरभ होते समय बडी ठढ मालूम होती है और उसके बाद ज्वर हो आता है। ज्वरकी प्रवृत्तिवाले कुछ बच्चोमे तापमान जल्द ही १०५ अशतक पहुच जा सकता है। बदनमे दर्द होता है, गलेमे तकलीफ होती है, ज्वर बढनेके साथ-साथ नब्ज तेज होती जाती है और सासकी भी गति बढ जाती है, पेशाबका रग बदल जाता है और उसमे कुछ तलछट-जैसा पदार्थ जमने लगता है।

इस अवस्थामे गलेकी ये ग्रथिया सूज जाती है और अधिकाश अवस्थाओ-मे सारे शरीरकी लसीका-ग्रथियोमे सूजनका लक्षण देख पडता और दर्द भी रहता है। अन्ननालीकी हालत ठीक नही रहती और मलके साथ श्लेष्मा अधिक निकलता है। रोग बहुव्यापक होनेकी हालतमे तरह-तरहके उपसर्ग पैदा हो जाते है जिनमेसे अधिकाश औषधोपचारके ही परिणाम होते है, क्योकि औषधविधान रोगको शत्रुके रूपमे देखकर उसका अत करनेके लिए ध्वसक साधनोका प्रयोग किया करता है। उपजिह्विकावृद्धि जैसे साधारण रोगके उपचारमे अगर प्राकृतिक पद्धतिका सहारा लिया जाय तो उपसर्गोके प्रकट होनेकी समावना ही नही रहेगी, पर अगर विषौषधोका प्रयोग किया जाय तो कोई भी बात घटित हो सकती है।

उपचारका उद्देश्य

ऐसी अवस्थामे शरीरको साधारण अवस्थामे लानेका प्रयत्न करना ही उपचारका मुख्य उद्देश्य होना चाहिए। मैलसे भरी हुई जीभ, गदी सास, सूजी हुई ग्रथिया आदि महत्त्वपूर्ण लक्षण है। इन सभी अवस्थाओमे बच्चा बिस्तरपर रक्खा जाय और जबतक ज्वर बिलकुल न उतर जाय उससे उपवास कराया जाय। उपवास-कालमे रोज दो बार एनिमा देकर

आतकी सफाई की जाय और गलेपर ठढे पानीमे भिगोकर निचोडी हुई पट्टी गलेके चारो ओर लगाकर ऊपरसे ऊनी पट्टी बाध दी जाय। यह पट्टी एक घटे गलेपर रहे और दिनमे तीन बार लगाई जाय। अगर बच्चेके स्वभावमे चिडचिडापन हो तो ज्वर होनेके साथ ही एनिमा दिया जाय। शरीरके ही बराबर पानीका तापमान रहे। इस बातका खयाल रखा जाय कि बच्चेको कोई तकलीफ न हो। पानी बहुत धीरे-धीरे पहुचाया जाय और दर्द मालूम होने लगे तो उसके दूर न होनेतक पानी पहुचाना बद रखा जाय।

इस उपचारसे ज्वर जल्द ही उतर जायगा, जीभ साफ हो जायगी और सासकी बदबू भी जाती रहेगी। इन सुधारोके हो जानेपर उपजिह्वि-काओकी सूजन कम पडने लगेगी और गलेकी श्लैष्मिक कलाका प्रदाह भी जल्द ही चला जायगा। बीमारीके बाद बच्चेकी क्षुधा किसी ठोस आहारसे शात करनेकी भूल कभी न की जाय। बच्चेको कम-से-कम एक सप्ताह सिर्फ ताजा फल और सलाद दिया जाय। वह कुछ दुबला अवश्य हो जायगा, पर इसके बाद नष्ट ततुओका स्थान स्वस्थ ततु ग्रहण कर लेंगे। इसके बाद आहारमे दूध भी शामिल कर लिया जाय और बच्चेकी ताकत कुछ बढ जानेपर प्रोटीन और श्वेतसारवाले पदार्थ भी दिये जाय। किसी तरहका टानिक या दवा न दी जाय। इस प्रकार चलनेपर कोई उपसर्ग पैदा नही होगा।

अधिकाश बच्चोकी उपजिह्विकाए बढी हुई जान पडती है और उनका साधारण अवस्थाका रूप निश्चित करना कठिन होता है, इसलिए रोगका निश्चय इन ग्रथियोके आकारसे नही, बल्कि शरीरकी अवस्थाके आधारपर रही किया जा सकता है। रोगके कारण बढी हुई ग्रथिया सास लेंने और खानेमे बाधक होगी, श्रवणशक्ति अपनी साधारण अवस्थामे नही रहेगी और उपेक्षा होनेपर चबानेकी क्रिया भी ठीक तरहसे नही हो सकेगी।

रखे जाय। इसके साथ ही नाड़ियोमे रक्त-सचरण तीव्र करनेके लिए गरदनकी मालिश की जाय और उगलियोके जरिए ग्रथियोमेसे विकार निकाल दिया जाय। इसके लिए अगुली नीबूके रसमे डुबाकर उससे उपजिह्विकाओंको सुबह-शाम एक-एक मिनटतक धीरे-धीरे मला जाय।

कर्णमूल-शोथ

कर्णमूल-शोथ, जिसको लोग आमतौरसे 'गलसुआ' कहते है, उन तीन या चार बालरोगोमेसे है जिनके सबधमे यह माना जाता है कि वे कभी-न-कभी बच्चोको अवश्य होते है, पर अब यह अधविश्वास धीरे-धीरे दूर हो रहा है और लोग समझने लगे है कि ये भी अन्य रोगोकी ही तरह माता-पिताकी लालन-पालन-सबधी भूलोके कारण होते है।

औषधविज्ञान इसे सक्रामक मानता है और अधिक समयतक सर्दीका टिकना, वर्षा, एकाएक मौसिममे ठडक आ जाना आदि सक्रमणकी वृद्धिमे सहायक माने जाते है। डा० हावर्डके अनुसार 'इस प्रकारका रोग पैतृक दोष निकाल डालनेकी शारीरिक प्रक्रिया है और शरीरके लिए लाभदायक होनेके साथ ही आवश्यक भी है। अगर इसे दबानेका प्रयत्न किया जाय तो बच्चेके शरीरको क्षति पहुचेगी और उसकी जीवशक्ति कम हो जायगी।' डा० टिलडेनका कहना है कि 'अगर खान-पान और देखभालमे सावधानी रखी जाय तो तथाकथित कोई भी सक्रामक रोग पास नही फटकेगा।'

रोगके लक्षण

इस रोगमे तबीयत भारी हो जाती है, एक या दोनो कानोके नीचे दर्द होता है, लाला ग्रथियोकी सूजनसे ऊपरका हिस्सा उठ आता है, अधिकाश अवस्थाओमे तापमान बढ जाता है, पर उतना नही बढता जितना साधारणत अन्य सक्रामक रोगोमे बढता है—१०१ अश और कभी-कभी इससे भी ऊपर चला जाता है और सूजन क्रमशः बढकर सारी गरदनमे फैल जाती है। सूजन सात-आठ दिन टिकनेके बाद ग्रथिया धीरे-धीरे साधारण रूप प्राप्त कर लेती है और बच्चा चगा हो जाता है।

उपसर्ग क्यों ?

बहुतसे विशेषज्ञोका कहना है कि इसमे जानके लिए कोई खतरा नहीं रहता और जो बच्चे मरते हैं वे उपसर्गोके ही कारण मरते हैं। इस साधारणसे रोगके साथ बहुतसे बडे रोगोका सबध जोडा जाता है जो सब-के-सब इसके उपसर्ग माने जाते हैं। हृद्रोग, वृक्कविकार, सन्धिवात, आवरणशोथ आदि कुछ रोगोका नामोल्लेख किया जा सकता है। उपसर्गोके सबधमे यह कह देना आवश्यक जान पडता है कि वे प्राय मूल रोगके कारण नही, बल्कि उपचारसबधी दोषोके कारण प्रस्तुत होते हैं।

कारणकी तलाश

औषधोपचारको और कई प्राकृतिक चिकित्सकोका भी कहना है कि इस रोगमे विशेष रूपसे कुछ करनेकी आवश्यकता नही है, फिर भी हमे रोग दूर हो जानेके बाद शारीरिक क्रियाओके और अच्छे रूपमे चलनेके लिए आवश्यक उपाय करना ही चाहिए। इसके लिए सारी अवस्थाओका सावधानीके साथ विश्लेषण कर रोगके मूल कारणको ढूढ निकालना पडेगा। अधिकाश अवस्थाओमे पाचनकी खराबी—आतमे खमीर बनना और कब्जकी प्रवृत्ति—ही इसका कारण हुआ करती है। कभी-कभी इसका सबध स्नायुदोष और गडमालासे भी देख पडता है जिसका खयाल रखना जरूरी होता है।

उपचार

विश्लेषणसे यह सिद्ध हो जायगा कि रोग होनेके पहले साधारण स्वास्थ्य अच्छा नही था। तापमानका बढना उपवासकी आवश्यकता सूचित करता है। उपवास कराते समय केवल पानी पिलाया जाय। इसके बाद केवल फलका रस दिया जाय और तब प्राकृतिक पद्धतिके अनुसार आहार दिया जाय। इसमे, विशेषकर ज्वरकी हालतमे, एनिमा देना आवश्यक है। स्थानिक उपचारके लिए गरम और ठडी पट्टी बहुत लाभदायक सिद्ध होगी।

आरक्त ज्वर

आरक्त ज्वर तीव्र सक्रामक रोग है। दस वर्षतककी अवस्थाके बच्चे अकसर इसके शिकार हुआ करते हैं। प्राय यह व्यापक रूपमे हुआ करता है और इसका रूप मामूलीसे लेकर गभीरतक हुआ करता है जिसमे शरीरपर बहुत जोर पडता है। कुछ अवस्थाओमे गलेपर इसका ज्यादा जोर पडता है और कुछमे गले और त्वचा दोनोपर। इसका एक रूप ऐसा होता है जिसमे यह चर्मस्फोटतक ही सीमित रहता है।

औषधविज्ञान इसका कारण कीटाणुओका सक्रमण मानता है, हाला कि इस कीटाणुका अभीतक पता नही लग सका है। कीटाणु इस रोगमे चाहे जो करते हो, हमारे पास उन्हे रोकनेका कोई उपाय नही है। हा, हम खान-पान, रहन-सहन और वातावरण ठीक कर बच्चोकी निरोध-शक्ति अवश्य बढा सकते हैं। इस शक्तिके कम होनेसे ही वे आरक्त ज्वर-जैसे रोगोसे आक्रान्त होते हैं और अगर आक्रान्त हो ही जाते हैं तो जैसे अन्य रोगोमे शरीर स्वयम् आरोग्य लाभ करता है वैसे ही इसमे भी, अगर उसे उचित अवसर दिया जाय, तो बढे हुए विषको निकालकर पहलेकी अपेक्षा अधिक स्वस्थ हो जायगा।

लक्षणोंका रूप

इसके लक्षण विशेष प्रकारके हुआ करते हैं। पहला लक्षण वमन है। बच्चा बहुत उत्तेजित होता है, तापमान फौरन काफी बढ जाता है, जीभपर मैलकी तह जम जाती है, सास गदी हो जाती है, गलेमे खराश मालूम होती है और प्रदाह नासिकातक फैल जाता है। ये चिह्न प्राय अन्य सक्रामक रोगोमे भी प्रकट हुआ करते हैं इसलिए इन चिह्नोके सहारे इस रोगकी ठीक-ठीक पहचान नही हो सकती, पहचान तब होती है जब बदनपर ददोरे

नजर आने लगते हैं जो छत्तीससे बहत्तर घटेतक निकलते हैं। पहले तो सिर्फ लाली देख पडती है, पर बादमे पीडिका-जैसे लाल ददोरे बनकर स्थितिकी सूचना दे देते हैं।

रोगीकी शारीरिक अवस्थाके अनुसार इन लक्षणोमे अतर भी हो सकता है। कुछ लोगोमे तो वे इतने हलके हो सकते हैं कि जल्द मालूम भी न हो सके और कुछमे बुखार इतना कडा हो सकता है कि भयका कारण हो जाय। हलके चिह्न अतमे प्राय खतरनाक साबित होते हैं, क्योकि उनके इस रूपके कारण रोगी लापरवाह-सा रहता है, इसलिए लक्षणोका रूप चाहे जैसा हो, सबपर पूरा ध्यान देना चाहिए।

उपचार

प्राकृतिक पद्धतिमे आरक्त ज्वरका उपचार अन्य सक्रामक रोगोके उपचारसे भिन्न नही होता। उपचारमे ध्यान देनेकी मुख्य बात है शरीरको आरभ किया हुआ प्रयत्न उचित रूपमे चलानेका अवसर देना। इस समय कुछ भी खानेकी इच्छा नही होती। ज्वर बिलकुल उतर न जानेतक सिर्फ पानी दिया जाय। इस नियमका उल्लघन होनेपर उपसर्ग पैदा हो जा सकते हैं। रोगी सिर्फ पानीपर कुछ दिनोतक मजेमे रह सकता है और इससे उसको आराम भी मालूम होगा। आरभमे ही एनिमा देकर आत साफ कर देना बुद्धिमानीका काम होगा। पहले रोज दो बार एनिमा दिया जाय। बडी आत बिलकुल खाली हो जानेपर रोगी मजेमे सो सकेगा और नाडी-सस्थान बहुत कम उत्तेजित होगा।

तापमान घटानेका उपाय

अगर बुखार ज्यादा—१०४ अशके आसपास—हो तो इसे खतरनाक होनेसे रोकनेके लिये बुखार घटानेवाला स्नान कराया जाय। १००अश तापमानवाला पानी टबमे भरकर बच्चा कुछ मिनट उसमे रहने दिया जाय। इसके अनतर टबमे थोडा ठढा पानी डालकर तापमान ९० अश कर

दिया जाय और उसमे लगभग दस मिनट——उसकी प्रतिक्रिया देखकर——रखा जाय। इसके बाद पानीका तापमान और १० अश कम कर बच्चा रखा जाय। यह तरीका समझदारीके साथ काममे लाया जाय, क्योंकि सभी रोगियोकी एक ही जैसी प्रतिक्रिया नही हुआ करती। यदि इस नहानकी व्यवस्था न हो सके तो सारे बदनकी गीली पट्टी बच्चेको दी जाय। इससे बदनकी खुजली कम पड जायगी और ज्वर रहनेपर भी रोगी-को कुछ आराम मालूम होगा। ज्वर ज्यादा उतारनेकी कोशिश न की जाय, क्योकि बढा हुआ ज्वर उस विशेष अवस्थामे शरीरकी आवश्यक प्रतिक्रिया है।

आहारका क्रम

दो-तीन दिन बाद, बच्चेको कुछ आराम मालूम होने लगनेपर, पानीके बदले या अलावा फलका रस भी दिया जाय। नारगी, अगूर, नीबू, अनन्नास-का रस इस अवस्थामे अच्छा होता है और रोगी पसद भी करता है। ज्वर उतरनेके साथ-साथ इसकी मात्रा भी बढाई जा सकती है। यह आहार ताजगी लानेवाला तो है ही, इससे वानस्पतिक लवण और विटामिन भी अच्छी मात्रामे प्राप्त होते हैं जिससे शरीरमे साधारण रूपमे क्षार बनता रहेगा। रोगीकी हालत सुधर जानेपर पके मौसिमी फल दिये जाय। इसके बाद मुलायम सलाद और फिर उबली हुई तरकारिया दी जाय। अगर कोई खराबी न देख पडे तो इस क्रमके बाद चोकरदार आटेकी रोटी, उबली हुई तरकारी और सलाद दिया जाय। अगर फल देते समय रोगी कुछ दूध भी लेता हो तो फलके बादका आहार-क्रम न चलाकर इसे ही कुछ दिनोतक चलाया जाय। आरोग्योन्मुख अवस्थामे चर्मनिर्मोचन भी होता चलेगा। इसके लिए किसी उपचारकी आवश्यकता नही है। कभी-कभी शामको थोडा जैतून या नारियलका तेल मलना और सुबह गर्म पानीसे नहा लेना लाभदायक होता है।

ऊपर बतलाये हुए तरीकेसे उपचार चलाया जाय तो उपसर्गोंके उत्पन्न होनेकी सभावना नही रहेगी। अगर गलत उपचारके कारण कुछ उपसर्ग प्रस्तुत हो भी गये हो तो ये ही सरल उपाय आरोग्यलाभमे सहायक होगे। अगर विषाक्त मल अधिक मात्रामे एकत्र हो तो वृक्कविकार, आमवात, कर्णविकार आदि इसके बाद हो जा सकते है। विषाक्त पदार्थोको निकालनेका सबसे अच्छा उपाय उपवास और विश्राम है। यह मत समझ लीजिए कि रोग मामूली है और बच्चा जल्द अच्छा हो रहा है, इसलिए और देखभालकी जरूरत नही है। जितना आवश्यक जान पडता हो उससे एक सप्ताह अधिक ही बच्चेको बिस्तरपर रखिए।

रोहिणी (डिप्थीरिया)

रोहिणी तीव्र सक्रामक रोग है जिसमे मैला निर्यास निकलता है और स्वरनलिका, कठ, उपजिह्विका, वायुप्रणाली आदिमे प्रदाह होता है। गला इस रोगका विशेष क्षेत्र होनेके कारण इसका परिणाम भयकर हो सकता है इसलिए मा-बाप इससे बहुत डरते है।

कीटाणु कारण नहीं

इस रोगमे विशेष प्रकारका कीटाणु पाये जानेके कारण कीटाणुवादी उसे ही इस रोगका कारण मान लेते है, पर यह भ्रम है; क्योकि अगर शरीरकी प्रतिक्रिया न हो तो किसी कीटाणुमे इतनी शक्ति नही है कि रोग उत्पन्न कर सके। बहुतसे बच्चे इन कीटाणुओके सपर्कमे आते है, पर उनमे जीवशक्ति तथा रोग-निरोधकी शक्ति होनेके कारण वे रोगसे आक्रात नही होते, इसलिए हमारा प्रयत्न शरीरका स्वास्थ्य उन्नत करनेकी ही दिशामे होना चाहिए जिसमे कीटाणुको उसमे पैर जमानेका अवसर ही न मिले।

रोगका रूप

रोहिणीका खतरा मा-बापके लिए इस बातकी चेतावनी है कि गलेकी मामूली खराशकी भी कभी उपेक्षा न की जाय, विशेषकर उस हालतमे जब पास-पडोसके और बच्चे इस रोगसे आक्रात हो। इसे यो ही छोड देना बहुत बडी भूल है; क्योकि आरभिक अवस्थामे ही उसका उचित उपचार कर देनेसे इसके बढनेकी सभावना नही रहती। इसका आरभ ठीक सर्दीकी ही तरह होता है। गलेमे खराश पैदा हो जाती है और उसकी कलापर कुछ उजले धब्बे भी देख पडते है। तापमानका ज्यादा बढना कोई जरूरी नही है। अगर गलेकी खराशके साथ थोडा ज्वर हो तो यह

समझनेकी भूल कभी मत कीजिए कि रोगका रूप भयकर नही है। धब्बे इस बातके सूचक है कि विषाक्त मल एक विशेष स्थानसे, जो रोगका क्षेत्र बननेवाला है, बाहर निकल रहा है और अगर यह मल शरीरमे पहुच जाय तो रक्तको विषाक्त कर हृदयको ग्रस्त कर सकता है। अगर रोहिणीवाला भाग कही नीचेकी तरफ बढ जाय तो रोगका रूप बहुत गभीर हो जायगा।

आरंभिक अवस्थामें

इसलिए गलेकी खराशकी आरभिक अवस्थामे उपेक्षा करना बहुत बडी भूल है और यह बात तीव्र और जीर्ण दोनो अवस्थाओके लिए एक-सी लागू है। यह खराश कई रोगोकी आरभिक अवस्थामे हुआ करती है। अगर रोगकी इस आरभिक अवस्थामे ही प्रकृतिकी सहायता की जाय तो जल्द ही आरोग्यलाभ हो जायगा। चाहे जैसी भी अवस्था हो, बच्चेको बिस्तरपर रखकर पूरा उपवास कराइए और गला ठीक न होनेके समयतक पानीके सिवा कुछ भी मत दीजिए। रोज दो बार एनिमा देकर आतकी पूरी सफाई कर दीजिए। यह बहुत आवश्यक है और किसी भी हालतमे इसमे लापरवाही नही होनी चाहिए। कोई भी रेचक इस स्वास्थ्यकर उपायका मुकाबला नही कर सकता। अगर बच्चा इसका विरोध करे तो उसपर ध्यान देनेकी जरूरत नही है।

स्थानिक उपचार

स्थानिक लक्षणोके कारण होनेवाला कष्ट दूर करनेके लिए गीली पट्टीका प्रयोग किया जाय। कोई साफ कपडा काफी ठढे पानीमे भिगोकर निचोड लीजिए और उसे गलेमे लपेटकर सूखे ऊनी कपडेसे ढक दीजिए। गीली पट्टीसे बच्चेको बहुत आराम मालूम होगा। कुछ अवस्थाओमे सीने, पेडू या सारे बदनपर इसका प्रयोग करना आवश्यक हो सकता है। सकुलता, गर्मी और तकलीफ दूर करके इस पट्टीका आश्चर्यजनक प्रभाव होता है।

उष्ण-स्नान

रोज दिनमे एक वार उष्णस्नान कराया जाय। पानीका तापमान वच्चेकी अवस्था और प्रतिक्रियाके अनुसार ९८ से १०५ अशतक हो सकता है। वच्चा पानीमे लिटा दिया जाय या वैठा दिया जाय। इस समय सिरपर ठडे पानीसे भीगा तौलिया रहे। अगर यह उपाय ठीक तरहसे हो तो पसीना तुरत निकलने लगेगा और त्वचाके सक्रिय होते ही गलेका लक्षण कम पडने लगेगा। काफी आराम मालूम होने लगनेपर वच्चेका वदन सुखाकर उसे गरम विस्तरेपर लिटा दीजिए। बीस-पचीस मिनटसे अधिक समयकी इस नहानमे जरूरत नही होती। यह गरम स्नान दिनमे एक वार देना काफी होगा। पर अगर रोगीको अधिक आरामकी जरूरत हो तो उसे सारे बदनकी गीली पट्टी एक वार और दी जा सकती है। गरम नहानका प्रवध न होनेपर सारे बदनकी गीली पट्टी दिनमे दो वार दी जाय।

गर्मी और त्वचाकी वढी हुई सक्रियता गलेमे श्लेप्माका वनना रोककर उसे वाहर निकाल देगी। इसके लिए वच्चेका सिर कुछ नीचा रहे जिसमे श्लेष्मा आसानीसे निकले और किसी पात्रमे फेका जा सके।

कुछ लोग कुल्ली और गरारा करनेकी राय देते हैं, पर इससे कोई खास फायदा नही होता। तीव्रावस्थामे उपवास और आरोग्योन्मुख अवस्थामे प्राकृतिक पद्धतिद्वारा अनुमोदित आहार देनेसे जल्द आरोग्य-लाभ होनेकी आशा की जा सकती है। आराम पहुचाने और शरीरकी प्राकृतिक शक्तियोको सक्रिय वनानेका सर्वोत्तम और निरापद उपाय उपयुक्त जलोपचार ही है।

तांडव

यही एक ऐसा स्नायविक रोग है जिससे बच्चे मुख्य रूपसे आक्रात हुआ करते है। यह विशेषकर उन बच्चोको होता है जो पढने-लिखनेमे तेज, चुलबुले और ऐसे परिवारके होते हैं जिसमे स्नायविक रोगकी प्रवृत्ति होती है।

रोगका कारण

इस रोगके कारणोके सबधमे बहुत छानबीन हुई है और कई सिद्धात प्रतिपादित किये जाते है। अवस्थाके सबधमे लोगोका मत है कि दो साल-से पद्रह सालकी अवस्थातक इसकी प्रवृत्ति रहती है और सातसे पद्रहतककी अवस्थामे इसके होनेकी विशेष सभावना रहती है, क्योकि इस समय पढाईमे स्नायुओपर बहुत जोर पडता है। पैतृक प्रभाव, जलवायु और सक्रमण भी इसके सहायक कारण होते हैं। लोगोका यह भी मत है कि लडकोकी अपेक्षा लडकिया इससे अधिक आक्रात होती हैं। एक प्रसिद्ध चिकित्सकका कहना है कि रक्ताल्पता, गडमाला तथा क्षीणताके शिकार बच्चोको यह रोग अधिक होता है, पुष्ट बच्चोको बहुत कम। इससे यह स्पष्ट है कि जिन बच्चोका स्वास्थ्य साधारण होगा वे इससे बहुत कुछ बचे रहेगे। प्राय यह भी देखा जाता है कि यह रोग कभी-कभी शीतला, आरक्त ज्वर, रोहिणी आदि सक्रामक रोगोके बाद होता है, इसलिए प्राय वे ही इसके कारण माने जाते हैं। कुछ लोग आमवात और हृद्रोगको भी इसका कारण मानते हैं, पर हमारा मत है कि इन रोगोके उपचारमे लक्षणोको दबानेके लिए जो दवाए काममे लाई जाती हैं उन्हीके कारण बच्चोमे स्नायविक विकार प्रस्तुत हो जाता है।

विभिन्न रूप

इस रोगके लक्षण हलके, कडे और उन्मादकी तरह बहुत उग्र भी हो

सकते हैं। हलके रूपमे वच्चा अपनेको स्थिर नही रख सकता, हमेशा अशात रहता है, उसकी चाल साधारण वच्चोकी तरह स्थिर गतिवाली नही होती, वह चीजोसे ठोकर खा सकता है, वर्तन तोड दे सकता है और उसके मस्तिष्क तथा अगोमे उतना मेल नही रहता।

रूप कडा होनेपर हालत और भी बुरी होती है। वच्चा अगोकी पेशियोको मोड न सकनेके कारण चलने-फिरने या नित्यक्रिया करनेमे अशत असमर्थ हो जाता है जिससे दूसरोकी सहायता आवश्यक हो जाती है। उन्माद-जैसे रूपमे तो स्थिति भयकर ही हो जाती है और वच्चेको वराबर देख-रेखमे रखना पडता है।

इसमे कुछ अगो और सधियोमे पीडा होती है और हृदयकी क्रिया भी कभी-कभी अस्तव्यस्त हो जाती है, वच्चेकी मानसिक अवस्थामे सतुलन नही रह जाता, वह चिर्डाचिडा हो जाता है और आपेसे वाहर होकर चिल्लाने लगता है।

औषवोपचारक इस रोगमे सखिया आदि भयकर और खतरनाक द्रव्योका प्रयोग करते हैं। प्राकृतिक पद्धति इसके बिलकुल खिलाफ है और उसका मत है कि इस तरहकी दवाए स्वास्थ्य और जीवनके लिए रोगसे भी ज्यादा खतरनाक हैं।

स्नायविक विकारवाले वच्चेके उपचारमे परिस्थितियोके प्रभाव और वच्चेकी प्रतिक्रियापर उचित ध्यान देना आवश्यक है। जो वाते वच्चेके मानसिक सतुलनको अस्तव्यस्त करनेवाली हो वे दूर कर दी जाय और जहातक सभव हो उसे स्वेच्छापूर्वक कार्य करनेका अवसर दिया जाय। अगर अध्ययन आदिके कारण किसी तरहका जोर पडता हो तो वह वद कर दिया जाय।

उपचारका आधार

इस रोगमे उपचार किस प्रकारका होना चाहिए इसका सकेत उसके निद्रावस्थामे होनेपर मिल जाता है। इस समय उपयुक्त लक्षणोमेसे एक

भी नही देख पडता, इसलिए उपचारका मुख्य अग विश्रामकी प्राप्ति हो, पर यह विश्राम उस अर्थमे नही होना चाहिए जो साधारणत लोग ग्रहण किया करते हैं। लोग कभी-कभी यह समझ लेते है कि पहलेकी तरह खाना-पीना, विचार करना आदि कार्य जारी रखते हुए भी बिस्तरेपर लेटे रहना विश्राम है, पर जिस विश्रामका उद्देश्य अच्छा स्वास्थ्य और शरीर तथा मस्तिष्कका सतुलन प्राप्त करना है उसका अभिप्राय शरीरकी अन्य शक्तियोकी भी निष्क्रियता है। यो तो जीवनमे शरीर और मस्तिष्क कभी निष्क्रिय नही होगे--हृदय रक्तका प्रेषण करता रहेगा और अन्य अनैच्छिक क्रियाए भी चलती ही रहेगी, पर जो क्रियाए इच्छापूर्वक होती है उसका नियत्रण किया जा सकता है और भोजन आदिका त्यागकर शरीरको भी विश्राम दिया जा सकता है।

आरोग्यलाभके अन्य उपायोकी अपेक्षा इससे अधिक लाभ होगा। उपवास और विश्रामकी चर्या पूरी हो जानेपर आहारका रूप निश्चित करनेमे पूरी सावधानी बरती जाय। इस प्रकर अग्निमाद्य और मलावरोध-का निवारण मजेमे हो जायगा जिससे बच्चेको स्वास्थ्यलाभमे बडी सहायता मिलेगी।

अम्लोत्कर्ष

अम्लोत्कर्ष एक ऐसा रोग है जो बहुत कष्टदायक होता है और बहुतसे बच्चोको हुआ करता है। दोसे चार सालतकके बच्चोपर इसका ज्यादा असर देख पडता है। यह वह अवस्था है जिसमे क्षारकी कमी हो जाती है। साधारण अवस्थामे रक्तमे अम्ल और क्षारका सतुलन बना रहता है। इस सतुलनमे अस्तव्यस्तता आनेपर इसकी यह अवस्था कुछ लक्षणोद्वारा प्रकट होती है। प्रमेह, भुखमरी और ज्वरमे घोर अस्तव्यस्तता प्रस्तुत हो सकती है जिससे रक्तमे अम्ल बहुत बढ जा सकता है, पर अम्लोत्कर्षमे क्षार आवश्यकतासे कम होनेकी ही अवस्था होती है।

रोगके लक्षण

वमन, ज्वर, ओठोका बहुत लाल हो जाना, चिडचिडापन आदि इस विकारके मुख्य लक्षण हैं। वमन एकाएक और जोरोका होता है। बच्चा जो कुछ खाए रहता है सब फेंक देता है और उसके साथ अम्लमय तरल पदार्थ भी होता है। साधारणत आँतें भी अव्यवस्थित हो जाती हैं जिससे उदरामय या कब्ज भी हो सकता है। दौरेका रूप भयकर होता है और बच्चा बहुत त्रस्त हो जाता है। दौरा सात-आठ दिनोमे समाप्त हो जाता है, पर रोगका रूप गभीर होनेपर सात-आठ दिनोमे फिर दौरा हो जाता है। इस प्रकार बच्चेमे कमजोरी बनी रहती है और उसकी साधारण सक्रियतामे खलल पडता रहता है। कुछ बच्चोमे लक्षण इतने स्पष्ट नही होते--दौरेका समय आनेपर केवल भूखमे कुछ गडबडी हो जाती है और दैनिक कार्योमे कुछ अतर पड जाता है, केवल ज्वर भी हो सकता है या कुछ दिनोतक सिर्फ मतली रहती है पर दौरेका रूप चाहे जैसा भी हो वह बिलकुल नपे-तुले समयके अतरपर ही होगा।

ऐसे बच्चेमे क्षारकी कमी तो स्पष्ट ही होती है, कुछ अन्य बातोपर

भी ध्यान देना आवश्यक होता है। सभव है, भोजनमे क्षारीय पदार्थ काफी रहते हो, पर कुछ अन्य कारण ऐसे हो सकते है जो उनका उपयोग न होने देते हो; इसलिए बच्चेके सारे जीवनपर विचार करना आवश्यक होता है।

आहारका सुधार

इस रोगसे ग्रस्त बच्चेका शारीरिक और मानसिक जीवन नये सिरेसे व्यवस्थित करना आवश्यक होता है। शारीरिक दृष्टिसे ध्यान देनेका सबसे महत्त्वपूर्ण विषय पोषण है। उसके आहारका सावधानीके साथ विश्लेषणकर उसका रूप निश्चित किया जाय। पहला काम तो यह हो कि प्रोटीन और श्वेतसारवाले पदार्थ बहुत कम कर दिये जाय और इसका कोई बुरा प्रभाव न देख पडे तो बच्चा तीन-चार दिन सिर्फ फलके रसपर रखा जाय। इसके वाद उसे सिर्फ फल दिया जाय, पर केला न दिया जाय। यह भी तीन-चार दिन चला लेनेपर उसे दिनमे थोडा-थोडा करके कुछ दूध दिया जाय। अव उसके भोजनका रूप इस प्रकार रहे—सुवहमे फल और दूध, दोपहरको चोकरदार आटेकी रोटी और सलाद और शामको उवली हुई तरकारी और कोई प्रोटीनवाला पदार्थ। यह आहार चलाकर महीना पूरा कर दिया जाय। इसके अनतर यही क्रम पुन चलाया जाय। जल्द जानेका नाम न लेनेवाले रोगमे इस क्रमकी कई वार आवृत्ति करनी पड सकती है।

आतकी सुस्ती एनिमाका प्रयोगकर दूर की जाय। रसाहार चलाते समय यह प्रयोग हो तो पूरा आहार ग्रहण करनेका समय होनेतक आतकी हालत बहुत कुछ ठीक हो जायगी। उदरामय आदि दूर करनेके लिए दवाका इस्तेमाल करना हानिकारक होगा। सादे पानीका एनिमा प्रभावकर होनेके साथ ही निरापद भी होता है। ऐसे वच्चेका अगन्यास भी विकृत होता है, इसलिए मेरुदड और उसके आसपासकी पेशियोको साधारण अवस्थामे लानेसे आरोग्यलाभमे शीघ्रता होती है। इसके साथ वच्चेका विश्वास प्राप्त कर उसको मानसिक अवस्था ठीक करना भी आवश्यक होता है।

परिशिष्ट

एनिमा लेनेकी विधि :—१—किसी तख्ते या खाटपर चित्त लेटकर और पैंतानेको सिरहानेसे चार इच ऊचा रखकर एनिमा लेना चाहिए। जमीनपर लेटे हुए भी एनिमा लिया जा सकता है। छोटे बच्चे माकी गोदमे लेटकर भी एनिमा ले सकते है।

२—एनिमाका पात्र लेटनेके स्थानसे डेढ-दो फुटकी ऊचाईपर सेर सवासेर गुनगुना गरम पानी भरकर टोगे और टोटी खोलकर मलद्वारसे पानी अदर जाने दे। ३—पैरोको सीधा न रखकर जरा उकडू खीच लेने-

से एनिमा लेनेमे सहूलियत रहेगी। ४—एनिमा लेनेके पहले, ट्यूबमे-से थोडा पानी वाहर निकाल दीजिए ताकि ट्यूवमे यदि हवा हो तो वाहर निकल जाय और जाना जा सके कि पानीका प्रवाह ठीक है। ५—जितना
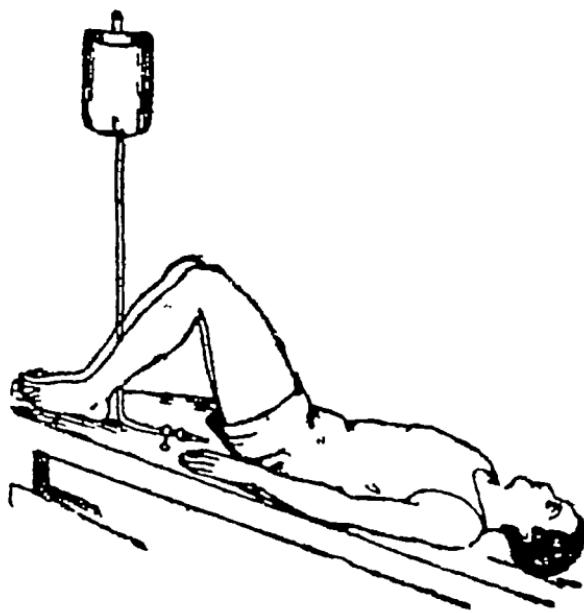
पानी जा सके उतना जाने देनेके बाद दो-तीन मिनट रुककर शौच जाना चाहिये। ६—शौच जाते समय सुस्थिर होकर बैठा जाय, पानी और मलको अपने-आप निकलने दिया जाय। मलको निकलनेके लिए जोर न लगाया जाय। जोर लगानेसे सफाई अच्छी नही होती।

उपवास, फलाहारमे नित्य एनिमा लेनेकी जरूरत होती है। यदि एनिमा न लिया जाय तो उपवास और फलाहारका पूरा फायदा नही मिलता। इसमे पद्रह-बीस मिनटका समय लग सकता है।

एनिमा एक दिनके वच्चेको भी बिना किसी डरके दिया जा सकता है। किसी प्रकारकी हानिकी कोई सभावना नही है।

छह महीनेतकके वच्चेको आध पाव पानीका, फिर एक वर्षतकके बच्चेको एक पाव पानीका, तीन वर्षतकके डेढ पाव, पाच वर्षतकके आध सेर पानीका, पाचसे दस वर्षतक तीन पाव और फिर सोलह वर्षतकके वच्चेको एक सेर पानीका एनिमा देना चाहिए।

सारे बदनकी गीली पट्टी

सारे बदनकी गीली पट्टी देनेके लिए दो मोटे-मोटे कबलोपर ठडे पानीमे भिगोकर निचोडी हुई पतली सूती चादर बिछानी चाहिए और उसपर रोगीको खुले बदन लिटाकर सारे बदनको चादरसे लपेट देना चाहिए। फिर एक-एक कर दोनो कबल लपेट दिये जाए और ऊपरसे एक कबल और उढा दिया जाय। कबल, बदनमे हवा न लगने पावे इस-लिए लपेटे और उढाए जाते है। इससे गर्मी होगी और आध घटेसे पौन घटेके भीतर रोगीके शरीरसे पसीना निकलने लगेगा, पट्टी लपेटनेके पहले गरम पानी पिला दिया जाय तो पसीना निकलनेमे आसानी रहेगी। एक घटे बाद रोगीको पट्टीसे निकालकर ठडे पानीसे स्नान कराना चाहिए और उसके बाद साफ कपडे पहनाकर पद्रह-बीस मिनट कबल उढाकर लिटा देना चाहिए।

प्राकृतिक चिकित्सा क्या है ?

रोज-ब-रोज डाक्टरोकी तादाद बढ रही है और साथ-साथ अनगिनत ओषधियोकी, पर आख उठाकर देखें तो हर आदमी आपको किसी-न-किसी रोगके चगुलमे फसा मिलेगा। इससे साबित होता है कि दवाए आदमीको न तदुरुस्त रख सकती हैं, न कर सकती हैं।

प्राकृतिक चिकित्सकोने तजुरबेसे जाना है कि रसायन और दवाए रोगको अच्छा करना तो दूर रहा, उल्टे रोगको—उसके कुछ लक्षणोंको—कुछ समयके लिए दूर करके, बाहर निकलते हुए रोगको शरीरके भीतर दबा देती हैं। जैसे गावमे कूडा-कचरा इकट्ठा होकर बीमारी फैलाता है वैसे ही शरीरकी गदगी निकल न पानेपर अदर सडने लगती है और वही गदगी सब रोगोकी जड है।

गलत भोजनकी वजहसे पैदा हुई सडन, अपच, दवाओंके जहर, इजेक्शन, टीका वगैरह इस गदगीको बढाते हैं।

शरीरसे गदगी निकालनेकी कुदरतकी कोशिश ही रोग है, और रोगके लक्षण इस कोशिशका कुदरती नतीजा है। कुदरती इलाज इस गदगीको शरीरसे निकाल फेकनेमे पूरी मदद पहुचाता है और मनुष्यको स्वस्थ, सशक्त एव सतेज बनाता है।

कुदरती इलाजके मददगार हैं उपवास, फलाहार, सतुलित भोजन, पानी, मिट्टी, धूप, प्राणायाम, आसन, कसरत और मालिश वगैरह, जिनसे रोग दबते नही बल्कि जडसे नेस्त-नाबूद होते हैं।

आरोग्य-मदिर

इन्ही सिद्धातोंके अनुसार चिकित्साकी सुविधा देनेके लिए आरोग्य-मदिरकी स्थापना की गई है। विशेष जानकारीके लिए आरोग्य-मदिरका परिचय-पत्र मगानेकी कृपा करें।

प्राकृतिक चिकित्साके संबंधमें ये क्या कहते हैं?

मेरे दोनो हाथ पद्रह वर्षसे छाजन (एक्जिमा) से भरे हुए थे। मुझे शरमके मारे उन्हे ढककर रखना पडता था। आरोग्य-मदिरके मिट्टी-पानीके उपचारसे छाजन ढाई महीनेमे चला गया और हाथकी त्वचाका रंग स्वाभाविक हो गया।

काशमीरी देवी, हापुड़

मेरे पेशाबके साथ सात प्रतिशत चीनी आती थी। इसे कम करनेके लिए मुझे डाक्टर दोपहर व शामको भोजनके पहले इसुलिनका इजेक्शन देते थे। आरोग्य-मदिरमे आते ही इजेक्शन बद कर दिया गया और यहाकी चिकित्सासे तीन सप्ताहमे पेशाबके साथ चीनी आना बिल्कुल बद हो गया। चिकित्सा कराए मुझे डेढ वर्ष हो गया तबसे मैं स्वस्थ हू।

गादूराम चौधरी, विशनपुर (पूर्णिया)

मोटापेके साथ-साथ मैं सिरदर्द, चक्कर, बेहोशी, कमजोरी और स्वप्नदोषसे पीडित था। आरोग्य-मदिरमे रहकर ढाई महीनेमे मैंने अपना अडतालीस पौड वजन घटानेके साथ-साथ अपने शरीरको सुडौल वनाया और सभी रोगोसे छुट्टी पा ली।

आरोग्य-मदिरके स्नेहपूर्ण वातावरणको छोडते हुए वडी तकलीफ हुई।

श्यामबिहारीलाल गर्ग, कृष्णा प्रेस, मेरठ

मुझे वहुत पुराना दमा था और हृदयकी कमजोरी। प्राकृतिक चिकित्साकी कृपासे डेढ महीनेमे पचास वर्षकी उम्रमे इन रोगोंसे छुटकारा पाकर मैं फिर जवानीकी शक्ति और उमगका अनुभव कर रहा हू।

कारुलाल साह, सूजागंज (भागलपुर)

मैं मासिककी गडवडी और प्रदरकी शिकायतसे वर्षोंसे पीडित थी। जगह-जगह चिकित्सा कराकर निराश हो चुकी थी। आरोग्य-मदिरकी चिकित्सासे ये सव रोग तो गए ही, भूख खुलकर लगने लगी और पुराना

कब्ज चला गया। मैंने यहा यह भी सीखा कि मनुष्यको स्वस्थ रहनेके लिए क्या खाना-पीना चाहिए और कैसे रहना चाहिए। मैंने नवजीवन पाया।

बनारसीदेवी, वरदुआरी (मालदा)

'आरोग्य-मदिर' मे आनेके पहले मुझे ये शिकायते थी—पेट भारी होना, स्वप्नदोष, पेटमे वायु, शारीरिक कमजोरी, निरुत्साह, निस्तेज मुख-मुद्रा, स्मरण-शक्तिकी कमी, बदहजमी। एक महीनेकी चिकित्सा-द्वारा मेरे इन लक्षणोंमे सुधार हुआ। तीन महीनेमे मैं बिलकुल अच्छा हो गया और १४ पौंड वजन बढ गया।

नारायण भट्ट, ग्रामसेवासमिति, अंकोला कारवार (बंबई प्रात)

मेरे विचारसे प्राकृतिक चिकित्साका जितना अच्छा प्रबध 'आरोग्य-मदिर' मे है उतना उत्तरी भारतके किसी भी प्राकृतिक चिकित्सालयमे नही है।

—प्रोफेसर हरिश्चद्र गुप्त, बिरला कालेज पिलानी (जयपुर)

England's foremost advocate of Natural Therapeutics : Dr. Stanley Lief advised me to come to AROGYA-MANDIR, Gorakhpur for it's training. Here I have had the wonderful opportunity to see Nature Cure at work I have been able to watch so many patients, who recovered wonderfully It must be witnessed to be believed. In this Institution I have learnt to understand many simple principles, otherwise impossible

- Albert Issac Mosseri,
CAIRO (EGYPT)

आरोग्य-मदिरमे चिकित्सा करानेके नियमादि जाननेके लिए 'आरोग्य-मदिर'का परिचय-पत्र मगानेकी कृपा करें।

संचालक—आरोग्य-मंदिर, गोरखपुर (उत्तर प्रदेश)

आरोग्य-ग्रंथमाला

प्राकृतिक चिकित्साके प्रसारकी दृष्टिसे आरोग्य-ग्रथमालाका प्रकाशन शुरू किया गया है। इसमे हिंदुस्तानके अनुभवी प्राकृतिक चिकित्सकोकी पुस्तकोंके साथ-साथ विदेशके प्राकृतिक चिकित्सकोकी पुस्तकें भी होगी। ये सब हम मूल या साराशरूपमे हिंदी-भाषी जनताको अच्छे रूपमे और सुलभ मूल्यमे देना चाहते हैं।

१—**बच्चोका स्वास्थ्य और उनके रोग**—आपके हाथमे है। शेष पुस्तकोका परिचय लीजिये।

२—**योगासन**—लेखक—श्रीआत्मानद—योगासन हिंदुस्तानके ऋषियो द्वारा सस्कृत प्राचीनतम प्रणाली तो है ही, यह दुनियाकी मानी हुई श्रेष्ठ व्यायाम-प्रणाली भी है। यह विधि शरीरको स्वस्थ रखनेके साथ-साथ मनुष्यको मानसिक रूपसे भी बलवान् बनाती है। योगासनकी विधिया और योगासन, इस 'सचित्र' योगासनसे सीखिये और आसनोद्वारा रोग-निवारणकी कला भी जानिये। मूल्य केवल दो रुपया

३—**रोगोंकी नयी चिकित्सा**—श्री लूई कूनेकी पुस्तक "न्यू साइंस आफ हीलिंग" का भावानुवाद। सब रोग एक हैं और सबकी चिकित्सा एक है। प्राकृतिक चिकित्साके इस सिद्धातका प्रतिपादन करनेवाली एक-मात्र पुस्तक। पृष्ठ-सख्या २५०। मूल्य ढाई रुपया।

४—**रोगोकी सरल चिकित्सा**—लेखक . श्रीविट्ठलदास मोदी—रोगोकी हर घरमे चल सकने लायक सरल चिकित्सा बतानेवाली अनुभवके आधारपर लिखी गयी प्रामाणिक पुस्तक। मूल्य चार रुपया।

५—**प्राकृतिक जीवनकी ओर**—लेखक—एडोल्फ जस्ट, अनुवादक—श्रीविट्ठलदास मोदी। मिट्टी, पानी, धूप, हवा और भोजनकी सहायतासे नये, पुराने सभी रोगोको दूर करने तथा स्वास्थ्यको बढिया बनानेकी विधि

सिखानेवाली दुनियाकी सरलतम पुस्तक। मूल जर्मनसे अवतक इसके १४० भाषाओमे अनुवाद प्रकाशित हो चुके हैं। वढिया गेट अप। मूल्य चार रुपया।

६––**कश्मीरमे पंद्रह दिन**––लेखक . श्रीविट्ठलदास मोदी। कश्मीर हमारे भारतका हृदय है––हृदयकी समस्त उदात्त भावनाओकी तरह सुदर। यह सौदर्य कश्मीर-भ्रमणमे मानसिक वृत्तियोपर स्वास्थ्यकारी प्रभाव डालता है और मनुष्य शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्यका अनुभव करता है। कश्मीरमे पद्रह दिन पढिये। आप निश्चित रूपसे इस भावना-से ओतप्रोत हो उठेंगे। सुदर कवर, ५० चित्र, मूल्य केवल सवा रुपया।

७––**उपवाससे लाभ**––सम्पादक श्रीविट्ठलदास मोदी। उपवास-की महिमा, उपवास करनेकी विधि और रोगोके निवारणमे उपवासका स्थान वतानेवाली पुस्तकके रूपमें एक धर्मगुरु। मूल्य दो रुपया।

८––**सर्दी-जुकाम-खांसी**––सर्दी, जुकाम, खासीका कारण तथा इन रोगोकी चिकित्सा वतानेके साथ रोगोका कारण, उनसे वचने और मुक्तिका रास्ता वतानेवाली सरल भाषामे लिखी गई, एक अपूर्व पुस्तक। मूल्य एक रुपया।

९––**आदर्श आहार**––भोजनसे स्वास्थ्यका क्या सवव है और भोजनमे थोडा-सा हेर-फेर करके रोगका निवारण कैसे किया जा सकता है? यह विशद रूपसे वतानेवाला एक ज्ञानकोष। मूल्य सवा रुपया।

१०––**उठो**––नदी समुद्रसे मिलनेपर जिस आनदका अनुभव करती है, पक्षीको उडनेमे जो आसानी होती है, पृथ्वीको पहली वर्षासे जिस तृप्तिकी प्राप्ति होती है, मुरझाए विरवेको सूर्य-प्रकाशसे जो जीवन-दान मिलता है, वह आनद, आसानी, तृप्ति और जीवन, यदि आप एक साथ पाना चाहते हो तो उठो! पढिये। मूल्य है केवल सवा रुपया।

११––**स्वास्थ्य कैसे पाया ?**––इस पुस्तकमे आप स्वास्थ्यको उन्नत वनाने और लोगोके रोगोसे मुक्ति पानेकी आत्मकथाए पढकर स्वस्थ

रहनेका रास्ता जानेंगे। वढिया छपाई, सुदर दुरगा कवर, चालीस हाफ-टोन चित्र, पृष्ठ-सख्या २१६, दाम सिर्फ दो रुपया।

१२—आहार-चिकित्सा—लेखक . श्री एरनोल्ड इहरिट। इहरिटकी बीमारी साघातिक समझी जा रही थी। वे अपने आहार-चिकित्साके प्रयोगसे विल्कुल स्वस्थ हो गये और इतने स्वस्थ हुए और अपना स्वास्थ्य इतना उन्नत कर लिया कि छप्पन घटे लगातार चलकर उन्होंने अपने पुराने डाक्टरोको चकित कर दिया और अव वह सारी विधि उन्होंने "आहार-चिकित्सा" पुस्तकमे लिख दी है। मूल्य दो रुपया

१३—दुग्ध-कल्प—ले० श्रीविट्ठलदास मोदी (उत्तरप्रदेश सरकार-द्वारा पुरस्कृत) दूध शरीरको तो पुष्ट करता ही है रग-रग, नस-नसको धोकर शरीरको निर्मल वना देता है और रोग इसके कल्पसे चले जाते हैं। इसकी विधि इस पुस्तकमे पढें और लाभ उठायें। मूल्य एक रुपया

१४—मेरी यूरोप-यात्रा—लेखक:श्रीविट्ठलदास मोदी। मोदीजी ने प्राकृतिक चिकित्साकी प्रगतिका अध्ययन करने, प्राकृतिक चिकित्सा-सवंधी सस्थाओ, शिक्षालयोको देखने और प्राकृतिक चिकित्साके विशेषज्ञो-से मिलनेके लिए यूरोपके कुछ देशोकी यात्रा की थी। इस संवधमे सारे अनुभव और जो उन्होने यूरोपमे देखा-सुना, इस पुस्तकसे आप जान सकेंगे। मूल्य दो रुपया।

१५—तंदुरुस्त कैसे रहें—लेखक:श्रीवर्नर मैकफैडेन। तदुरुस्त रहना आसान है और तदुरुस्ती वडे आसान नियमोमे वधी हुई है। तदुरुस्त कैसे रहें? पुस्तकमे इन्ही नियमोका विश्व-विख्यात स्वास्थ्य-शास्त्री श्रीवर्नर मैकफैडेनने वड़े सरल शव्दोमे विवेचन किया है। इसे पढें। स्वस्थ रहनेकी कुजी आपके हाथमे आ गयी है। मूल्य तीन रुपया।

१६—कच्चा खानेकी कला—डा० सत्यप्रकाश। भोजन शास्त्रियोका मत है कि स्वास्थ्यको उत्तम वनाए रखनेके लिए मनुष्यके भोजनमे ५०% ऐसे खाद्य होने चाहिए जो आगके संपर्कमे न आए हों। इसके लिए हमे फल

और कचुवरका व्यवहार अधिकसे-अधिक करना चाहिए। पर पक्वाहार भी तो अपक्वाहारके सयोगसे स्वादिष्ट और स्वास्थ्यकर वनाया जा सकता है। यह कैसे। इस प्रश्नका उत्तर इस पुस्तकसे ले और अपने स्वास्थ्यको उन्नत वनानेकी ओर अग्रसर हो। वढिया छपाई-सुदर दुरंगा कवर। मूल्य केवल एक रुपया।

१७—**जल चिकित्सा**—"कूने, जस्ट और फादर क्नाइपने जो लिखा है, सवके लिये है और सव जगहोके लिये है। वह सीधा है। उसे जानना हमारा धर्म है। कुदरती इलाज जाननेवालोंके पास उसकी थोडी-वहुत जानकारी होती है और होनी चाहिये"—गांधीजीका 'फादर कनाइपने जो लिखा है' से सकेत क्नाइपकी इस पुस्तक जल-चिकित्सासे ही है। कूने-की पुस्तक 'रोगोकी नयी चिकित्सा' जस्टकी पुस्तक 'प्राकृतिक जीवनकी ओर' पढकर लाखो व्यक्तियोने अपनेको लाभान्वित किया है। और हजारो इन्हे पढकर लोगो की सफलतापूर्वक चिकित्सा कर रहे हैं। अव वे' जल किचित्सा' पढकर अपनी रोग निवारणकी शक्तिकी वृद्धि कर सकते हैं। मूल्य तीन रुपया।

१८—**वढो**—लेखक डा० कातिकुमार। उठनेके लिये आवश्यक है कि आप अपनी मानसिक क्षमता वढाये आत्मिक उन्नति करे। वढनेके लिये आवश्यक है शारीरिक क्षमता वढाये। मन शरीरका सस्कार करे —व्यक्तित्वको उन्नत करे। सच्चेमित्रकी तरह यह पुस्तक इस दिशामे आपकी स्नेहपूर्वक सहायता करेगी। मूल्य दो रुपया।

१९—**सुगठित शरीर**—लेखक डा० चतुर्भुज दास मोदी। साड-की छाती शेरकी कमर सिंहकी छलाग देखकर आप कह उठते है ये सुदर हैं। सौंदर्य अग सौष्ठवका प्रतिफल है। आप स्त्री हो या पुरुष अपने अग-अगको सुगठित वनायें आप अपनेमे शक्तिकी वृद्धिका तो अनुभव करेंगे ही आप सुदर भी लगने लगेंगे। शरीरके प्रत्येक अगको सौष्ठव प्रदान करना एक कला है। 'सुगठित शरीर' पढे आप इस कलाके पडित हो जायगे।

और यदि आप अपने अर्जित ज्ञानके अनुसार चले तो लोग आपके सुगठित शरीरको देखकर ईर्ष्या करेंगे। मूल्य तीन रुपया।

२०--**जीनेकी कला**—लेखक विट्ठलदास मोदी । यह पुस्तक आपका मानसिक बल बढायेगी, स्मरण शक्ति तीव्र बनायेगी, चिन्ताओसे मुक्त करेगी तथा आपके सामने वे सारे रहस्य खोलकर रख देगी जिनके जाननेके कारण वह व्यक्ति, जिसे आप बडा कहते है, बडा बना है। मूल्य दो रुपया।

—व्यवस्थापक, आरोग्य-ग्रंथमाला,
आरोग्य-कार्यालय, गोरखपुर

— ० —